ग्रंथगांभीर्य अने प्रकाशकविचार.

आ "आत्मसिद्धिशास्त्र" नामक ग्रंथ श्रीमान् राजचंद्रे वि० सं० १९५२मां नडियादमां पोतानी स्थिरता हती त्यारे लख्यो हतो. ग्रथरचना ते समये सर्व सामान्यने माटे करवामां नहोती आवी, परंतु तेओना प्रसंगमां आवेला एक वृद्ध आत्मार्थी पुरुषने अर्थे करवामां आवी हती. सौराष्ट्रमां आवेल सायला नामना ग्राममां श्रीसौभाग्यभाइ नामना एक परम तत्त्वजिज्ञासु मुमुक्षु रहेता हता. तेओनुं श्रीमान् प्रति अद्वितीय श्रद्धान् हतुं. श्रीसौभाग्यभाइनी शारीरिक स्थिति बहु निर्बळ थई जतां विशेष वाचन, श्रवण आदि कार्यो करवानु अशक्य थवाथी तेओए श्रीमान् राजचंद्रने एवी विनंति करी के, संक्षेपमां 'तत्त्वसार' आवी जाय तेवी कोइ ग्रंथरचना तेओ अर्थे करवाथी ते पोताने भाग्यशाली समजशे एक आत्मानुभवी वृद्ध पुरुपनी जिज्ञासा पूर्ण करवाना उद्देशथी श्रीमान् राजचंद्रे लगभग एकथी दोढ दहाडामां आ ग्रंथ रची श्रीसौभाग्यभाईने मोकलावी आप्यो. आ ग्रंथ रचाया पश्चात् श्रीसौभाग्यभाइनी शरीरस्थिति लगभग छ मासमां पूर्ण थई.

यद्यपि आ ग्रथ एक व्यक्तिने अर्थे लखवामां आव्यो हतो, तथापि ज्ञानीपुरुषोनां वचनो एक व्यक्तिअर्थे लखायां होय तोपण ते सर्व जीवोने समान उपकारक होवाथी तेने जाहेर प्रसिद्धि आपवामां आवी छे. पोतानुं नाम अथवा कीर्त्ति, के कृति प्रसिद्धिमां लाववानुं श्रीमान् राजचंद्रने पोते संवत् १९४४–४५ मां शतावधानना प्रयोगो करवानुं बंध कर्युं, त्यारथी पसंद नहीं हतुं, एटले आ ग्रंथ पण तेओना जीवनसमयमां प्रसिद्धिमां लाववानु बनी शके तेम न होतुं.

संवत् १९५७ ना चैत्र वद ५ ने रोज श्रीमान्नो मात्र ३३ वर्षना वये देहोत्सर्ग थयो. तेओश्रीना देहोत्सर्ग पछी तेओना हस्ते लखायेला खानगी के सर्व सामान्य कागळो, लेखो, अथवा पृथक् पृथक् वचनो के ग्रंथो एवा हेतुथी प्रकट करवानी मने जिज्ञासा थई के, श्रीमान्नो जो के मारी साथे एक भाई तरीकेनो संबंध हतो, तथापि जगत्जीवो तेओ प्रति एक धर्मात्मा तरीके जोता हता, एटले तेओना लेख वगेरेना संग्रह उपर मारा हक्क करतां पण जगत्जीवोनो वधारे हक मारे मानवो जोइए, अने तेथी सर्व जीवोने ते हक्कनो लाभ आपवा अर्थे मारे तेने जाहेर प्रसिद्धि अपाववी जोइए. श्रीमानना देहोत्सर्ग पहेलां थोडा मासे, स्थपाएल "परमश्रुतप्रभावकमंडल" द्वारा ते लेखादि प्रकट करवानुं निर्णीत थयुं. बीजा करतां, जेने आखा जीवननो प्रसंग हतो ते संग्रह करवानुं कार्य वधारे उत्साहपूर्वक करी शके एवा विचारनो आश्रय लई मे ते कार्य आरंभ्युं. श्रीमान्ना परिचयमां आवेला अनेक भाइओ पासेथी जे जे पत्रादि साहित्य मळ्युं ते एकत्र करी "परमश्रुतप्रभावकमंडल" द्वारा "श्रीमद् राजचंद्र" नामक एक भव्य ग्रंथना आकारे प्रकट कर्युं. आ संग्रह करती वेळाए आ "आत्मसिद्धि-शास्त्र" ग्रंथ मारा हाथमां आव्यो हतो. मैं तेने उक्त भव्य ग्रंथमा समाव्यो.

ग्रंथगौरव मात्र १४२ दोहरानु छे, तथापि जगत्-विख्यात आचार्य भगवान् श्रीमान् हरिभद्रसूरि प्रणीत "षड्दर्शन समुच्चय" ग्रंथ, जे मात्र ८६ श्लोकोनो छे; छतां तेमा सर्व दर्शनोनुं स्वरूप यथातथ्य रीते दर्शावी तत्त्वज्ञानानुभवीओने अप्रतिम हर्षनुं कारण आप्युं छे, अने तेने लईने तेना पर अनेक गहन टीकाग्रंथो लखाया छे, तेम आ ग्रंथनुं गौरव घणु अल्प छतां तेमां सर्व दर्शनोनो अंतीम हेतु प्रकट करी बताव्यो छे. ग्रंथनी बाह्यरचना एवा प्रकारनी योजि छे के, वेदान्तादि दर्शनोना अनुयायीओने पण

अनुकूल पडे, जोके तेनी आंतर्रचना तो संपूर्णपणे-अखंडाकारे-श्रीवीतरागमार्गप्रति ज स्थिर थयेल छे. सामान्य भाषा जाणनारने पण तेनो अभ्यास बहु सरल थाय ते अर्थे, श्रीमान्‌नी पोतानी भाषा लखवानी पद्धति सामान्य रीते गहन छतां, आ ग्रंथनी भाषा बहु सादी राखवानो लक्ष्य राख्यो जणाय छे.

आर्यग्रथकारोनी सनातन शैली एवी जोवामा आवे छे के, ग्रंथारभे मंगलाचरण योजवुं. आ मगलाचरणमां, जेनो पोते परमोपकार स्वीकार्यो होय छे तेने नमस्कार करवामां आवे छे. जैनदर्शननी परमाज्ञा छे के, आत्महित अर्थे त्रण तत्त्वो अवश्य जाणवां जोइए. आ त्रण तत्त्वो ते सद्‌देवतत्त्व, सद्धर्मतत्त्व, अने सद्गुरुतत्त्व छे आ त्रण तत्त्वोविना आत्मकल्याण नथी. सद्‌देव सद्धर्मतत्त्व अने सद्गुरु ए तत्त्व जो के, युगपद्‌भावे शास्त्रकारोए स्वीकार्यां छे, तथापि तेनो जे क्रम योजवामां आव्यो छे ते एम दर्शावे छे के, प्रथम सद्‌देव, पछी सद्धर्म, अने तत्पश्चात् सद्गुरु एवा व्यवहारपूर्वक उपकारक छे. आ दृष्टिए सद्गुरुतत्त्वना करतां अन्य बे तत्त्वो विशेष उपकारक छे, तथापि ए बन्ने तत्त्वो–ज्यारे श्री जैनदर्शन स्वीकारेल रागद्वेष विवर्जित एवा श्री तीर्थंकररूप सद्‌देव विद्यमानपणे विराजता होय त्यारे तेओनो समास सद्गुरु तत्त्वमां पण थाय छे–पोतानुं वीर्य प्रत्यक्षपणे स्फुरावी शकता नथी, एटले प्रत्यक्षपणे स्फुरावी शकनार एवु सद्गुरुतत्त्व प्रत्यक्षभावे विशेष उपकारक शास्त्रकारोए कह्यु छे, केमके ए तत्त्व, ते अन्य बे तत्त्वोनी वास्तव्य ओळख करावी शके छे. आत्मानी अंतीम अवस्था सिद्धपदनी छे, एटले ते सर्वोत्कृष्ट दशा छे. ते दशाना जेटला पराक्रमवाळी आर्हत् दशा, ए उपयुक्त न्याये सिद्ध पछीनी गणावी जोइए, तथापि जगत् जीवोने आर्हत् दशा उपदेश आपवाना तेओश्रीना कार्यथी प्रत्यक्षपणे परमोपकारनुं कारण होइ, ज्ञानीपुरुषोए नमस्कार अथवा 'नवकार' मंत्रमां एवो क्रम गोठव्यो छे के, प्रथम आर्हत् अने पछी

सिद्ध दशाने नमस्कार करवो. आ अपेक्षा दृष्टिमां स्थिर राखी युगपद्भाव धरावता एवा सद्देव, सद्धर्म अने सद्गुरुतत्त्वोमांथी सद्गुरुप्रत्ये श्रीमान् राजचंद्रे ग्रंथारंभे मंगलाचरणमां नमस्कार कर्यो जणाय छे. तेओए नमस्कार श्रीसद्गुरुने कया उपकार माटे कर्यो छे ते पण ते ज मंगलाचरणमां जणाव्युं छे:

जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्रीसद्गुरु भगवंत.

अनादि काळथी आत्मस्वरूप जाण्याविना अनंत दुःख सहन करवा पड्यां ते आत्मस्वरूपरूपी पद जे सद्गुरु भगवाने समजाव्युं ते अर्थे तेमने नमस्कार करू छुं अत्र "श्रीसद्गुरु भगवंत" शब्दो बे आशयमां वापरेल धारी शकाय छे. एक तो प्राचीन आर्यशैली प्रमाणे सद्गुरुने भगवाननुं विशेषण आप्युं छे. बीजो आशय मने एम लागे छे के, कर्त्तापुरुषे भगवान् जिनने पोताना सद्गुरु स्थापी तेओने नमस्कार कर्यो छे, कारण के श्रीमान्ना संपूर्ण जीवनना परिचय उपरथी एम लागे छे के, तेओने कोइ पण सद्गुरुनो प्रत्यक्ष योग नहोतो थयो के जेना प्रत्ये पोते सद्गुरुपद स्थाप्युं होय. तेओना जे जे विचारो जोवामां आवे छे, ते उपरथी जणाय छे के, तेओने सम्यग्दर्शन, श्रीजिनना वचनादि अनुग्रहद्वारा स्वयं थयुं हतुं. श्रीजिनना अनुग्रहद्वारा थयेल सम्यग्दर्शनथी अनादि काळथी नहीं समजायेलु एवुं आत्मस्वरूप अनुभववामां आव्युं ते अर्थे भगवान् जिननेविषे तेओए सद्गुरुपदनुं आरोपण कर्युं होय एम मने जणाय छे. जैनशैली प्रमाणे 'भगवत' शब्द ज्यां वपरायो होय त्यां 'श्रीजिन' स्वतः समजाय छे. आ चालु परिचय प्रमाणे 'भगवत' शब्द श्रीजिन माटे कर्त्तापुरुषे वापर्यो होवानुं पण लागे छे.

बीजा दोहरामां ग्रंथकारे ग्रथ रचवानुं प्रयोजन दर्शाव्युं छे. अनेक अनेक प्राचीन अद्भुत शास्त्रो

विद्यमान छतां आ एक विशेष ग्रंथनी अगत्य पोते शा कारणे जोई छे तेवुं अव्यक्त भावे जणावतां, श्रीमाने एम दृष्टि राखी जणाय छे के, पूर्वना ग्रंथो ते ते समयनी स्थितिनुं भान कराववामां विशेष उपकारक होइ, वर्त्तमानमां पण महान् कल्याणकर्त्ता छतां, वर्त्तमान समयनी स्थितिनुं भान करावनार ग्रंथ लखवा ए अत्यारना समयने खास उपकारनु कारण छे. आ अने त्यार पछीना दोहरामां, वर्त्तमान-काळमां मोक्षमार्गनो लोप, कां तो एकांत क्रियाजडत्व अने कां तो एकांत शुष्कज्ञानना आग्रहना आश्रये थयो जोइ, व्यवहार अने निश्चय मार्गनुं युगपदपणुं दर्शाववाना हेतुए ग्रंथरचना करी छे एम जणाव्युं छे. वर्त्तमानमां आ तो स्पष्ट जणाय छे के, केटलाक जीवो मात्र ज्ञानरहित शुष्कक्रियामां धर्म मानी बेठा छे, अने केटलाक जीवो मात्र शुष्कअध्यात्ममां धर्म मानी बेठा छे. चोथा अने पांचमा दोहरामां क्रियाजड अने शुष्कज्ञानीनुं संक्षिप्त स्वरूप निरूपण कर्युं छे.

चोथा अने पाचमा दोहरामां शुष्कक्रिया अने शुष्कअध्यात्मनुं अगौरव बतावी, छठ्ठा अने सातमा दोहरामां त्याग, अने वैराग्यनां मूल्य दर्शाववामां आवेल छे. वैराग्यादि तो ज साफल्य छे के, जो तेनी साथे आत्मज्ञान होय, वळी, आत्मानुभव न थयो होय, छतां ते पामवा माटे, वैराग्यादि साधनो सेववामां आवतां होय, तो ते आत्मज्ञान पामवानां निदान थाय छे एम कह्युं छे. ग्रंथकारनो कहेवानो आशय, शुष्कक्रिया अने शुष्काध्यात्म करतां, वैराग्यादि साधनोनुं विशेष महत्व दर्शाववानो छे. केटलाक त्याग, वैराग्यविना आत्मानुभव पामवानुं कहे छे तेने असत्य ठराववारूप वचन सातमा दोहरामां—

त्याग विराग न चित्तमां, थाय न तेने ज्ञान;

कही कहे छे. जेओ प्रथम त्याग, वैराग्यने सेवे छे, अने ते सेववानुं परिणाम आत्मभान करवुं ते भूली

जाय छे, तो काळे करी ते त्याग, वैराग्यादिद्वाराए लोकभाव पाम्या होय छे ते भावथी लोको पूजासत्कारादि करे छे तेने आधीन थई जाय छे. जेवी रीते, कोइ शुभ संस्कारी जीव, संसारपर अभाव थई जतां त्यागदशा स्वीकारे छे. ज्यारे आ दशानो स्वीकार करे त्यारे आत्मज्ञान होय ज एम एकांत होय नहीं. आम आत्मज्ञान-विना संसारप्रतिथी उदासीनता आववाथी स्वीकारेल त्यागीदशाना उत्तम सेवनथी, तेवा त्यागी पुरुषप्रत्ये लोकनो भाव उत्पन्न थाय छे, अने एक वखत लोकभाव उत्पन्न थयो, तो पछी ते त्यागी जीवना पूजा सत्कारादि लोकसमूह प्रशंसापात्र रीते करे छे. आवी स्थितिमां जो ते त्यागी पुरुषमां आत्मज्ञान प्रकट्युं न होय, अथवा आत्मज्ञान पामवा अर्थे पोते त्यागादिनो स्वीकार करे छे एवो तेनो सतत लक्ष्य रह्यो न होय तो लोकसमूह जे पूजासत्कारादि करे छे ते पूजा सत्कारादि, पछी ते त्यागी जीवने मान पूजाना लोभना आकांक्षी बनावे छे, अने तेनुं परिणाम ए आवे छे के, आत्मार्थ चूकी जवाय छे. आवां उदाहरण आपणे अनेक जोइ शकीए छीए. आ रीते त्यागादि शा माटे जोइए, अने तेनुं शुं मूल्य छे तेनुं आ दोहरामां निरूपण कर्युं छे.

आठमा दोहरामां कह्युं छे के,

ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, त्यां समजवुं तेह;
त्यां त्यां ते ते आचरे, आत्मार्थी जन एह.

जे स्थाने जे योग्य होय, ते जे समजे, अने ते प्रमाणे जे आचरण सेवे ते आत्मार्थी जन कहेवायोग्य छे. कहेवानो उद्देश एम जणाय छे के, ज्यां क्रियानी अगत्य होय त्यां क्रियासेवन करवुं, ज्यां ज्ञाननी जरुर होय त्यां ज्ञानसेवन करवुं, ज्यां वैराग्यनी आवश्यकता होय त्यां वैराग्य, अने ज्यां त्यागनी आवश्यकता होय

त्यां त्यागनो आदर करवो. आ प्रकारे शुं आदरवा के सेववा योग्य छे ते प्रथम जाणवानी-समजवानी-जरूर छे, अने शुं समजवा के जाणवा योग्य छे ते समज्या के जाण्या पछी तथाप्रकारनुं आचरण करवानी जरूर छे. मने एम लागे छे के, ग्रंथकर्त्तापुरुषे, आ दोहरामां 'सम्यग्ज्ञान' 'सम्यग्दर्शन' 'सम्यक्-चारित्र' नु प्रतिपादन पण कर्युं छे, केमके,

शास्त्रकारोनुं वचन छे के, वस्तुने वस्तुरूपे समजवी ते सम्यग्दर्शन, अने वस्तु जाण्या पछी ते प्रमाणे आचार सेववो ते चारित्र. 'तत्त्वार्थसूत्र'ना प्रणेता भगवान् उमास्वातिए कह्युं छे के,

ज्ञानदर्शनचारित्राणि मोक्षमार्गः

अर्थात् ज्ञान दर्शन अने चारित्र ए रत्नत्रय मोक्षमार्ग छे. आ दोहरामां श्रीमान् राजचंद्रे पण ते ज वात सरलाकारे कही छे, केमके योग्य स्थाने योग्य समजवुं ते सम्यक् ज्ञान छे, अने ते ज्ञानानुसार सम्यक् आचरण करवु ते सम्यक् चारित्र छे.

नवमा दोहराथी मांडी त्रेवीशमा दोहरापर्यंत सद्गुरुनी भक्ति, तेनुं फल, सद्गुरुनुं माहात्म्य, सद्गुरुनां लक्षणो आदिनो विस्तार करेल छे. नवमा दोहरामां आत्मस्वरूपनो लक्ष्य कोने थाय ते बताव्युं छे. पोतानी कल्पनानुसार मोक्षमार्ग मानी लीधो होय, तो ते कल्पनानो त्याग करी, जेने आत्मानुभव थयो होय एवा पुरुषनी सेवना करे, तो निजपदनी प्राप्ति थाय एम ए दोहरामां कह्युं छे. दशमा दोहरामां सद्गुरुनां लक्षणो प्रकट कर्यां छे, जेओ परभावनी इच्छाथी रहित थई आत्मज्ञानने विषे स्थित थयेल छे, जेओने शत्रु, मित्र, हर्ष, शोक, नमस्कार, तिरस्कारादि भावो प्रत्ये समता वर्त्ते छे, जेओ भगवान् महावीरादि महात्माओनी पेठे, मात्र भोगावलि कर्मो भोगववाशिवाय अन्य प्रवृत्तिथी सर्वथा उदासीन

जाय छे, तो काळे करी ते त्याग, वैराग्यादिद्वाराए लोकभाव पाम्या होय छे ते भावथी लोको पूजासत्कारादि करे छे तेने आधीन थई जाय छे. जेवी रीते, कोइ शुभ संस्कारी जीव, संसारपर अभाव थई जतां त्यागदशा स्वीकारे छे ज्यारे आ दशानो स्वीकार करे त्यारे आत्मज्ञान होय ज एम एकांत होय नहीं. आम आत्मज्ञान-विना संसारप्रतिथी उदासीनता आववाथी स्वीकारेल त्यागीदशाना उत्तम सेवनथी, तेवा त्यागी पुरुषप्रत्ये लोकनो भाव उत्पन्न थाय छे, अने एक वखत लोकभाव उत्पन्न थयो, तो पछी ते त्यागी जीवना पूजा सत्कारादि लोकसमूह प्रशंसापात्र रीते करे छे. आवी स्थितिमां जो ते त्यागी पुरुषमां आत्मज्ञान प्रकटयुं न होय, अथवा आत्मज्ञान पामवा अर्थे पोते त्यागादिनो स्वीकार करे छे एवो तेनो सतत लक्ष्य रह्यो न होय तो लोकसमूह जे पूजासत्कारादि करे छे ते पूजा सत्कारादि, पछी ते त्यागी जीवने मान पूजाना लोभना आकांक्षी बनावे छे, अने तेनुं परिणाम ए आवे छे के, आत्मार्थ चूकी जवाय छे. आवां उदाहरण आपणे अनेक जोइ शकीए छीए. आ रीते त्यागादि शा माटे जोइए, अने तेनुं शुं मूल्य छे तेनुं आ दोहरामां निरूपण कर्युं छे.

आठमा दोहरामां कह्युं छे के,

ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, त्यां समजवुं तेह;
त्यां त्यां ते ते आचरे, आत्मार्थी जन एह.

जे स्थाने जे योग्य होय, ते जे समजे, अने ते प्रमाणे जे आचरण सेवे ते आत्मार्थी जन कहेवायोग्य छे. कहेवानो उद्देश एम जणाय छे के, ज्यां क्रियानी अगत्य होय त्यां क्रियासेवन करवुं; ज्यां ज्ञाननी जरुर होय त्यां ज्ञानसेवन करवुं; ज्यां वैराग्यनी आवश्यकता होय त्यां वैराग्य, अने ज्यां त्यागनी आवश्यकता होय

त्यां त्यागनो आदर करवो. आ प्रकारे शुं आदरवा के सेववा योग्य छे ते प्रथम जाणवानी-समजवानी-जरूर छे, अने शुं समजवा के जाणवा योग्य छे ते समज्या के जाण्या पछी तथाप्रकारनुं आचरण करवानी जरूर छे. मने एम लागे छे के, ग्रंथकर्त्तापुरुषे, आ दोहरामां 'सम्यग्ज्ञान' 'सम्यग्दर्शन' 'सम्यक्-चारित्र' नुं प्रतिपादन पण कर्युं छे, केमके,

शास्त्रकारोनुं वचन छे के, वस्तुने वस्तुरूपे समजवी ते सम्यग्दर्शन; अने वस्तु जाण्या पछी ते प्रमाणे आचार सेववो ते चारित्र 'तत्त्वार्थसूत्र'ना प्रणेता भगवान् उमास्वातिए कह्युं छे के,

ज्ञानदर्शनचारित्राणि मोक्षमार्गः

अर्थात् ज्ञान दर्शन अने चारित्र ए रत्नत्रय मोक्षमार्ग छे आ दोहरामां श्रीमान् राजचंद्रे पण ते ज वात सरलाकारे कही छे, केमके योग्य स्थाने योग्य समजवु ते सम्यक् ज्ञान छे, अने ते ज्ञानानुसार सम्यक् आचरण करवु ते सम्यक् चारित्र छे.

नवमा दोहराथी मांडी त्रेवीशमा दोहरापर्यंत सद्गुरुनी भक्ति, तेनुं फल, सद्गुरुनुं माहात्म्य, सद्गुरुनां लक्षणो आदिनो विस्तार करेल छे. नवमा दोहरामां आत्मस्वरूपनो लक्ष्य कोने थाय ते वताव्युं छे. पोतानी कल्पनानुसार मोक्षमार्ग मानी लीधो होय, तो ते कल्पनानो त्याग करी, जेने आत्मानुभव थयो होय एवा पुरुषनी सेवना करे, तो निजपदनी प्राप्ति थाय एम ए दोहरामां कह्युं छे. दशमा दोहरामां सद्गुरुनां लक्षणो प्रकट कर्या छे, जेओ परभावनी इच्छाथी रहित थई आत्मज्ञानने विषे स्थित थयेल छे, जेओने शत्रु, मित्र, हर्ष, शोक, नमस्कार, तिरस्कारादि भावो प्रत्ये समता वर्त्ते छे, जेओ भगवान् महावीरादि महात्माओनी पेठे, मात्र भोगावलि कर्मो भोगववाशिवाय अन्य प्रवृत्तिथी सर्वथा उदासीन

थया छे, जेओनी वाणी अपूर्व कहेतां, अज्ञानी करतां स्पष्ट जूदी पडे छे, जेओ परमश्रुतधारी छे तेओ सद्गुरु थवाने योग्य छे एम आ दोहरामां कही, अगीयारमा, तथा बारमा, दोहरामां प्रत्यक्ष सद्गुरु, अने श्रीजिननुं माहात्म्य चमत्कारिक रीते गायुं छे. ए दोहराओमां कह्युं छे के,

प्रत्यक्ष सद्गुरु सम नहीं, परोक्ष जिन उपकार;
एवो लक्ष थया विना, उगे न आत्मविचार.
सद्गुरुना उपदेशवण, समजाय न जिनरूप;
समज्यावण उपकार शो ? समज्ये जिनस्वरूप.

आ रचनामां श्रीजिननुं पद सर्वोत्कृष्टपणे स्थाप्युं छे, केमके एम जे कह्युं के, " सद्गुरुना उपदेशवण, समजाय न जिनरूप, समज्यावण उपकार शो ? समज्ये जिनस्वरूप " तेनो आशय एवो छे के, " सद्गुरुना उपदेशविना जिननुं स्वरूप समजाय नहीं, अने स्वरूप समज्याविना उपकार शो थाय ? जो सद्गुरु उपदेशे जिननुं स्वरूप समजे, तो समजनारनो आत्मा परिणामे जिननी दशाने पामे. " श्रीमान् राजचंद्रे जेम अन्यत्र कह्युं छे के,

आत्मस्वभाव अगम्य ते, अवलंबन आधार;
जिनपदथी दर्शावियो, तेह स्वरूप प्रकार;
जिनपद निजपद एकता, भेदभाव नहीं कांई;
लक्ष थवाने तेहनो, कह्यां शास्त्र सुखदाई.

तेम सर्व ज्ञानीपुरुषोए कह्यु छे के, सत्ताए आपणो आत्मा अने श्रीजिननो आत्मा समान छे, तथापि आपणो आत्मा पुरुषार्थना अभावे, ज्ञानावरणीयादि अष्टकर्मसहित छे, अने श्रीजिने पुरुपार्थ-वळे आपश्रीना आत्माने कर्ममलरहित कर्यों छे. आपश्रीना आत्माने जेवो कर्ममलरहित निर्मल कर्यो छे तेवो आपणा आत्माने निर्मल करवाना हेतुए आपणे माटे उपदेशमार्ग स्थाप्यो छे. जो आपणे सपूर्ण पुरुषार्थ करीए तो आपणो आत्मा अर्थात् आपणा–निजपद–अने श्रीजिनना आत्मा–जिनपद–मां कांई पण भेदभाव रहे नहीं तात्पर्य के, जेम बारमा दोहरामां जिनपद समजवानो अने पामवानो ग्रंथकारे उपदेश कर्यो छे तेम सर्व ज्ञानीपुरुषोए आपणा आत्माने–निजपदने–श्री जिनना कर्ममलरहित आत्मा–जिनपद–जेवा करवानी साध्यदृष्टि राखी छे, एटले दृष्टिबिंदु तो जिनपदप्रत्ये स्थिर कर्युं छे. आ दोहरामां, आ रीते, दृष्टिबिदु श्रीजिनप्रत्ये राखी, तेओनु सर्वोत्तम माहात्म्य अद्भुतपणे गाई, प्रत्यक्ष सद्गुरुनुं माहात्म्य पण तेवा ज चमत्कारपूर्वक गायुं छे.

प्रत्यक्ष सद्गुरुनुं स्वरूप आ पहेलाना दोहरामां कहेवायुं. तेनुं माहात्म्य गातां ग्रंथकारे श्रीजिनना बे प्रकार पाड्या छे एक परोक्ष जिन, अने बीजा प्रत्यक्ष जिन. प्रत्यक्ष जिन त्यारे कहेवाय के ज्यारे ऋषभादि तीर्थंकर महात्माओ सयोगीपणे–देहस्थितिए–विद्यमान हता. परोक्ष जिन ते कहेवाय के, ऋषभादि परमपुरुषो जे अत्यारे देहाकारे आपणी वच्चे अविद्यमान छे ते. ऋषभादि जिनेश्वरोए पोते प्राप्त करेल संपूर्ण निर्मल आत्मस्वरूपनो आपण जगत्जीवोने उपदेश कर्यों छे, एटले बारमा दोहरामा ग्रंथकर्त्तापुरुषे कह्याप्रमाणे तेओश्रीनो अनंत उपकार छे, तथापि तेओश्रीए प्रत्यक्षपणे–विद्यमानताए–जे पदनो बोध कर्यो हतो ते बोध हवे तेओश्रीना परोक्षपणे–अविद्यमानताए–थतो होवाथी

आपणे आपणी निजकल्पनाए तेनुं अनुसरण करीए छीए; अने निजकल्पनाना अनुसरणने लइने ज श्रीजिननुं स्वरूप केवुं अद्भुत छे, ते आपणाथी सम्यक् रीते समजातुं नथी. श्रीजिन परोक्ष होवाथी आपणी निजकल्पनाओने तेओश्री प्रत्यक्षपणे अटकावी शके नहीं. दृष्टांत तरीके, श्री जिनोए अढार पापस्थानकथी रहित थवानुं कह्युं छे, परंतु आपणे तेमांनुं कोइ एक पापस्थानक अत्यारे सेवता होइए, तो पूर्वे थयेल परमोपकारी जिनेश्वरो आपणने आवी अटकावी शके नहीं के, तमे आ सेवना न करो. आज स्थळे, जेओए श्रीजिनना अपूर्व पदने सम्यग्ज्ञानपूर्वक जाण्युं छे, अने जेओए ते पदनो आश्रय लीधो छे एवा सद्गुरु प्रत्यक्ष–विद्यमान–होय तो आपणने निजछंदे चालता अटकावी शके, अने तेने लईने उक्त पापस्थानकथी दूर राखी शके. अत्यारे आपणी वच्चे अविद्यमान जिनेश्वरो तेम न करी शके. आ अपेक्षाए प्रत्यक्ष सद्गुरुनो उपकार, परोक्ष जिन करतां विशेष कर्त्तापुरुषे कह्यो छे. आ अपेक्षाए प्रत्यक्ष सद्गुरुनो विशेष उपकार कर्त्तापुरुषे कह्यो छतां, तेओए प्राधान्यता तो श्रीजिनने ज आपवी जोइए तेम, बारमा दोहरामां आपी छे; केमके प्रत्यक्ष सद्गुरुना उपकारद्वारा जे समजवानुं छे ते तो श्रीजिननुं पद छे. जे जिननुं पद वस्तुतः शुं छे ते समजाय नहीं तो सर्व प्रयत्नो निष्फळ छे; अने श्रीजिननुं पद शुं छे ते, तो परोक्षपणे जिनेश्वरो समजावे–तेओनो उपदेश समजावे–तेना करतां ते पदना आश्रीत एवा प्रत्यक्षपणे विचरता सद्गुरुओ विशेष समजावी शके. खरूं कहीए, तो परोक्ष जिननी व्याख्या, तेओश्रीनो उपदेश, तेओश्रीनी मुद्रा, तेओना गुणोना वर्णनो वगेरे ए रीते करी शकाय. आ उपदेशादि-द्वाराए श्रीजिननुं स्वरूप आपणे स्वकल्पनाए समजी शकीए तेना करतां ते उपदेशादिनो जेओए आश्रय

लई, तेने पोतानेविषे परिणमाव्यो छे एवा प्रत्यक्ष सद्गुरुओद्वाराए विशेष बलवान रीते समजी शकीए. आवी अपेक्षापूर्वक कर्त्तापुरुषे, श्रीजिन अने श्रीप्रत्यक्ष सद्गुरुनुं अद्भुत माहात्म्य गायुं छे.

आत्मस्वरूप पामवा माटेना प्रत्यक्ष सद्गुरुरूप साधन बतावी तेरमा दोहरामां त्यार पछीनुं बीजुं साधन जे जिनागमादि आत्माना तथा परलोकादिना होवापणाविषे उपदेश करनार शास्त्रो तेनु महत्व दर्शाव्युं छे, आ दोहराना अर्थमां एम जे कह्युं छे के "जे जिनागमादि आत्माना होवापणानो तथा परलोकादिना होवापणानो उपदेश करवावाळां शास्त्रो छे, ते पण ज्यां प्रत्यक्ष सद्गुरुनो जोग न होय त्यां सुपात्र जीवने आधाररूप छे, पण सद्गुरुसमान भ्रांतिनां छेदक गणाय नहीं" ते एम दर्शावे छे के, भगवाने, सद्गुरुरूपी साधन पछीनु आत्महित माटेनुं बीजु साधन शास्त्रो छे एम जे छे तेनो आशय कर्त्तापुरुषे सतत दृष्टिसन्मुख राखी आ वचनो लख्यां जणाय छे.

केटलीक वार एवुं बने छे के, धर्मभावने स्थाने धर्मांधपणुं अथवा धर्मदुराग्रह उत्पन्न थाय छे. ज्यारे धर्मांधपणुं उत्पन्न थाय छे त्यारे योग्यायोग्य जोवानी बुद्धि चाली जाय छे, अने काळे करी विचार-स्वातंत्र्य पण नाश पामी जाय छे. जेओ धर्मांधपणाथी पराधीन थई जाय छे तेने सत्य के असत्य जोवानी वृत्ति रहेती नथी. उदाहरण तरीके, दिगम्बरोने एवी आग्रहरूप मानीनता बेसी गई के, श्वेताम्बरो ए भगवान् महावीरनी प्ररूपणाथी विमुख वर्त्तनारो समूदाय छे. तेओ आवा आग्रहना परिणामे श्रीजिनागमादिनो स्वीकार करवो तो दूर रह्यो, परंतु तेनो निषेध करे छे जो आग्रह बेसी न गयो होत, तो ते पवित्र शास्त्रो वांचवा विचारवाथी जे श्रेय थाय तेनो तेओ लाभ लई शकत. आज रीते श्वेताम्बरोने एवो आग्रह बेसी गयो के, दिगम्बरो तो 'निन्हव' छे, माटे तेनो परिचय मात्र पण

होय छे. जो आवो श्वेताम्बरोने आग्रह बेसी न गयो होत तो दिगम्बरदशामां शुं महत्व छे तेनो तेओ विचार करी शकत. तात्पर्य के बन्नेने पोताना अभिप्रायमां धर्मांधता आवी जवाथी बन्ने संप्रदायो अन्योन्य दशानी विशेषता जोइ शकता नथी. आवी धर्मांधता दूर थाय, तो बन्ने परस्पर एक बीजी दशानु योग्य स्थान जोइ शके. धर्मांधता दूर करवाना हेतुए, जेओने दुराग्रह बंधाई गयो होय छे तेने श्रीसद्गुरु, अन्यना शास्त्रोमां शुं वस्तु छे ते अवलोकवानी कोइ वार आज्ञा करे छे, जेम, श्वेताम्बरवृत्तिमां आग्रह बंधाई गयो होय तेने दिगम्बर शास्त्रोनी वस्तु अवलोकवानी अने दिगम्बरवृत्तिमां आग्रह बंधाई गयो होय तेने श्वेताम्बर शास्त्रोनी वस्तु अवलोकवानी आज्ञा करे छे. जो ते आज्ञानुं पालन करवामां आवे, तो विचारबुद्धि विशाळ थतां, हेय, उपादेय, अने ज्ञेय शुं छे ते उत्तम रीते जोई शकाय. आ वातनुं निरूपण चौदमा दोहरामां कर्युं छे.

पंदरमाथी ते अढारमा दोहरापर्यंत सद्गुरुद्वाराए स्वछंद मानादिक शत्रुनो नाश थवानुं बने छे एवुं श्रीजिननी आज्ञाए कही समकित उत्पन्न थवानुं तेने प्रत्यक्ष कारण दर्शाव्युं छे.

ओगणीशमा दोहरामां श्रीजिने सद्गुरुनु माहात्म्य केवुं गायु छे ते बताव्युं छे:

जे सद्गुरु उपदेशथी, पाम्यो केवळ ज्ञान;
गुरु रह्या छद्मस्थ पण, विनय करे भगवान्.

"जे सद्गुरुना उपदेशथी कोइ केवळ ज्ञानने पाम्या, ते सद्गुरु हजी छद्मस्थ रह्या होय, तो पण जे केवळ ज्ञानने पाम्या छे एवा ते केवळी भगवान् छद्मस्थ एवा पोताना सद्गुरुनी वैयावच्च करे." आवा प्रसंगो बन्यानुं श्रीजैनशास्त्रो बतावे छे' "जैन धर्मनो प्राचीन इतिहास" एक एवो दाखलो आपे छे के,

" हवे एक दहाडो अग्निकापुत्रमुनिजीए बार वर्षों नो भयकर दुकाळ पडवानो जाणीने पोताना परिवारने अन्य देशमां मोकल्यो, तथा पोते वृद्ध होवाथी विहार करवाने अशक्त हता, तेथी त्यांज रह्या पुष्पचूला साध्वी पण हमेशां राजाना अंत:पुरमांथी आहार पाणी लावीने पुत्रीनी पेठे गुरुमहाराजने आपवा लागी एक दहाडो संसारनी असारता भावतां थकां तेने (पुष्पचूलाने) केवलज्ञान उपज्यूं, तो पण तेथी ते गुरुमहाराजनी उलटी वधारे वैयावच्च करवा लागी. एक दहाडो ते वरसते वरसादे पण ज्यारे आहार-पाणी लावी त्यारे गुरुमहाराजे तेने पूछ्युं के, हे आर्ये ! तु श्रुतज्ञानी थइने तें आ कार्य शुं कर्यु ? त्यारे पुष्पचूलाए कह्युं के, हे भगवन् ! मार्गमां अपूकायना जीवो अचित्त हता, अने तेथी तेम करवामां कंइ बाधो जेवुं नथी ते सांभळी गुरुमहाराजे तेने पूछ्यु के, रस्तामां अचित्त अप्कायो हता, एम से शी रीते जाण्युं ? त्यारे तेणे (पुष्पचूलाए) कह्युं के, आपना पसाय (प्रताप) थी मने केवळ ज्ञान उत्पन्न थयु छे."

श्री जिनागमने विषे आ प्रकारना अनेक दाखलाओ विद्यमान छे. " मदनरेखा " नो अधिकार पण जैनजगत् विख्यात छे.

स्त्रीदेहे ज्ञानी आत्माए आवा प्रकारनुं वैयावच्च करवानो दाखलो में अत्र एटला माटे आप्यो छे के, आपण पुरुष देहधारीओनुं केटलुं विशेष कर्त्तव्य छे ते जोइ शकीए

श्री "उत्तराध्ययन" सूत्रमां भगवाने विनयने धर्मनुं मूळ कही वर्णव्यो छे ते वात दृष्टिमां राखी वीशमा दोहरामां कह्यु छे के,

एवो मार्ग विनय तणे, भाव्यो श्रीवीतराग;
मूळ हेतु ए मार्गनो, समजे कोई सुभाग्य.

सद्गुरुना विनयनुं माहात्म्य दर्शावी, जेओ शिष्यादि पासेथी विनयादिनी इच्छा करे, एवा असद्गुरुओ प्रत्ये एकवीशमा दोहरामां चेतवणी आपी छे के "आ विनय मार्ग कह्यो तेनो लाभ एटले शिष्यादि पासे कराववानी इच्छा करीने जो कोइ पण असद्गुरु पोतानेविषे सद्गुरुपणुं स्थापे, तो ते महामोहनीयकर्म उपार्जन करी भवसमुद्रमां बुडे."

आ विनयमार्गनो हेतु मुमुक्षु जीव होय ते समजे, अने जेओ मतार्थाधीन होय ते, तेनो दुर्पयोग करे एम त्यार पछीना बे दोहरामां कहेतां जणाव्युं छे के "जे मोक्षार्थी जीव होय, ते आ विनय मार्गादिनो विचार समजे, अने जे मतार्थी होय ते, तेनो अवळो निर्धार ले, एटले कां पोते तेवो विनय शिष्यादि-पासे करावे, अथवा असद्गुरुनेविषे पोते सद्गुरुनी भ्रांति राखी आ विनयमार्गनो उपयोग करे."

चोवीशमा दोहराथी तेत्रीशमापर्यंत जूदा जूदा प्रकारना मतार्थी जीवोना प्रकार दर्शावेल छे. केवा प्रकारना मतार्थी जीवोनुं वर्त्तमानमां होवापणु छे तेनुं सूक्ष्म अवलोकन आपरथी थई शके तेम छे. आत्मज्ञान विना जेओए मात्र बाह्यत्याग अंगीकार कर्यो छे एवा पोताना मानेला अने आंतर्त्यागविनाना गुरुओविषे महत्वबुद्धि बंधावी ते एक प्रकारनो मतार्थ छे. संसारी वेष बदली, त्यागी वेष स्वीकारवाथी कांई खरा त्यागी थवातु नथी, ज्यारे अंतर् भेदाई, आत्मा अने देहनुं भिन्नत्व जाणी ते प्रमाणे आचरण थाय छे त्यारे ज खरो त्याग आवे छे. आवा आंतर्त्यागविनाना गुरुओ ए बाह्यत्यागी गुरुओ छे, अने एवा गुरुओमां ममत्वबुद्धि बंधावी ते एक प्रकारनो मतार्थ छे. आ रीते पोताना कुळना गुरुओ गमे तेवा अज्ञान अथवा शिथिलाचारथी भरपुर होय तोपण तेमां मोह राखवो ते मतार्थ छे. वर्त्तमानमां एक एवो विचारप्रवाह चाले छे के, पोताना धर्मगुरुओ विषे अभिमान स्थापवुं ए कर्त्तव्य छे. जेओ

आत्मानुभव अने मोक्षमार्गने पाम्या छे एवा कुळगुरुओ होय तेमां पूज्यभाव स्थापवो ए कर्तव्य छे ए बेशक खरुं छे, तथापि भक्तराज अखाजीए कह्युं छे

अज्ञाने जे पहेरे वेष, बहार नीकळे देखादेख;
जेम वाघ गौधणने हळ्यो, वर्त्तो तेमांही रे भळ्यो;
तेने छे आमिषनो आहार, प्रसंग मळे अखा प्रतिकार.

तेम मात्र अज्ञानपूर्वक वेषधारी कुळगुरुओ होय तो तेमां ममत्व राखवो ए आत्माने कोइपण प्रकारे उपकार शी रीते करी शके ? अने जो उपकार न करी शके, तो तेनेविषे अभिमान धारण करवुं तेने मतार्थ शिवाय बीजुं शुं कहेवुं ?

आ अने त्यार पछीनी रचनामां कुळधर्मगुरुप्रत्येनो मोह दूर करवा विषे वारंवार कहेवामां आव्युं छे तेनो उद्देश आवी रीते विचारवाथी समजाशे. प्रत्येक दर्शनवादीओ, संप्रदाय तथा गच्छधारीओ एम कहे छे के, तेओनुं कथन ज सत्य छे, अने अन्यनुं असत्य छे श्वेताम्बरो कहेशे, " अमो जे मानीए छीए ते ज सेववाथी सम्यक्त्व अने प्रायः मोक्ष मार्ग पमाय छे, अमारा अभिप्राय शिवायने मानवाथी मिथ्यात्व नीपजे छे. " दिगम्बरो पण आम ज कहे छे. तपगच्छ, खरतर गच्छादिनुं पण तेम ज कहेवुं छे. श्री लोंकाशाहने अनुसरनाराओनुं पण आम ज मानवुं छे आ प्रमाणे जो दरेक गच्छवाळा बीजाने मिथ्यात्वी कहे, तो आपणे निर्णय शी रीते करवो के चोकस मत ज सत्य छे. आवी स्थितिमां आपणा कुळमत अने तेना गुरुओमां ममत्व राखवो ते श्रेयस्कर छे के, एवा प्रकारना ममत्वमां दुराग्रह न राखतां, जेओ जैनदृष्टि अनुसार आत्मानुभव पाम्या छे; अने अंतरमां जेने वैराग्यादि परिणम्यां छे

तेओ प्रत्ये श्रद्धान् राखवुं ते श्रेयस्कर छे ? जो आवी दृष्टि न राखी अज्ञानी कुळधर्मगुरुमां ममत्व बुद्धि ज स्थिर करवामां आवे, तो एक प्रकारनो मतार्थ ज छे; जे मतार्थ आत्मभावने घातक छे.

मतार्थनो बीजो एक प्रकार त्यार पछीना दोहरामां जणाव्यो छे: श्रीजिनागममां भगवान् जिनेश्वरोनुं बाह्य माहात्म्य दर्शाववा अर्थे समवसरणादि सिद्धिओनुं वर्णन कर्युं छे. भगवान्नुं वास्तव्य स्वरूप आ सिद्धिओमां नथी, परंतु तेओए जे शुद्धात्मपद प्राप्त कर्युं छे तेमां समायेलु छे. तेओश्रीने शुद्धात्मपद प्राप्त थवाथी, समवसरणादि सिद्धिओ सहज उत्पन्न थाय छे. वर्त्तमानमां केटलाक आवी बाह्यसिद्धिओने श्रीजिननुं स्वरूप मानी लई, तेओनुं अंतरंग स्वरूप जे शुद्धात्मपद तेने ओळखवाथी उपेक्षित रहे छे तेओने तेम न राखवाना हेतुथी आ पचीशमा दोहरामां उपदेश कर्यो छे के, जिननुं अंतरंग स्वरूप विचारतां आपणुं अंतरंग स्वरूप पामी शकीए, माटे ते अंतरंग स्वरूप विचारवामां विशेष लाभ छे. आ स्थळे समवसरणादिनो निषेध तेओए नथी कर्यो, परंतु जे वस्तु पामवा योग्य छे ते वस्तु जिननुं प्रतिष्ठित अंतरंग स्वरूप ते प्रशंस्युं छे. आ वात दृष्टिसन्मुख न राखवी ते पण एक प्रकारनो मतार्थ गण्यो छे.

मतार्थथी एक एवी प्रकृति पडी जाय छे के, क्यारेक सद्गुरुनो प्रत्यक्ष योग मळे, तो प्रथम तो घणुंकरी तेनुं ओळख थतुं नथी. कदाच् ते पुरुषमां कांई विशेषतानुं भान थाय, तोपण तेनी उपकारक वाणीनो स्वीकार करवानु तेने सूझतुं नथी, केमके पोताना सम्प्रदायमां पोताने कंइक मानननो योग मळतो होय, तो ते मानना योगनुं रक्षण तो ज थई शके, के जो ते संप्रदायपर अंकुश धरावता गुरुओ–भले पछी ते बाह्य त्यागीओ होय–प्रत्ये पोतानी मुमुक्षुता दृढ छे एवुं बतावी शके, अर्थात् सम्प्रदाय-गुरुओद्वारा जे मान मळवानुं निमित्त छे तेना रक्षण माटे खरेखरा गुरुनो योग होय तो पण तेनाथी सन्मुख थवातुं नथी. आ पण एक प्रकारनो मतार्थ छे एम छवीशमा दोहरामां कह्युं छे.

मतार्थनो एक बीजो प्रकार सतावीशमा दोहरामां बताव्यो छे. देव, नारक आदि गतिओना भंग-(भांगा) नुं स्वरूप शास्त्रकारोए निरूपण करवामां कोइ एक विशेष परमार्थहेतु राख्यो छे, ते हेतु भूली जइ, देव, नारकादि गतिओना करेला वर्णनो प्रमाणे वस्तुस्थिति छे के नहीं एवी कल्पनाओ करवामां जीवन गाळवानो केटलाकने मोह बंधाइ जाय छे, आ पण एक जातिनो मतार्थ छे. जीवने, अष्टकर्म क्षय न करवाना कारणे, चतुर्गतिमां भ्रमण करवुं पडे छे ते वात प्राधान्य राखी गौणपणे देवादि गतिनु स्वरूप शास्त्रकारोए दर्शाव्युं छे. प्राधान्य हेतु ए ग्रंथकारे कहेलो कोइ एक विशेष परमार्थ हेतु छे, अने ते ज आत्माने उपकारक श्रुतज्ञान छे; तेने बदले देवादिगतिना वर्णनोना प्रकाशमां ज श्रुतज्ञान मात्र समायेलुं मानवामां जीव जीवन व्यतीत करे, तो ते मतार्थ ज छे. आ दोहराना छेला चरणमा पोताना मतना वेषनो आग्रह राखवो तेने पण मतार्थ कहेल छे, जे वात अनेक ज्ञानीओए वारवार कही छे.

सतावीशमा दोहरामां जेओ एम माने छे के, अमे व्रत करीए छीए, तथापि वृत्तिना स्वरूपने जाणता नथी तेओ प्रत्ये व्रतनु अभिमान न करवा सूचना करी वृत्तिनु स्वरूप जाणवा माटे प्रेरणा करी छे. जो वृत्तिनु वस्तुतः स्वरूप जाण्याविना व्रत करवानुं अभिमान थाय, तो ते पण एक जातनो मतार्थ छे आ स्थळे व्रत सहेतु करवा माटे प्रेरणा छे. आ दोहरामां छेल्लां चरणोमां, परमार्थउपदेशनो क्वचित् योग बने, तोपण लौकिक मान पूजा जतां रहेशे एवा विचारथी, परमार्थउपदेशनो लाभ न लेवो तेने मतार्थ गणाव्यो छे. कोइ ज्ञानीपुरुषनो योग बनी आवे, अने ज्ञानी पुरुषनां वचनो, लौकिक नहीं पण लोकोत्तर होय छे एम जणाय, तोपण ते लोकोत्तर वचनानुसार वर्त्तना करतां जीव एम करे छे के, जो हुं लौकिक विचारने अनुसरीश नहीं तो लोकोमां मारां मान पूजादि जतां रहेशे.

'निश्चयनय' अने 'व्यवहारनय' एवा बे भेद शास्त्रकारोए योज्या छे. आत्मा शुद्ध निर्मळ वस्तु छे, अने कर्मादिनो संयोग जीवे मात्र मिथ्यादर्शनना कारणे मान्यो छे एवी जे दृष्टि ते निश्चयनयमां समावेश पामे छे. 'व्यवहारनय' आत्मा अने कर्मनो संयोग दर्शावी, ते सयोगना कारणे आत्ममलिनता थइ छे ते व्यवहारपूर्वक त्यागवानु उपदेशे छे. घणा जीवो, जेमां प्राधान्यपणे निश्चयनयनो विस्तार छे एवा 'समयसार' के "योगवासिष्ठ" जेवा ग्रथो वांची सद्गुरु, सत्शास्त्र, वैराग्य विवेकादि व्यवहार मार्ग भूली जई, अंतरंगमां तथारूप गुणोनी स्पर्शना थवा दीधाविना मात्र कहेवारूपे 'हुं ब्रह्म छुं' जेवी शुष्क वृत्तिओने आधीन थई जाय छे तेओने पण एक प्रकारना मतार्थी जीव छे एम ओगणत्रीशमा दोहरामां कह्युं छे.

जेओ ज्ञानदशा के वैराग्यादि साधनदशा पाम्या नथी एवा जीवोनो संग पण भवसागरमा डुबाडनार छे एम त्रीशमा दोहरामां कही, एकत्रीशमा दोहरामां तेवा जीवोने मतार्थी एवा हेतुथी कह्या छे के तेओ-शुष्कज्ञानीओ–पोते ज्ञानी गणाववाना माननी इच्छाथी पोताना मतनो आग्रह राखी परमार्थने पामे नहीं, एटले ते पण जेओमां ज्ञान परिणाम पामवा योग्य नथी एवा जीवोमा गणावा योग्य छे.

आ मतार्थना विषयना अंतमां एटले बत्रीशमा दोहरामां जेओने क्रोध, मान, माया, अने लोभरूप कषाय पातळा पड्या नथी, जेओने अतर्वैराग्य उत्पन्न थयो नथी, जेओने आत्मामां गुण ग्रहण करवारूप सरळपणुं रह्युं नथी, अने जेओमां सत्यासत्यनी तुलना करवानी अपक्षपात दृष्टि नथी तेओने मतार्थी कह्या छे. आने दुर्भाग्यवान् मतार्थी एटला माटे कह्या छे के, तेओए आत्मस्वरूप पामवानी पात्रता विशेष न्यून करी नांखी छे.

चोत्रीशथी बेतालीशमा दोहरा सुधी जूदा जूदा प्रकारना आत्मार्थीनां लक्षणो प्रकट कर्यां छे. चोत्रीशमा दोहरामा केवा प्रकारना गुरुप्रत्ये आत्मार्थीनी भक्ति होय छे ते बताव्युं छे. श्री 'आचारांगसूत्र'नी शाख आपी बताव्यु छे के, जेओमां आत्मज्ञान प्रकट थयुं छे तेओ मुनिपणाने पात्र छे. आवा मुनिओ प्रत्ये भक्तिभावे जोवुं ते आत्मार्थ छे, अने नहीं के, जेओ आत्मज्ञानरहित होइ भवछेदन करवाने समर्थ नथी एवा गुरुओप्रत्ये, पोताना कुळगुरु छे एनी ज खातर भक्तिभावे जुए छे. जेओ आत्मज्ञानसहित होइ, भवछेदन करवाने समर्थ छे एवा प्रत्यक्षपणे विचरता सद्गुरुद्वाराए, जे शंकाओनुं समाधान शास्त्रादिथी थइ शकवा योग्य नथी, ते शंकाओनुं समाधान थइ शके छे ते माटे, तेमज दोषो स्वतः दूर करी शकाता नथी, पण जे सद्गुरुद्वारा दूर करी शकाय छे माटे तेओनो उपकार मानी तेओनी आज्ञा, मन, वचन अने कायाना योगे, वहन करवी ते पण एक आत्मार्थीनुं लक्षण छे, एम पांत्रीशमा दोहरामां निरूपण कर्युं छे.

छत्रीश तथा साडत्रीशमा दोहराओमा आत्मार्थीनुं एवुं लक्षण बताव्युं छे के, भूत, भविष्य, अने वर्त्तमान ए त्रणे कालमां मोक्षनो रस्तो एक ज होवो जोइए, अने जेथी ते रस्तो पमाय तेवो व्यवहार स्वीकारवो जोइए एम अतर्मां विचारी, सद्गुरुयोग जे शोधे, मान पूजादि, रिद्धिसिद्धि आदि मनना रोगोनी इच्छा न करतां एक आत्मार्थनी ज इच्छा राखे ते आत्मार्थी छे. कहेवानुं तात्पर्य एम छे के, परमार्थनो मार्ग गमे ते कालमां एक ज प्रकारनो छे, अने ते एक अद्वितीय मार्ग पामवा माटे जे जे साधनो–व्यवहार–आदरवा जोइए ते आदरवा; परंतु साधनोना निषेध–प्रतिपादनमां आत्माने मुंझावी नांखवो नहीं. आ आत्मार्थनुं लक्षण छे.

कषाय उपशांत थाय, मोक्ष शिवाय अन्य कोइ अभिलाषा होय ज नहीं, संसारप्रत्ये खेद रह्या करे, सर्व प्राणीप्रत्ये दया वर्त्तती होय त्यां ज आत्मार्थ होय छे एम आडत्रीशमा दोहरामां कह्युं छे. ज्यांसुधी आवी दशाने योग्य जीव न थाय त्यांसुधी अंतरोंग न मटे; अने अंतरोंग न मटे त्यांसुधी मोक्षमार्गनी प्राप्ति न थाय, ज्यारे एवी दशा प्रकट थाय त्यारे सद्गुरुनो बोध परिणाम पामे; अने ए बोध परिणाम पाम्येथी सुविचारदशा प्रकट थाय, जे सुविचारदशा प्रकट थयेथी निजज्ञान कहेतां आत्मस्वरूप प्रकाश पामे, अर्थात् सम्यग्दर्शन थाय; सम्यग्दर्शन प्राप्त थयेथी अवश्य सम्यक्चारित्र प्रकट थई अष्ट कर्मनो क्षय थइ निर्वाण प्राप्त थाय, एम आ आत्मार्थी लक्षणोना विषयने पूर्ण करतां, आडत्रीशमाथी ते बेताळीशमा दोहरापर्यंतमां कही, ग्रंथना प्राधान्य विषयप्रति ग्रथकार जाय छे.

ग्रंथकर्त्तापुरुषे, प्राधान्यविषयनी प्रस्तावनारूपे प्रथम बे दोहरामां, जे छ पद–तत्त्व–उपर जगत्मां प्रवर्त्तता मुख्य छ दर्शन योजायां छे ते छ पद कयां ते बताव्युं छे.

" आत्मा नामना पदार्थनुं होवापणुं छे " ए प्रथम पद छे. " आत्मा त्रणे काळमां छे, अर्थात् आत्मा नित्य छे " ए बीजुं पद छे " आत्मा पोताना कर्मनो कर्त्ता " छे ए त्रीजुं पद छे. चोथुं पद " आत्मा पोताना कर्मनो भोक्ता छे " ए छे. " आत्मानो कर्म साथेनो संबध सर्वथा निवृत्त थाय छे " अर्थात् " मोक्ष थाय छे " ए पांचमुं पद छे. " मोक्षनो उपाय छे " ए छठ्ठुं पद छे. गमे ते दर्शन, गमे ते तत्त्वज्ञान, के गमे ते धर्म आ छ पद शिवाय कोइ अन्यपद पर अभिप्राय बांधी शक्या नथी, अथवा तो बांधी शके तेम नथी, कारण के आ छ पदमां ज सर्व तत्त्वज्ञान आवी जाय छे. आम कहेवाना हेतुए श्रीमान् राजचंद्रे कह्यु छे के,

षट् स्थानक संक्षेपमां, षट् दर्शन पण तेह;
समजावा परमार्थने, कह्यां ज्ञानीए एह.

असंख्य शास्त्ररचनाओ, अनंत वादविवादो आ छ पद पर ज थयेल छे. आत्मानुं होवापणुं सिद्ध करनार दर्शनोए सहस्त्रगमे शास्त्रो योज्यां छे ए ज रीते आ छ पदने स्वीकारनार दर्शनोए गणत्री न थई शके तेवा प्रकारना संवादो प्रबोध्या छे न्यायशास्त्रो, तर्कशास्त्रो, अध्यात्मशास्त्रो अथवा बीजां कोइ पण शास्त्रोनु अस्तित्व आ छ पदने लइने ज थयुं छे.

आ प्रमाणे प्रस्तावना करी ए छ पदमांथी प्रत्येक पदनी सिद्धि शिष्य–गुरुना सवादरूपे करी छे प्रथम शिष्य जूदा जूदा प्रकारनी शंकाओ उद्भवावे छे, अने पछी गुरु तेनुं समाधान करे छे. पीसताळीशमा दोहराथी ते एकसोचार दोहरामां आ संवाद गोठव्यो छे.

प्रथम पीसताळीशथी अडताळीशमा दोहरा सुधीमां शिष्य प्रथमपद कहेतां ‘ आत्माना होवापणानी ’ जूदा जूदा प्रकारे शंका करे छे. पछी गुरु, ते प्रथम पदनी जूदी जूदी शंकाओनुं अठावनमा दोहरा-सुधीमां समाधान करे छे.

शिष्यना मुखमां मूकी प्रथम ग्रंथकार, आत्माना होवापणानी शंका उद्भवावे छे के, “ आत्मा दृष्टिमां आवतो नथी, के तेनुं बीजुं कंइ रूप जणातुं नथी, अथवा स्पर्शादि बीजा अनुभवथी पण जणातो नथी, माटे आत्मा अथवा जीवनु होवापणुं संभवतुं नथी, माटे देह ज आत्मा छे, अथवा इंद्रियो, प्राण के श्वासोच्छ्वास छे ते ज आत्मा छे, ए शिवाय अन्य कोइ आत्मा मानवानुं कारण नथी, केमके तेनुं वीजुं कंइ चिन्ह जणातुं नथी, वळी, जो आत्मा होय तो जेम घटपटादि पदार्थो जणाय छे तेम जणावो

जोइए; अने तेम तो नथी जणातो माटे आत्मानुं होवापणु नथी, अने जो आत्मानु होवापणुं नथी, तो पछी तेना मोक्षने माटे प्रयत्नो करवानी जरूर रहेती नथी. " आ प्रकारे चार दोहरामां शंका करवामां आवी छे.

गुरुमुखद्वाराए श्रीमान् आ शंकाओनुं समाधान आ प्रमाणे करे छेः " अनादि काळथी अज्ञानने लीधे देहनो परिचय छे, अर्थात् देहाध्यास छे तेथी आत्मा देह जेवो भासे छे, परंतु जेम तरवार अने म्यान बन्ने साथे छतां जूदां छे, तेम आत्मा अने देह जूदा छे, केमके बन्नेनां जूदां जूदां लक्षणो जणाय छे. आत्मा दृष्टि कहेतां आंखथी जोइ शकावा योग्य नथी, केमके ए तो दृष्टिनो पण जोनार छे. आत्मा स्थूळ सूक्ष्मादि रूपने जाणनार पदार्थ छे. वळी, सर्वनो बाध करतां कोइ पण प्रकारे जेनो बाध करी शकातो नथी एवो जे बाकी अनुभव रहे छे ते ज आत्मा छे. तात्पर्यके, देह अथवा तेना प्रत्येक अवयवना दृष्टातरीके ज्ञान गुणधारक कोइ एक पदार्थ अनुभवाय छे; परंतु ए ज्ञानगुणधारक पदार्थने जोनार तरीके कोइ पण बीजो पदार्थ अनुभवातो नथी. कर्णेंद्रिय, चक्षु-इंद्रिय आदि पांचे इंद्रियो पोतपोताना विषय प्रमाणे कोइ एक असाधारण पदार्थथी प्रेराय छे, परंतु तेमांनी एके इंद्रिय, पोताना विषय शिवाय–जोके पोतानो विषय पण आत्माविना अनुभवती नथी–बीजी इंद्रियना विषयने अनुभवती नथी, ज्यारे आत्मा ए पांचे इंद्रियोना विषयने जाणे छे. आ जे जाणनार पदार्थ ते ज आत्मा छे.

" आत्माने देह के इंद्रियो अथवा श्वासोच्छ्वासरूप प्राण जाणी शकता नथी; परंतु ते सौ आत्मानी सत्ता-पूर्वक प्रवर्त्ते छे, जो आत्मानी सत्तानी प्रेरणा न होय तो देहादि सर्व जडपणे पड्यां रहे छे. आवी जेनी असाधारणता छे ते ' आत्मा ' छे. जागतां होइए, के स्वप्नमां होइए, के निद्राधीन होइए परंतु त्यारे पण

आत्मा ते ते अवस्थाओथी जूदो ज जोवामां आवे छे, कारण के निद्रामां के स्वप्नमां होवा छतां पण ते निद्रादि अवस्थाओने जाणनार पदार्थ कोइक छे एम सर्वनो अनुभव छे. आवो जाणनारो जे पदार्थ ते चैतन्यमय छे, अने जे चैतन्यमय स्वभाववान् पदार्थ छे ते ज ' आत्मा ' छे. घट, पट वगेरे छे एम जे जाणे छे, ते ज ' आत्मा ' छे. वळी, जो ज्ञानगुण ए देहनो धर्म होय, तो दुर्बळ देहमां परम ज्ञान–बुद्धि–जोवामां आवे छे, अने स्थूळ देहमां अल्पज्ञान–बुद्धि–पण जोवामां आवे छे तेम न थवुं जोइए, तो तो स्थूळ शरीरमा परम बुद्धि, अने कृष शरीरमां अल्पबुद्धि होवी जोइए आ कारणे पण, देहनो गुण ज्ञान नथी, परंतु कोइ एक अन्य पदार्थनो ते गुण–ज्ञान–छे आ जे अन्य पदार्थ–ज्ञान गुणवान्–ते ज ' आत्मा ' छे. कोइ पण काळे–कोइ पण प्रयोगे–जेमां जाणवानो स्वभाव उत्पन्न थई शकतो नथी ते जड, अने जे सदाय जाणवाना स्वभावसहित छे ते चेतन. आवो जड अने चेतन बन्नेनो केवळ भिन्न स्वभाव छे. ते बन्ने भिन्न भिन्न स्वभाव एकपणुं पामी शके नहीं, माटे ' आत्मा ' अने ' देह ' बन्ने जूदा –अने जूदा जूदा स्वभाववाळा–पदार्थो छे. आवो देहथी जेनो जूदो पडतो स्वभाव छे ते ज ' आत्मा ' छे. विशेषमां ' आत्मा नथी ' एवी जे शंका करनार–शंकाज्ञान मतिज्ञान द्वारा थाय छे–पदार्थ ते ज 'आत्मा' छे."

आ रीते प्रथम पदमां शंकाद्वाराए 'चार्वाकदर्शन'-बृहस्पतिप्रणीत नास्तिक अभिप्राय अथवा जडवादनी दलीलो बतावी, पछी समाधानद्वाराए तेनुं खंडन करी, आत्मवादनुं मूळतत्त्व जे ' आत्मानुं होवापणुं ' ते सिद्ध कर्युं छे.

' आत्मानुं त्रणे काळ होवापणुं छे, ' अथवा ' आत्मा नित्य छे ' ए प्रकारनी सिद्धि करनार बीजा पदमां ग्रंथकार शिष्यना मुखमां 'आत्मानुं त्रणे काळ होवापणु नथी' ए विषेनी जूदी जूदी शंकाओ मूके छे.

"उपरना दोहराओमां आत्माना होवापणाविषेना जूदा जूदा प्रकारोनां समाधानो आत्माना होवापणानो संभव मनावे छे, परंतु ते आत्मा अविनाश–नित्य–होवानु संभवतुं नथी. देहना संयोगथी तेनी उत्पत्ति, अने देहना वियोगे तेनो नाश छे, माटे आत्मा त्रणे काळ होय–नित्य–छे एम नथी, अथवा तो वस्तुओमां क्षणे क्षणे फेरफार थाय छे माटे सर्व वस्तुओ क्षणिक होइ आत्मा त्रणे काळमां होनारो पदार्थ नथी." आ प्रमाणे शंका ओगणसाठमा दोहराथी ते एकसठमा दोहरापर्यंत शिष्यमुखे करावी, सद्गुरुमुखे बासठमा दोहराथी ते सीतेरमा दोहरा सुधीमां तेनुं समाधान कर्त्तापुरुष आ प्रमाणे करावे छेः

"देह परमाणुओना समूहोनी रचना छे; अने तेनो आत्माने संबंध मात्र छे. देह जड, रूपी अने दृश्य (बीजा कोइ दृष्टानो जाणवानो विषय) छे एटले ते पोते पोताने जाणतो नथी, अने जो पोते पोताने जाणी न शके; तो बीजा कहेतां चेतनने-चेतननी उत्पत्ति अने लयने–जाणी शके नहीं, देहना प्रत्येके प्रत्येक परमाणुनुं पृथ्थःकरण करतां ते जड ज सिद्ध थाय छे, तो ते जड परमाणुओना बनेला देहमांथी चेतननी उत्पत्ति थवायोग्य नथी, अने जो तेनी उत्पत्ति तेमां थवायोग्य नथी, तो तेमां नाश पण थवायोग्य नथी. देह स्थूळादि परिणामवान् छे, अने चेतन दृष्टा छे त्यारे तेना संयोगथी चेतननी उत्पत्ति थाय नहीं, अने उत्पत्ति न थाय तो नाश पण क्यांथी थाय? देहथी चेतननी उत्पत्ति थाय छे, अने नाश पण तेमां ज पामे छे एम जाण्युं कोणे ? कारण के जाणनारो पदार्थ जे चेतन तेनी उत्पत्ति देहनी पहेलां नथी, अने नाश तो ते पहेलां छे; त्यारे उत्पत्ति अने नाश थयो एवो अनुभव कोने थयो ? उत्पत्ति अने नाशनुं ज्ञान जेना अनुभवने विषे छे ते, तेथी जूदा होवाविना कोइ रीते पण संभवी शके नहीं, तात्पर्य के, उत्पत्ति अने लय थाय छे एवो कोइने पण अनुभव

थवायोग्य नथी. सयोग मात्रने अनुभवस्वरूप आत्मा जाणे छे, ज्यारे सयोगमात्रना स्वरूपनो विचार करतां एवो कोइ पण सयोग समजातो नथी के जेथी आत्मानी उत्पत्ति थाय छे. आ कारणथी आत्मा सयोगथी नहीं थयेलो एटले असयोगी, स्वाभाविक पदार्थ छे, अने जे स्वाभाविक पदार्थ छे ते 'नित्य' पण छे. वळी, कोइने कदी पण एवो अनुभव नथी के, जडथी चेतन उपजे छे, अने चेतनथी जड उत्पन्न थाय छे, एटले जेनी कोइ पण संयोगथी उत्पत्ति थती नथी, तेनो नाश पण कोइने विषे थाय नहीं, आ कारणे पण आत्मा 'नित्य' छे सर्पादि प्राणीओने विषे जन्मथी ज क्रोधादि प्रकृतिओ जोवामां आवे छे, वर्त्तमान देह तो ते प्राणीओए ते प्रकृतिओनो अभ्यास कर्यो जणातो नथी, अने ज्यारे वर्त्तमान देहे तेम कर्युं नथी, तो ते पूर्वे कर्यो होवो जोइए, जो वर्त्तमान देहनी पूर्वे ए अभ्यास थयो होय तो ते समये पण ते ज आत्मा होवो जोइए, अने आम होय तो ते 'नित्य' छे एम सिद्ध थाय छे ए जे पूर्वनो समय, तेने ज आपणे पूर्व पुनर्जन्म कहीए छीए एनी सिद्धि करे छे. अने पुर्नजन्म 'आत्मा'नुं 'नित्यत्व' दाखवे छे. जो आत्मा 'नित्य' न होय, तो बाल, युवान अने वृद्ध एवी शरीरनी त्रण अवस्था वदलाय छे, परंतु 'आत्मा' तो तेनो ते ज रहे छे तेम न बने. 'आत्मा' एनो ए ज रहे छे तेनुं ए प्रमाण के, बालवयमां थयेलो अनुभव, युवावयमां स्मृतिमां रहेलो जोवामां आवे छे, अने युवास्थामां थयेलो अनुभव वृद्धावस्थामां स्मृतिमां रहेलो अनुभवाय छे, जो 'आत्मा' एक नित्य वस्तु न होय तो तेम न बने. एटले जो आत्मा क्षणे क्षणे बदलातो होय, तो एक अवस्थामां थयेलो अनुभव बीजी अवस्थामां स्मरणमां न रहेवो जोइए, आ कारणथी आत्मा 'क्षणिक' नहीं, पण 'नित्य' छे एम स्पष्ट जणाय छे. वळी आत्मा क्षणिक नथी ते आ वातपरथी सिद्ध थाय छे: एक वचन बोलवा पूर्वे,

तेनो विचार करवो पडे छे. जे क्षणे विचार करवो पडे छे ते ज क्षणे ते विचार बोलातो नथी; अर्थात् पहेलु विचारवुं, अने पछी बोलवु थाय छे. जो बोलनार, विचार करती वेळा एनो ए ज न होय, तो तेणे जे विचार कर्यो होय छे ते रूप अनुभव बोलती वखते, ते विचार दर्शावी केम शके ? आ उपरांत, एक एवो सिद्धांत छे के, कोइ पण वस्तुनो कोइ पण काले सर्वथा नाश थाय नहीं, के कोइपण वस्तुनी कोइपण काले उत्पत्ति थाय नहीं. मात्र अवस्थांतर थाय. दृष्टांत तरी के, माटीनो घडो लई, तेने भागी तेनो सूक्ष्ममां सूक्ष्म भूको करी नांखीए, तो माटीना परमाणुओ समूहरूपे होय छे, ते छूटा छूटा थई जाय छे, परंतु तेनो सर्वथा नाश तो थतो ज नथी, तेम, घडारूपे माटीना पिडनो आकार थयो ते पहेलां पण ते वस्तु तो हती. तात्पर्य के, कोइपण वस्तुनी उत्पत्ति थती नथी, के कोइपण वस्तुनो नाश पण थतो नथी, अने जो आम छे, तो पछी 'आत्मा' नी 'उत्पत्ति' के आत्मानो 'नाश' पण होइ शके ज नहीं. आ कारणे पण 'आत्मा नित्य छे.' एम बताव्युं छे.

आ रीते सीतेरमा दोहरा पर्यंत 'आत्मानुं नित्यत्व' सद्गुरुमुखे ग्रंथकर्त्ताए सिद्ध कर्यु छे. जेओ विज्ञान-विद्याना अभ्यासीओ छे तेओने आत्माना होवापणानो तथा नित्यत्वनो सिद्धांत, कोइपण वस्तुनी उत्पत्ति के नाश थतो नथी ए प्रमाणपूर्वक बहु सरलताथी बेसी जवा योग्य छे. पाश्चात्य विज्ञानविद्यानो एक एवो सिद्धांत छे के,

"*Nothing* is produced and nothing is destroyed."

अर्थात् " कांइपण उत्पन्न थतुं नथी, अने कांइ पण नाश पामतुं नथी. " आ ज सिद्धांत श्रीजिननो छे; आ उपरांत ग्रंथकर्त्तापुरुषे आत्मानुं होवापणुं तथा नित्यत्व सिद्ध करवा विशेष विवेचन पण कर्युं छे.

आ रीते, जेओ आत्मानुं नित्यत्व स्वीकारता नथी एवा दर्शनोनो अने आत्माने क्षणिक माने छे एवो बौद्ध दर्शननो अभिप्राय प्रथम शिष्यना मुखे दर्शावी, पछी गुरुमुखद्वाराए, आत्मानुं नित्यत्व माननार दर्शनोनो, अभिप्राय सिद्ध कर्यो छे, अने आत्मानुं नित्यत्व नहीं स्वीकारनार एवा दर्शनोना अभिप्रायने परास्त करेल छे, तेम ज बौद्धोना क्षणिकवादने पण असिद्ध करी बतावेल छे.

त्रीजा पदमां आत्मा पोताना कर्मनो कर्त्ता नथी एवी शंका एकोतेरमा दोहराथी ते तोतेरमां दोहरापर्यंत शिष्य मुखे, ग्रथकारे करावी छे. जे शंका करावी छे ते आ प्रमाणे छे:- (१) जीव कर्मनो कर्त्ता नथी, कर्मना कर्त्ता कर्म छे, अथवा ते कर्म अनायासे थया करे छे, एम जो न स्वीकारीए, अने जीव पोते ज कर्मनो कर्त्ता छे एम कहीए, तो तो कर्म करवां ए जीवनो धर्म ठरे छे. (२) एम पण लागे छे के, जीव सदा असग छे, अने सत्वादि गुणनी प्रकृतिओ कर्मनो बंध करे छे. (३) अथवा ईश्वर जीवने कर्म करवानी प्रेरणा करे छे, तेथी ते वात ईश्वरनी इच्छारूप होवाथी जीव कर्मथी अबंध छे. आ कारणोथी जीव कर्मनो कर्त्ता कोइ प्रकारे संभवतो नथी, जो जीवने कर्मनो कर्त्ता कहेवामां आवे, तो ते तेनो स्वभाव–धर्म–छे एम मानवु जोइए. आ सघळा हेतुए, आत्मानो कर्मथी मोक्ष करवाना उपाय करवानी जरूर नथी ”

७४ मा दोहराथी ते ७८ मा दोहरा सुधीमां आ आशकाओनुं समाधान करवामां आव्युं छे, पण चेतननी कर्मने प्रेरणा न होय, तो कांइ जड कर्म स्वत: कर्मना कर्त्ता थइ शकता नथी, कारण के प्रेरणारूप प्रवृत्ति चेतनमां छे, पण कांइ जड पदार्थमां ते स्वभाव नथी, अने जो स्वभाव न होय, तो तेनुं परिणाम पण न होवुं जोइए. जो आत्मा कर्म करे नहीं, तो ते थाय नहीं, माटे कर्म अनायासे थाय छे एम

कहेवुं योग्य नथी. वळी, चेतननो स्वभाव पण ते छे नहीं, कारण के, चेतननो गुण–जड–होइ शके नहीं, जड स्वभाव तो जड पदार्थनो ज होय; आ कारणथी कर्म–जे जड छे ते आत्मानो स्वभाव अथवा धर्म नथी; जो धर्म अथवा स्वभाव ते होय तो तेनो अभाव थइ शके ज नहीं; ज्यारे ए अनुभव सिद्ध छे के, जो आत्मा कर्म करवानुं न धारे, तो थइ शकतां नथी. आथी कर्म ए जीवनो स्वभाव नथी एम ठरे छे. (२) आत्मा पोताना स्वभावे, तो असंग छे, तथापि तेने अनादिनो कर्मनो संबंध होवाथी ते संबंधरूप परभावे आत्मा केवळ असंग नथी, केमके जो असंग होत एटले के तेने कर्मनुं कर्त्तापणुं न होत, तो आत्मानी प्रतीति पहेलीथी ज होत, जे न होवाथी ज आ आशंकाओनो जन्म छे. (३) ईश्वरने जगत्‌नो अथवा जीवोना कर्मनो कर्त्ता कहेवो ए योग्य नथी, कारण के ईश्वर एटले जेनो शुद्ध स्वभाव थयो छे ते; अने जेनो शुद्ध स्वभाव थयो छे ते कर्मनो प्रेरक अथवा कर्मकर्त्ता गणीए, तो ते शुद्ध स्वभावी ईश्वर परभावनो कर्त्ता ठरे छे; अने तेथी तेनो शुद्ध स्वभाव कलंकित थतां तेनुं ईश्वरपणुं टळी जाय छे. आ कारणोथी एम समजवुं के, चेतन पोताना ज्ञानादि स्वभावरूप भानसहित होय छे त्यारे पोताना स्वभावनो कर्त्ता छे, अने ज्यारे पोताना स्वभावथी विमुख थइ परभावमां रमे छे त्यारे कर्मनो कर्त्ता छे."

आ संवादद्वाराए, प्रथम शिष्यमुखे सांख्यादि जे दर्शनो आत्मा कर्मनो कर्त्ता नथी एम कहे छे तेनी, अने नवीन वेदांत, नैयायिक, वैशेषिक, पातंजल, आदि दर्शनो ईश्वरने कर्मना कर्त्ता तरीके मानें छे तेनी दलीलो रजु करी, पछी सद्गुरुमुखे तेओने असिद्ध करी, पछी आत्मा कर्मनो कर्त्ता छे ए वातनुं योग्यत्व सिद्ध करी वताव्युं छे.

चोथुं पद " आत्माने कर्मनु भोक्तापणुं छे', ए संबंधीनुं छे. ७९ मा दोहराथी ते ८१ मा दोहरा

सुधीमां शिष्यना मुखमां आत्माने कर्मनु भोगववापणुं नथी एवी जूदा जूदा प्रकारनी शंकाओ मुकवामां आवी छे, पछी ८२ थी ८६ मा श्लोक सुधीमां तेनु समाधान गुरुना मुखमां ग्रंथकारे मूक्युं छे. शिष्य जे शका करे छे ते आ प्रमाणे छे'—

" जीवने कर्मनो कर्त्ता स्वीकारीए, परंतु भोक्ता ते होय एम संभवतुं नथी, कारण के, कर्म जे जड वस्तु छे ते तेनुं फल देवानुं क्यांथी समजी शके? जो ईश्वरने फलना आपनार मानीए, तो ते पण सभवतुं नथी, कारण के जो वीजाने फल आपवारूप प्रवृत्ति ईश्वर करे, तो तेनुं ईश्वरपणुं ज रहेतुं नथी, अने आवो ईश्वर ज्यारे सिद्ध थतो नथी त्यारे जगत्‌नो नियम पण कोइ संभवे नहीं, अने जो तेवो नियम न होय तो पछी, शुभ अथवा अशुभ कर्मनां भोगववानां स्थानक पण रहेतां नथी. आ कारणे आत्माने कर्मनुं भोक्तृत्व रहेतु नथी. "

आ शंकाओनुं समाधान जे प्रकारे मूकवामां आव्युं छे ते प्रकार आ प्रमाणे छे'—

" कर्म वे प्रकारना छे. एक भावकर्म, अने वीजां द्रव्यकर्म. आत्माने पोताना स्वरूपनी भ्रांति ते भावकर्म छे, अने आ भावकर्म तेटला माटे चेतनरूप छे, आ चेतनरूप भावकर्मने अनुसरी जीवनु वीर्य स्फुरायमान थाय छे, अने स्फुरायमान थतां द्रव्यकर्म के जे जड छे तेनी वर्गणा ग्रहण करे छे. झेर के अमृत पोताना स्वभावने जाणता नथी, परंतु जे तेनो उपयोग करे छे तेने तथाप्रकारे फल प्राप्त थाय छे. आ ज रीते शुभ अने अशुभ कर्म पोताना फलने जाणता नथी, छतां ते करनारने ते ते प्रकारनुं फल आपनार थाय छे. राजा अने रक एवा उच्च, नीचना जे भेद जोवामां आवे छे तेनुं कांइ पण कारण होवुं जोइए, अने विचारतां शुभ अने अशुभ कर्म शिवाय एवु बीजुं कोई कारण जोवामां आवतुं नथी के,

जे आवा भेद नीपजावनार होय. ईश्वर फल आपनार होवो जोइए एवी पण कशी जरूर नथी; झेर अने अमृतनी पेठे शुभ अने अशुभ कर्म पोत पोताना धर्मो प्रमाणे फळ आपे छे त्यां ईश्वरनी जरूर क्यां रही ? शुभ अने अशुभ कर्म पोताना स्वभाव प्रमाणे परिणामी रहे निःसत्व थई निवृत्त थाय छे. उत्कृष्ट शुभ अध्यवसायथी उत्कृष्ट शुभ गति, अत्यंत अशुभ अध्यवसाय ते अत्यंत अशुभ गति अने शुभाशुभ अध्यवसाय ते मिश्र गति छे. वस्तुतः जीवना जे जे प्रकारना परिणामविशेष ते ते प्रकारनी गति छे, अने आ जे गतिओ, ते कर्म भोगववानां स्थानको छे."

सांख्यादि जे दर्शनो आत्माने अकर्त्ता, अभोक्ता माने छे तेनी आ संवादमां असिद्धि करी, आत्मा कर्मनो भोक्ता छे एवो सिद्धांत प्रतिपादन कर्यो छे.

पांचमां पदमां जीवनो ते कर्मथी मोक्ष थइ शके छे एम सिद्ध कर्युं छे. ८७ अने ८८ मा दोहरामां शिष्यना मुखे ग्रंथकर्त्ताए नीचेनी शंकाओ आ प्रश्न संबंधे उद्भवावी छे:—

"जीव कर्मनो कर्त्ता अने भोक्ता, कह्यो तेम होय, परंतु, ते कर्मथी तेनो मोक्ष थवायोग्य नथी; कारण के अनंतकाल थयां ते कर्मो करवारूपी दोष चाल्यो आवे छे; ते वर्त्तमानमां पण विद्यमान छे. एटला माटे एम लागे छे के, शुभ कर्म भोगववाथी देवादि उच्च गतिओ भोगववी पडे, अने अशुभ कर्म भोगववाथी नरकादि नीच गतिओ भोगववी पडे; पण जीव सर्वथा तो कर्म रहित न थाय, अर्थात् मोक्ष न थाय."

आ शंकानुं समाधान त्यार पछीना ९१ सुधीना त्रण दोहरामां आ रीते कर्युं छे:-

"जेम शुभ अने अशुभ कर्मो जीवना करवाथी थाय छे; अने ते कर्मोनुं भोगववापणुं पण थाय छे;

तेम ज जो नवा कर्मो सर्वथा करवामां न आवे, अने प्राचीन सर्वथा भोगवी लेवामां आवे, तो जीव कर्मथी केवल मुक्त थइ शके छे; अने आ जे मुक्ति ते मोक्ष छे. अनंतकाल कर्मसहित व्यतीत कर्यो ते शुभाशुभ कर्म प्रत्ये जीवनी प्रीतिने लइ थयु छे, जो ते प्रीतिने बदले सर्वथा उदासीनता करवामां आवे तो कर्मफल छेदाई, परिणामे मोक्ष स्वभाव प्रकटे. देहनो फरीथी कोइ पण काले संयोग न थवो ते मोक्ष छे. जे मोक्षपद शाश्वत अने अनंत आत्मानंदरूप छे."

"मोक्षनो उपाय छे" ए छठ्ठा पदमां सिद्ध कर्यु छे. ९२ थी ९५ दोहरामां शिष्यमुखद्वाराए "मोक्षनो उपाय नथी एवी" आशकाओ आ प्रमाणे करवामां आवी छे —

"मोक्षपद छे एम स्वीकारीए तोपण ते प्राप्त करवाना सपूर्ण उपाय लागता नथी, कारण के अनंतकाळना कर्मो ते अल्पायुषी देहमा केम छेदी शकाय ? वळी, तेना उपायो जूदां जूदां दर्शनो, अने मतो अनेक अनेक प्रकारे कहे छे तो तेना सत्यासत्यनो निर्णय थइ शकवो संभवित नथी. वळी, ब्राह्मणादि अनेक जातिओ अने अनेक वेष छे, एमां कई जाति के क्या वेष द्वाराए मोक्ष थइ शके ए निश्चित करवु ए पण सभवित नथी आ कारणथी पांच पदोनी सिद्धि करवामां आवी ते पण, ज्यारे मोक्षनो उपाय न होय एटले निरर्थक छे."

आनु समाधान ९७ थी १०४ दोहरा सुधीमां सद्गुरुना मुखमां नीचेना वचनो मूकी ग्रंथकार करे छेः–

"कर्म भाव छे ते अज्ञान छे. मोक्ष भाव छे ते जीवना पोताना स्वरूपने विषे स्थिति थवी ते छे. अज्ञान अंधकारना जेवु छे. जेम प्रकाश थतां अंधकार नाश पामी जाय छे, तेम ज्ञानरूपी प्रकाश थतां, अर्थात् आत्मा अने कर्मनु सम्यक् भान थता अज्ञान नाश पामे छे. जे जे कारणोथी कर्म बधाय छे,

ते ते कारणोनो सर्वथा छेद करवामां आवे तो कर्म सर्वथा छेदाई मोक्ष प्रकटे छे. कर्म बांधवारूपी मार्ग, ते कर्मबंधनो मार्ग छे, अने कर्म छेदवारूपी मार्ग ते मोक्षनो मार्ग छे. राग, द्वेष, अने अज्ञान ए मुख्य कर्मनी ग्रंथिओ छे, अर्थात् एनाथी कर्म बंधाय छे, एनी सर्वथा निवृत्ति ते मोक्षमार्ग छे. आत्मा अविनाशी अने सर्व भावने प्रकशवारूप स्वभावमय होइ सर्व विभाव अने देहादि संयोगना आभासथी रहित छे. आ जे केवळ शुद्धात्मनुं पद पामवुं ते मोक्ष मार्ग छे. कर्म अनंत प्रकारनां छे. तेनो मुख्य आठ प्रकारमां समावेश करवामां आव्यो छे. आ आठ कर्मोमां मुख्य मोहनीय कर्म कह्युं छे. मोहनीय कर्मना बे भेद छे. दर्शनमोहनीय, अने चारित्रमोहनीय. परमार्थने विपे अपरमार्थबुद्धि, अने अपरमार्थने विषे परमार्थबुद्धि ते 'दर्शनमोहनीय.' तथारूप परमार्थने परमार्थ जाणीने आत्मस्वभावमां स्थिरता ते स्थिरताने रोधक एवा पूर्व संस्काररूप कषाय, अने नोकषाय ते चारित्रमोहनीय. दर्शन मोहनीय आत्मानुं खरुं भान थवा देतुं नथी, अने चारित्रमोहनीय वीतरागपणुं पामवा देतुं नथी. जो दर्शनमोहनीय जाय, तो सम्यग्दर्शन थतां आत्मस्वरूप समजाय; अने चारित्रमोहनीय जाय तो–दर्शनमोहनीय जतां चारित्रमोहनीय अवश्यमेव जाय छे–वीतरागता आवे छे. दर्शनमोहनीय एटले मिथ्यात्व. मिथ्यात्वनो प्रतिपक्ष आत्मानो सत्य बोध. चारित्रमोहनीय एटले रागादिक परिणाम. आ रागादिक परिणामनो प्रतिपक्ष वीतरागभाव छे. जेम अंधकारनो प्रतिपक्ष जे प्रकाश ते उत्पन्न थतां अंधकार नाश पामे छे, तेम दर्शनमोहनीय अने चारित्रमोहनीयना प्रतिपक्षो सम्यग्दर्शन अने वीतरागता उत्पन्न थये, दर्शनमोहनीय अने चारित्रमोहनीय जतां मोक्षस्वभाव प्रकटे छे. क्रोध, क्षमाथी हणाय छे, सरलताथी माया रोकाय छे, एम रागद्वेपना जे जे उत्तम प्रतिपक्षीओ उत्पन्न

करतां राग द्वेप जई वीतरागता उत्पन्न थाय छे, अने संपूर्ण वीगरागता ते संपूर्ण मोक्ष छे. क्रोधादिनो विरोध करनार क्षमादि छे एवो आपणने सर्वने प्रत्यक्ष अत्र ज अनुभव छे, एटले मोक्षना उपायनो संदेह करवानो अवकाश रहेतो नथी. "

आ पदमां सिद्धि कर्या प्रमाणेनो सिद्धांत ए श्रीजिननो सिद्धांत छे. केटलांक दर्शनो आत्मा छे एम माने छे, पण तेमांना केटलांक पाछा आत्मानु अनेकत्व, नित्यत्व के कर्मकर्त्तृत्वादि अने बंधमोक्षादि मानतां नथी जैन ए एवुं दर्शन छे के, जेमां संपूर्णपणे–अखंडपणे वस्तुनिरूपण कर्यु छे. बीजां दर्शनोए तेम करवानो यत्न कर्यो छे छतां तेमां अखड निराकरण जोइ शकातु नथी. दृष्टांत तरीके मीमांमको आत्मानु अनेकत्व मानतां नथी. मीमांसको एम माने छे के,

एकएवहिभूमात्मा, भूतेभूते व्यवस्थितः ।
एकधा बहुधा चैव, दृश्यते जलचंद्रवत् ॥

भावार्थ —एक ज आत्मा छे, अने ते प्राणीमात्रमां व्यवस्थित थयेलो छे, जेम चंद्रमा एक छतां पण हजारो घडामां जूदा जूदा हजारो चंद्रमा देखाय छे, तेम, आत्मा एक छतां पण प्रत्येक शरीरे भिन्न भिन्न देखाय छे.

बौद्धो आत्मानु नित्यत्व न स्वीकारतां क्षणिकपणुं स्वीकारे छे. बौद्धोनुं एम कहेवुं छे के, " पंचस्कधमां जे क्षणे क्षणे फेरफार थाय छे तेने लइने मात्र एक क्षणना ज आयुष्वाळो अथवा क्षण ज वार रहेनार एवो विज्ञान धातु छे," एटले एक देहमां पण क्षणे क्षणे आत्मा बदलातो होवाथी प्रत्येक आत्मामां तेवो भेद माने छे.

सांख्यदर्शनमां अनेक आत्माओ मानेला छे, एटले के प्रत्येके प्रत्येके शरीरे भिन्न आत्मा मानेलो छे; तथापि तेओना पांच ज्ञानेंद्रिय, पांच कर्मेंद्रिय, पांचभूत, पांच तन्मात्रा तथा मन, बुद्धि अने अहंकार एवा चोवीश तत्त्वोथी भिन्न एवा पचीशमा " आत्मा " ना तत्त्वने अकर्त्ता तथा अभोक्ता मान्यो छे.

योग-नैयायिक मतावलंबीओ आत्माने मानतां छतां ईश्वर जगत्नो कर्त्ता होइ, आत्माना कर्मनुं कर्त्तापणुं तेमां आरोपे छे.

वेदांत अने केटलाक सांख्यवादिओ, वळी, आत्माने अबंध माने छे, अने एम कहे छे के, आत्माने सत्वगुण, रजोगुण, अने तमोगुण बाधा करता नथी आत्मा एटले जे पुरुष ते निर्लेप छे. वेदांत एम कहे छे के, ब्रह्ममां बंधनो संभव नथी. बंध मोक्ष ए बधुं काल्पनिक छे. ब्रह्म शुद्ध छे, तेमां बंधनो संभव नथी."

अद्वैतमतवाळाओ आत्मा-एक ब्रह्मविना-बीजुं कांइ नथी; एम कही, अन्य द्रव्योनी गणना ज करता नथी. तेओ एम कहे छे के " एकं ब्रह्म द्वितीयं नास्ति " (एक ब्रह्मविना जगत्मां बीजुं कंइ नथी.) अर्थात् स्थावर जंगम वगेरे जे देखाय छे; अने नथी देखातु ते एक ब्रह्मरूप ज छे.

"विशिष्टाद्वैत, के जे विष्णु स्वामीनो प्रणीत करेलो छे तेओ, वळी, एम माने छे के, " एकः सर्वगतो नित्यः " अर्थात् यावत् मात्र सर्व शरीरधारीओमां एक अंशे परमात्मा व्यापी रह्यो छे. तेओनो मूल सिद्धांत एम जणाववामां आवे छे के " जीवात्मा परमात्मा थइ शके ज नहीं, पण जीवात्मा सेवक अने परमात्मा स्वामीपणे छे. "

निंबाकरस्थापित द्वैताद्वैत मत एम कहे छे के " कथंचित् स्थावर अने जंगम आत्मामां भेद छे. "

आ रीते, जूदां जूदां दर्शनो अने मतो आत्मानुं स्वरूप एकांतिक रीते कहे छे. जैनदर्शननो अभिप्राये

सर्वांगे अनेकांतिक छे, अने आ ज कारणथी जैननु बीजुं नाम 'अनेकांत दर्शन' पण कहेवाय छे. जैनमां आत्माने अनेकांत दृष्टिए गायो छे, अने अनेकात दृष्टिए गातां षड्दर्शनोने जैनना जूदा जूदा अंगो कह्यां छे. महात्मा आनंदघनजीए पोतानी "चतुर्विंशति" ग्रथमां चमत्कारिक रीतिए कह्युं छे के,

षट्दरशन जिन अंग भणीजे,
न्यास षडंग जो साधे रे;
नमिजिनवरना चरणउपासक;
षड् दरशन आराधे रे.

अर्थः—छ ए दर्शनोने श्रीजिनदर्शनना अंगरूप जाणवां. जो प्रभुनां अगरूप छए दर्शनोनी स्थापना करीने तेमना दर्शनने आराधे, तो श्रेष्ठ एवा एकवीशमा श्रीनमिनाथ तीर्थंकरना चरणोनी सेवा करनार, छ ए दर्शनोने सेवे.

जैनदर्शनरूपी कल्पवृक्षना पगरूप सांख्य अने योग (नैयायिक) दर्शनो जणावतां कह्युं छे के,

जिन सुरपादप पाय वखाणो;
सांख्य जोग दोय भेदे रे;
आतमसत्ता विवरण करता,
लहो दुग अंग अखेदे रे.

सांख्यदर्शन आत्माने अकर्त्ता अने अभोक्ता कहेल छे: जैन दर्शनमां (१) व्यवहार अने (२) निश्चय एम बे नय छे. निश्चयनयनी अपेक्षाए आत्माने कर्मबंध मानेलो नथी. योगमतवाला पण सहज विचारद्वारा मनने शांत करवाथी आत्मा क्लेशकर्मादिथी छूटो थइ शके छे एम कहे छे. जैनना निश्चयनये आ वातनी पुष्टि अपाय छे. आ कारणोथी सांख्य अने योगमतने जैनना पगरूप अंग कह्या छे.

सुगतमीमांसक—सुगतबुद्धप्रणीत बौद्धदर्शन अने जैमिनिमुनिप्रणीत पूर्वमीमांसा तथा व्यास मुनिना वेदांतने श्रीजिनदर्शनना अंग कह्या छे:

भेद अभेद सुगत मीमांसक,
जिनवर दोय कर भारी रे;
लोकालोक अवलंबन भजिये,
गुरुगमथी अवधारी रे.

बौद्ध मतमां आत्माने क्षणिक मान्यो छे, अने जैनदर्शनमां पण स्वभावमां जूदा जूदा ज्ञेयना ज्ञानरूप अने विभावमां कर्मने आश्रित पुद्गलथी प्राप्त थयेल शरीरोमां पर्यायने क्षणे क्षणे बदलाता मान्या छे. एटले बौद्धदर्शने फेरफार मूळना फेरफाररूप मान्यो छे आ रीते द्रव्यार्थिक नये नही, पण पर्यायार्थिक नये बौद्ध दर्शन खरुं छे. आ अपेक्षाए लेतां बौद्धने जैनना एक हाथरूप अवयव कहेल छे. आ ज रीते मीमांसाने पण बीजा हाथरूप अवयव कहेवानु प्रयोजन ए छे के, तेओ जे एम कहे छे के, "आत्मा एक छे, सर्वगत छे, नित्य छे, त्रिगुण बाधक नथी," ते वात जैनना निश्चयनये कोइ अपेक्षाए सिद्ध छे, केमके जैन अनेक आत्मा मानतां छतां एम कहे छे के, सर्व आत्मानी सत्ता समान छे, अने आत्माने निश्चयनय-

पृथक बंध नथी. आत्मा सत्ताए समान ए अपेक्षाए एक, परंतु ते प्रत्येक छे ए वात जैन सिद्ध करे छे.

आम संक्षेपे कह्या प्रमाणे जैनदर्शन अनेकांत होई ते बीजां दर्शनोना अभिप्रायो कोइ अपेक्षाए मान्य राखी वस्तुत: तेओनो एकांतिक अभिप्राय स्वीकारतुं नथी. उदाहरण तरीके, ते बौद्ध कहे छे तेम एकांत क्षणिक आत्मा मानवानुं नीचेना कारणेथी साहस करतुं नथी

बौद्ध दर्शन जे एम कहे छे के " नित्य एवो आत्मा छे ज नहीं, पण पंचस्कंधथी प्राणी मात्रनी प्रवृत्ति थाय छे पंच स्कंध विषेना विज्ञान स्कंधथी ज्ञान थाय छे आ विज्ञान स्कंध अने बाकीना चार स्कंधो क्षणे क्षणे बदलाय छे. आ कारणे " अहं-हुं" एवा ज्ञाननो आधार–अधिकरण जे विज्ञान स्कंध ते क्षणे क्षणे बदलाय छे. ज्ञानमां क्षणे क्षणे फेरफार थवाना कारणे आत्मा क्षण मात्र जीवनार छे, " तेने जैनदर्शन एम कहे छे के " जो आत्मा क्षणवार पर्यंत जीवी शकनार होय, अने दरेक क्षणे जो बदलातो होय, तो पछी " सुख अने दुःख " एवुं कहेवुं ते मात्र शब्दप्रलाप छे क्षणवारनी स्थितिमां सुख के दु:खनो अनुभव शो संभवे ? आ कारणे बंध अने मोक्ष पण मात्र कल्पनारूप थशे एक क्षणवारमां कोइ क्रिया थाय, अने तेनो बंधन पडे एम बनवुं असंभवित छे, अने ज्यारे बंध न होय तो पछी मोक्ष पण क्यां रह्यो ? आ कारणे आत्माने क्षणिक मानतां, बंध, मोक्ष, सुख अने दुःखनो पण अभाव थशे. अने बुद्धदेवे, तो संसारने दुःखरूप कही तेमाथी मुक्त थवा चार सत्य कह्यां छे, तेनी जरूर शी रही ? एम जे कहेवामां आवे छे के, बुद्धदेवे ओगणपचास दिवस सुधी समाधिसुख अनुभव्युं हतुं ते वात आथी असत्य ठरे छे, केमके जो बुद्धदेव ए पोते एक अखंड आत्मा न होय, अने क्षणे क्षणे बदलाता आत्माओ होय तो ए सर्वांग समाधिसुख छे एम तेनो ते बुद्धदेवनो एक आत्मा केम अनुभवी शके ?

अद्वैतवादीओ एकांते विश्वने ब्रह्म–एक आत्मा–कहेता जे एम कहे छे के " जेम सूर्यनुं प्रतिबिंब

पाणीना घडाओमां पडे छे, तेम ब्रह्मनुं प्रतिबिंब मायामां पडे छे, पण ब्रह्म पोताना स्वरूपमां अखंड एक रस तदाकारपणे सदैव लीन छे, प्रतिबिंबमां थता विकारोथी आत्मा अबाधित छे," तेने जैनदर्शन पोतानो अनेकांत अभिप्राय दर्शावतां एम कहे छे के "कारणविना कार्य होतुं नथी. जगत्‌मां सुखी अने दुःखी जे जणाय छे तेनुं मूळ कारण पूर्वकृत कर्म छे. ज्यारे आत्मा स्वरूपमां लीन होय त्यारे ते कोई अपेक्षाए शुभाशुभ कर्म करी शकतो नथी, अने तेथी ते शुभाशुभ कर्मनो भोक्ता पण थइ शकतो नथी; एटले कर्या-वगर आत्मा जे शुभ अथवा अशुभ भोगवे, तेने अकृतागमदूषण लाग्युं. तेम ज आ संसारमां केटलाक व्रत, नियम, तप, जप, परोपकार वगेरे शुभ अने केटलाक तेथी विपरीत अशुभ कर्मो करे छे. जो आनुं फळ तेना कर्त्ताने न मळे, तो कृतविनाश कहेतां "करेलुं निष्फळ" एम परिणाम थयुं.

आ ज रीते, आत्माने अबंध माननारा सांख्य अने वेदांतीओ आत्माने अबंध मानतां छतां, साधनरूपी क्रिया निरूपण करे छे, तेनी पछी शी जरूर एम जैनदर्शन पूछे छे.

तात्पर्य के, जैन ए अनेकांतदर्शन होइ, कोइ अपेक्षाए अन्य दर्शनोए जणावेला अभिप्रायोने स्वीकारी, बीजी अपेक्षाए तेनो निषेध करे छे जेम श्रीमान् आनंदघनजी महाराज, परमतखंडन अने स्वमत-मंडननी पद्धतिथी, एटला माटे दूर रह्या छे के, जे मतनुं खंडन करवामां आवे छे ते मतना अनुयायीओ सत्य स्वीकारवाने बदले उलटा विमुख थाय छे, तेम श्रीमान् राजचंद्रे आ "आत्म-सिद्धिशास्त्र" मां आ वादविवादनां स्थळोए पण एवी सूक्ष्म काळजी राखी छे के, कोइ पण मतनुं एक अक्षर पण प्रत्यक्ष खंडन न करतां, जे अभिप्रायो पोते प्रतिपादन करवामां आत्मश्रेय मान्युं छे, ते अभिप्रायो सरलतापूर्वक अने वस्तुरूपे जणाववा. श्रीमान् हरिभद्रसूरिए पोताना "षड्दर्शनसमुच्चय" नामक ग्रंथमां जूदा जूदा छ दर्शनोनुं स्वरूप बतावतां जेम प्रत्येक दर्शनना प्रतिनिधि (वकील) तरीके

निष्पक्षपातबुद्धि राखी छे, तेम श्रीमान् राजचंद्रे पण प्रत्येक धर्ममतनुं स्वरूप बतावता तेना प्रतिनिधि तरीके काम लीधुं छे विशेषमा तेओए वर्तमान समयने अनुकूळ गणाय एवी एक शैली ए राखी छे के, कयो अभिप्राय कया धर्मनो छे एम अगोप्यपणे बताव्युं नथी, केमके चोकस मतनो फलाणो मत छे अने ते अयोग्य छे एम बताववामा आवे, तो ते मतना अनुयायीने ग्रंथकारने पोताना अभिप्रायपर आग्रह छे एम लागी आवी, तेनो स्वीकार करवानु मन थतुं नथी, एटलु ज नहीं पण ग्रथकार पक्षपाती लागे छे. आवु न थाय ते माटे ग्रथकारे अतिशय काळजी राखी छे जूदा जूदां दर्शनोना आ छ पदमां अभिप्राय आव्या छे, पण ते वाचतां विचारतां कोइने न लागे के ग्रथकारनो चोकस अभिप्रायप्रत्ये अभाव छे जेम एक वखत एक वकीलने वादी तरफथी वकील तरीके रोकवामां आव्यो होय, अने बीजी वखत प्रतिवादी तरफथी रोकवामा आवे तो वादीनी वखते वादीनो अने प्रतिवादीनी वखते प्रतिवादी तरफनो दावो सरखी ज काळजीथी रजु करे छे, तेवी ज रीते आ ग्रथकारे पण कर्युं छे दाखला तरीके, ज्यारे ' आत्मा नित्य नथी ' एवा विचारना प्रतिनिधि तरीके दावो रजु कर्यो छे त्यारे कोइने किंचित् मात्र एवी असर न थाय के, तेमां एक वकील तरीके कोइपण प्रकारनी न्यूनता राखी छे आ ज रीते ज्यारे तेना निषेधकर्त्ताना वकील तरीके उभा रह्या छे त्यारे तेना तरफनी न्यूनता राखी नथी. हिंदमां ज्यारे आवा खंडनमडनरहिततावाळा ग्रथो अने शास्त्रोनी रचना थशे त्यारे ज धर्मना झगडाओ दूर थवानुं एक मुख्य कारण उत्पन्न थशे.

आ छ पदपूर्वक जीवनी स्थिति स्वीकारनार एवां जैनदर्शने ससारी जीवना बे प्रकार कह्या छे: स्थावर अने त्रस. स्थावरना पांच भेद छे. १ पृथ्वीकाय, २ अप्काय, ३ तेजस्काय, ४ वायुकाय अने वनस्पतिकाय. त्रसना चार भेद छे: १ द्वींद्रिय २ त्रींद्रिय ३ चतुरिंद्रिय ४ पंचेंद्रिय. स्थावर जीवोने एक ज

इंद्रिय होय छे, अने ते एक इंद्रिय ते 'स्पर्शेंद्रिय' छे. शंख, जळो, कृमि, आदि जीवो बे इंद्रियवान् छे. जे बे इंद्रियो ते स्पर्शेंद्रिय (शरीर) अने रसनेंद्रिय (मुख) छे कीडी, घीमेळ, जू, उधी, मंकोडा, मांकडना प्रकारना जीवोने त्रण इंद्रियो छे. जे त्रण इंद्रियो ते शरीर (स्पर्शेंद्रिय), मुख (रसनेंद्रिय) अने नासिका छे. माखी, मच्छर, वींछी, तीड, भमर, कंसारी आदि जीवो चार इंद्रियवान् प्राणीओ छे: जे चार इंद्रियो ते शरीर, मुख, नासिका अने चक्षु एम छे. तिर्यञ्च्, मनुष्यादि जीवो पंचेंद्रिय छे. जे पंचेंद्रियो शरीर, मुख, नासिका, चक्षु अने कान छे. स्थावर जीव बे प्रकारना छे: सूक्ष्म अने बादर.

उपरोक्त स्थावर अने त्रस जीवमां समुच्चये छ शक्ति (पर्याप्ति) छे: आ छ शक्तिओ ते (१) आहार ग्रहण करवानी शक्ति, (२) शरीर रचवानी शक्ति (३) इंद्रिय करवानी शक्ति (४) श्वासोच्छ्वास उत्पन्न करवानी शक्ति (५) भाषा बोलवानी शक्ति (६) अने मनशक्ति. जे जीवोने आ छ शक्तिओ-मांथी जेटली जेटली शक्तिओ होवी जोइए तेटली पूर्ण करे नही तेने जैनपरिभाषामां 'अपर्याप्त' कहेवामां आवे छे. स्थावर जीवोमां (१) आहार (२) शरीर, (३) इंद्रिय, अने श्वासोच्छ्वास ए चार शक्तिओ अथवा पर्याप्तिओ होय छे, अर्थात् स्थावर जीवोमा ए चार शरीरधर्मो रह्या छे. बे इंद्रियवान् जीवोमां आहार, शरीर, इंद्रिय, श्वासोच्छ्वास अने भाषा ए पांच पर्याप्तिओ छे. त्रण अने चार इंद्रिय जीवोने पण ए ज पांच पर्याप्तिओ छे. पंचेंद्रिय जीवोमां आ पांच उपरांत छठ्ठी मन पर्याप्ति छे.

जैननुं "जीवनशास्त्र" एटलुं तो सूक्ष्मताथी भरपूर छे के, अत्यारे विद्या (Science) जीवना होवा संबंधमां जे शोधखोल करे छे ते करतां अनंतगुणो प्रकाश तेओए सहस्र वर्षो पहेलां पोताना ज्ञानद्वाराए पाड्यो हतो. लवण पाषाणादि पृथ्वी संबंधीनी जे जे जातिओ छे तेने 'पृथ्वीकाय' एवुं जैनमां पारिभाषिक नाम अपायुं छे. जैन कहे छे के, आ पाषाणादि एक शरीर इंद्रिय सहितना जीवो छे. पाश्चात्य

विज्ञान (Science)ए तो पृथ्वीकायना जीवो विषे जे शोधखोल करी छे ते हजी अपूर्ण छे 'पृथ्वीकाय' संबधी जैनतत्त्वदर्शीओए जे अद्भुत स्वरूप दर्शाव्युं छे तेनो अभ्यास, जो पाश्चात्य विज्ञानवेत्ताओ करे, तो तेओने पोतानी शोधमां महान् सहायता ते आपी शके तेम छे. पाणीमां जीवो छे ए संबंधी जो के हवे पाश्चात्यविज्ञाने शोध करी छे, तथापि जैनदृष्टिए हजु ते घणी ज अधूरी छे. हिमजल, भूमिजल, अंतरिक्षजल, ए सचेतन छे. तेम ज शीतकालमां नदिआदिने विषे बहु शीत पडतां, बहु, अने अल्पशीत पडतां, उष्मा देखाय छे, ते पण सजीव छे. तलावादिमाथी नीकळतो बाष्पसमूह पण जीवहेतुक ज छे. जो पाश्चात्यविज्ञान कोइपण 'काय' ना जीवोनी शोधमा सौथी विशेष निर्बळ होय, तो 'तेजस्काय' ना जीवो माटे छे. जैनशास्त्रोमां तेजस्कायनुं जे सूक्ष्मस्वरूप दर्शाव्युं छे ते ए विज्ञानवेत्ताओने परम शिक्षकरूप नीवडे तेम छे. अग्नि, दीपप्रकाश, आदि 'तेजस्काय' कहेवाय छे. आमां जीव होवानु जैन निरूपण करे छे. 'वायुकाय' एटले वायुसंबधीना जीवो. जूदा जूदा प्रकारना पवन, हवा वगेरेमां जीवो छे. तेनो विस्तार जैने अद्भुत भावे कर्यो छे. वनस्पति संबधीना जीवोनी सूक्ष्मता जैनोए केवी दर्शावी हशे, ते जैनोनो व्यवहारमां पण तेना रक्षण माटेनो उपयोग विचारवा सूचन करवुं ते बस थशे. वनस्पतिकाय शिवायना पृथ्व्यादि चार कायोना जीवो असंख्य जैनोए कहेल छे. ज्यारे वनस्पतिना प्रत्येक अने साधारण एवा बे भेद पाडी, प्रत्येक वनस्पतिमां असंख्य जीव अने साधारणमां अनंत जीव कहेल छे. कंदमूलादि अनंत जीववान् कहेवाय छे.

पृथ्व्यादि स्थावर जीवोथी मांडी पंचेंद्रिय सुधीना त्रस जीवो जे जे प्रकारनी गति धारण करे छे ते जीवना कर्मनी साथेना संबंधने लइने छे. आ जे कर्मो ते जड एवा परमाणुपुद्गलना बनेलां छे. आत्मा–जीव–ने आ परमाणु पुद्गलरूप कर्मोनो योग बीजां चार पदार्थो–द्रव्योविना परिणाम पामी शकता नथी.

इंद्रिय होय छे, अने ते एक इंद्रिय ते 'स्पर्शेंद्रिय' छे. शंख, जळो, कृमि, आदि जीवो बे इंद्रियवान् छे. जे बे इंद्रियो ते स्पर्शेंद्रिय (शरीर) अने रसनेंद्रिय (मुख) छे. कीडी, घीमेळ, जू, उधी, मंकोडा, मांकडना प्रकारना जीवोने त्रण इंद्रियो छे. जे त्रण इंद्रियो ते शरीर (स्पर्शेंद्रिय), मुख (रसनेंद्रिय) अने नासिका छे. माखी, मच्छर, वींछी, तीड, भमर, कंसारी आदि जीवो चार इंद्रियवान् प्राणीओ छे: जे चार इंद्रियो ते शरीर, मुख, नासिका अने चक्षु एम छे. तिर्यच्, मनुष्यादि जीवो पंचेंद्रिय छे. जे पंचेंद्रियो शरीर, मुख, नासिका, चक्षु अने कान छे. स्थावर जीव बे प्रकारना छे: सूक्ष्म अने बादर.

उपरोक्त स्थावर अने त्रस जीवमां समुच्चये छ शक्ति (पर्याप्ति) छे: आ छ शक्तिओ ते (१) आहार ग्रहण करवानी शक्ति, (२) शरीर रचवानी शक्ति (३) इंद्रिय करवानी शक्ति (४) श्वासोच्छ्वास उत्पन्न करवानी शक्ति (५) भाषा बोलवानी शक्ति (६) अने मनशक्ति. जे जीवोने आ छ शक्तिओमांथी जेटली जेटली शक्तिओ होवी जोइए तेटली पूर्ण करे नही तेने जैनपरिभाषामां 'अपर्याप्त' कहेवामां आवे छे. स्थावर जीवोमां (१) आहार (२) शरीर, (३) इंद्रिय, अने श्वासोच्छ्वास ए चार शक्तिओ अथवा पर्याप्तिओ होय छे; अर्थात् स्थावर जीवोमां ए चार शरीरधर्मो रह्या छे. बे इंद्रियवान् जीवोमां आहार, शरीर, इंद्रिय, श्वासोच्छ्वास अने भाषा ए पांच पर्याप्तिओ छे त्रण अने चार इंद्रिय जीवोने पण ए ज पांच पर्याप्तिओ छे. पंचेंद्रिय जीवोमां आ पांच उपरांत छठ्ठी मन पर्याप्ति छे.

जैननुं "जीवनशास्त्र" एटलुं तो सूक्ष्मताथी भरपूर छे के, अत्यारे विद्या (Science) जीवना होवा संबंधमां जे शोधखोल करे छे ते करतां अनंतगुणो प्रकाश तेओए सहस्र वर्षो पहेलां पोताना ज्ञानद्वाराए पाड्यो हतो. लवण पाषाणादि पृथ्वी संबंधीनी जे जे जातिओ छे तेने 'पृथ्वीकाय' एवुं जैनमां पारिभाषिक नाम अपायुं छे. जैन कहे छे के, आ पाषाणादि एक शरीर इंद्रिय सहितना जीवो छे. पाश्चात्य

विद्या (Science)ए तो पृथ्वीकायना जीवो विषे जे शोधखोल करी छे ते हजी अपूर्ण छे. 'पृथ्वीकाय' संबधी जैनतत्त्वदर्शीओए जे अद्भुत स्वरूप दर्शाव्यु छे तेनो अभ्यास, जो पाश्चात्य विज्ञानवेत्ताओ करे, तो तेओने पोतानी शोधमां महान् सहायता ते आपी शके तेम छे. पाणीमां जीवो छे ए संबधी जो के हवे पाश्चात्यविद्याए शोध करी छे, तथापि जैनदृष्टिए हजु ते घणी ज अधूरी छे हिमजल, भूमिजल, अंतरिक्ष-जल, ए सचेतन छे. तेम ज शीतकालमां नदिआदिने विषे बहु शीत पडतां, बहु, अने अल्पशीत पडतां, उष्मा देखाय छे, ते पण सजीव छे. तलावादिमांथी नीकळतो बाष्पसमूह पण जीवहेतुक ज छे. जो पाश्चात्य-विद्या कोइपण ' काय ' ना जीवोनी शोधमा सौथी विशेष निर्बळ होय, तो ' तेजस्काय ' ना जीवो माटे छे जैनशास्त्रोमां तेजस्कायनुं जे सूक्ष्मस्वरूप दर्शाव्युं छे ते ए विज्ञानवेत्ताओने परम शिक्षकरूप नीवडे तेम छे. अग्नि, दीपप्रकाश, आदि ' तेजस्काय ' कहेवाय छे आमां जीव होवानु जैन निरूपण करे छे. ' वायुकाय ' एटले वायुसंबधीना जीवो जूदा जूदा प्रकारना पवन, हवा वगेरेमां जीवो छे. तेनो विस्तार जैने अद्भुत भावे कर्यो छे. वनस्पति संबधीना जीवोनी सूक्ष्मता जैनोए केवी दर्शावी हशे, ते जैनोनो व्यवहारमां पण तेना रक्षण माटेनो उपयोग विचारवा सूचन करवुं ते बस थशे. वनस्पतिकाय शिवायना पृथ्व्यादि चार कायोना जीवो असंख्य जैनोए कहेल छे. ज्यारे वनस्पतिना प्रत्येक अने साधारण एवा बे भेद पाडी, प्रत्येक वनस्पतिमां असंख्य जीव अने साधारणमां अनंत जीव कहेल छे. कंदमूलादि अनंत जीववान् कहेवाय छे.

पृथ्व्यादि स्थावर जीवोथी मांडी पंचेद्रिय सुधीना त्रस जीवो जे जे प्रकारनी गति धारण करे छे ते जीवना कर्मनी साथेना संबधने लइने छे. आ जे कर्मो ते जड एवा परमाणुपुद्गलना बनेलां छे. आत्मा–जीव–ने आ परमाणु पुद्गलरूप कर्मोनो योग बीजां चार पदार्थो–द्रव्योविना परिणाम पामी शकतां नथी.

आ चार द्रव्यो ते, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय अने काळ. जेम मत्स्यना संचारनुं अपेक्षा कारण जल छे, तेम जीव तथा पुद्गलने गतिपणे परिणामतां जे अपेक्षा कारण ते धर्मास्तिकाय छे. जो के जीव तथा पुद्गल परमाणु पोतानी शक्तिओथी चाले छे, तथापि तेओने मत्स्यने जेम जल, तेम गतिसहायक गुणप्रदाता धर्मास्तिकाय छे. धर्मास्तिकाय अने अधर्मास्तिकायनुं स्वरूप सदृश छे, तथापि तेमां एक तफावत छे के, ज्यारे धर्मास्तिकाय गतिसहायक छे त्यारे अधर्मास्तिकाय स्थिति-सहायक छे. धर्मास्तिकाय, आत्मा अने पुद्गलने गति करवामां सहायक छे, त्यारे अधर्मास्तिकाय आत्मा अने पुद्गलने स्थिति करवामां सहायक छे. जेवी रीते वटेमार्गु, मार्गे चालतां स्थिति तो पोते ज करे छे, परंतु मार्ग–भूमिना आश्रय विना स्थिति करी शकतो नथी, तेम जीव अने पुद्गल, स्थिति तो पोते करे छे, परंतु तेमां आ अधर्मास्तिकाय द्रव्य सहायकपणे परिणमे छे. आकाश ए जीव अने पुद्गलने अव-काश आपे छे. काळनो स्वभाव सर्वने प्रत्यक्ष छे.

जैनदर्शननो एवो सिद्धांत छे के, आ जे जीव, पुद्गल, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय अने काल ए छ द्रव्यो आ विश्वनी स्थितिना कारणो छे. आ छ द्रव्यो–पदार्थो–उपरांत कोई पण बीजो पदार्थ नथी के जे विश्वस्थितिनुं कारण होय. आ स्थळे ए संबधी विवेचन करवानो अवकाश नथी, परंतु जेओ पश्चात्य विज्ञानविद्यामां विलास माने छे तेओने ते अत्यंत सूक्ष्मताथी अभ्यास करवानुं सूचन करवुं योग्य छे, केमके तेओने तेथी अद्भुत चमत्कृतिवाळी विश्वस्थिति जैने सिद्ध करी छे एम जणाशे.

जीव कर्मना योगे जे मनुष्यादि गति करे छे ते काल, स्वभाव, नियति, पूर्वकृत अने पुरुषकार (उद्यम) ए पांच निमित्तोथी ज करी शके छे. ए होय त्यारे ज सुख दुःखादि फळ भोगवाय छे.

१०१ मा दोहरामां जीवनी साथे अनंत प्रकारना कर्मोनो संबंध छे ते कर्मोना मुख्य आठ प्रकार

कर्यानु जे जणाववामा आव्यु छे ते आठ कर्मो ते आ प्रमाणे छे' (१) ज्ञानावरणीय (२) दर्शनावरणीय (३) वेदनीय (४) मोहनीय (५) आयु (६) नाम (७) गोत्र अने (८) अतराय. सामान्य विशेपात्मक वस्तुविषे नाम, जाति, गुण क्रियादिक विशेष योजनासहित वस्तुस्वरूप जे द्वाराए जाणीए, ते ज्ञान. आ ज्ञानने आवरण करनारू जे कर्म ते 'ज्ञानावरणीय कर्म' छे. दर्शन एटले देखवुं जे द्वाराए सामान्य विशेपात्मक वस्तुविषे सामान्याशे नाम, जाति गुण, क्रियादिक विशेष योजनारहित कोई एक वस्तुधर्मी छे–एवो अव्यक्त बोध ते दर्शन–निराकार उपयोग. आ जे दर्शन तेने आवरणकर्त्ता जे कर्म ते 'दर्शनावरणीय' कर्म छे जे वडे भलुं भूडु, सुख, दु ख वेदीए ते 'वेदनीयकर्म' छे. जे कर्म मोह उत्पन्न करावनारू छे ते सामान्य शब्दोमां कहेता 'मोहनीय कर्म' छे. आत्माने कल्याणकर्त्ता मार्गने न ग्रहण थवा दे, अने अकल्याणकर्त्ता मार्ग ग्रहण थवा दे ते 'मोहनीय कर्म' छे. जे कर्म वडे आयुप् स्थिति छे ते 'आयु कर्म, बीजां कर्मो तो वर्तमान भवमा बंधाय अने बीजा भवोमां भोगवाय, परंतु आ कर्म, तो वर्तमान भवमा बंधाय अने भावि भवमा भोगवाय. गति, जात्यादिक उदयिक पर्याय वडे जीवने नमावे, शुद्ध स्वरूपने पण हीनपणेमां ओळखावे, ते 'नामकर्म', जेवी रीते, कोई एक अनार्य कुळमां देह धरेल जीव, महा पुण्यशाली, अत्यंत दयामय, पाडित्यपूर्ण होवा छतां, अने उच्च जातिना जीव करतां विशेष उत्तम होवा छतां तेनी जातिनी ओळख अनार्य कुळनी गणाय छे आ जे आवा कुळमां गणावारुप जन्म आपनारूं जे कर्म ते 'गोत्रकर्म'नो स्वभाव छे जे वडे दान, लाभ, भोग, उपमोग, वीर्यादि आत्मानी लब्धिओ छे तेने हणे अथवा विघ्न करे ते 'अंतराय' कर्म छे

आ जे आठ कर्मो ते चार प्रकारना बंध सहित छे. प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, रसबंध अने प्रदेशबध स्थिति, रस अनुभाग, अने प्रदेशबधना समूदायने 'प्रकृतिबंध' कहेवामां आवे छे. अध्यवसाय विशेषे

करी ग्रहण करेलां जे कर्मोना दलीक, तेओना कालनो नियम ते स्थितिबंध. कर्मना शुभअशुभ अथवा घातिक, अघातिक रस तेने अनुभाग, अर्थात् रसबंध कहेवामां आवे छे. स्थिति अने रसनी अपेक्षाविना कर्मपुद्गलोना दलिकनुं ग्रहण करवुं तेने प्रदेशबंध कहेवामां आवे छे. जेम वातरोगहारक वस्तुना बनावेला मोदकवडे वातरोग नाश पामे छे; अने पित्तादि स्वभाववान् मोदकनो स्वभाव पित्तादिनो नाश करवानो छे, तेम कोइ कर्म ज्ञानने, कोइ दर्शनने आवरण करनारू होय छे. आवो जूदा जूदा प्रकारनो कर्मप्रभाव तेने 'कर्मप्रकृति' कहेवामां आवे छे. वळी जेम कोइ मोदक, एक दिवस पर्यंत, कोइ बे दिवस पर्यंत रही शके छे, अर्थात् स्थिति करी शके छे तेम, कोइ कर्म अमूक काळ सुधी स्थितिमां रही शके छे. आ जे अमुक काळ सुधी कर्मनी स्थिति थवी तेने 'कर्मस्थिति' कहेवामां आवे छे. जेम मोदकमां स्निग्धता ओछी वधती होय छे, तेम कर्म पण स्निग्ध, मृदु, अथवा स्थूळ के सूक्ष्म होय छे. एने कर्मनो 'रसबंध' कहेवामां आवे छे. जेम, मोदकमां कोइ एक पसली प्रसृति, कोइ बे पसली एम होय छे, तेम कर्ममां कोइ अल्प प्रदेशी होय छे, कोइ विशेष प्रदेशी होय छे. आ जे 'प्रदेश' तेने कर्मनो 'प्रदेशबंध' कहेवामां आवे छे. प्रत्येके प्रत्येक कर्म आ चार बंध सहित होय छे आ चार बध विना कर्म होइ शके नहीं.

आ रीते, अष्ट कर्म सहित आत्मानी स्थिति जणावी, तेनी मुक्ति केम थइ शके तेना प्रकार गुरूना मुखे बतावी १०५ दोहरामां एम कह्यु छे के, पोताना धर्म के संप्रदायनो आग्रह–मोह–छोडी दइ, आ षट पदना आकारे कहेल आत्ममार्ग साधशे, तेओने देहधारण करवानुं घणुं अल्प थइ जशे श्रीजैनदर्शननुं एम कहेवुं छे के, एक वखत सम्यग्दर्शननी प्राप्ति थइ, अने पछी तेने वमी नांखवामां न आवे, तो घणामां घणा पदर भवे मोक्षे जाय. ग्रंथकर्त्ताए आ दोहराना अर्थमा एम लख्यु छे के "अने जे उत्कृष्टपणे आराधे, तेनो ते भवे पण मोक्ष थाय, अत्रे ते वातनो विरोध नथी." ग्रथकारना आ विचारो, "आ काळमां मोक्ष थइ शके के

नहीं ?" ए प्रश्नो निर्णय करवामां सहायक छे के नहीं ए जोईए: जैनदर्शननुं एम एक सामुदायिक कथन छे के, आ काळमां मोक्षप्राप्ति थइ शके नहीं " श्रीमान् राजचद्रना उक्त विचारो "जे उत्कृष्टपणे आराधे तेनो ते भवे पण मोक्ष थाय" आ काळमां मोक्षप्राप्ति न थइ शके एवी जैनवातने प्रतिकूळ नथी, केमके उत्कृष्ट आराधनानुं अहीं तो माहात्म्य गायुं छे. आवी उत्कृष्ट आराधना जे स्थळे थाय ते स्थळे मोक्ष पण थवो जोईए. आवी उत्कृष्ट आराधना आ क्षेत्रे आ काळे थइ शके एवां सजोगो नथी, पण महाविदेह क्षेत्रे थइ शके एम श्रीजैनमानीनता छे, तो आ काळमां मोक्ष न थइ शके एम कहेवा करता आ काळमां "आ क्षेत्रे" मोक्ष थइ शके एवा सजोगो जणाता नथी एम कहेवु ते जैनमानीनताने विशेष सानुकूळ गणाय.

१०६ ठा दोहरामां शिष्यप्रत्ये गुरु कहे छे के, आ विचारपूर्वक पूछायेला छ प्रश्नोना उत्तरना सपूर्णपणे स्वीकारमां मोक्षमार्ग छे, अर्थात् एमांथी एकना पण उत्थापनमां मोक्षमार्ग नथी. आ छ पदपूर्वक मोक्ष-मार्गनु अनुसरण सर्वांगे करवामां आवे, तो गमे ते जाति होय के, गमे ते वेष होय तो पण ते मुक्ति मेळवी शके छे, एम १०७ मा दोहरामां कह्युं छे. आ स्थळे, ग्रथकर्त्ताए, अन्य दर्शनीओने, तेओना वेषादिनो निषेध न कर्यो लागे, तेम जैनदर्शनना वेषनो आग्रह ग्रथकर्त्ताने छे एम पण न लागे ए प्रकारनी योजनापूर्वक

जाति वेषनो भेद नहीं, कह्यो मार्ग जो होय;
साधे ते मुक्ति लहे; एमां भेद न कोय.

कही, जैनदर्शनना चारित्रनी स्थापना आवी जाय तेम कर्यु छे, कारण के आ छपदनी स्थापना करनार ए श्रीजैनदर्शन छे, अने जे वस्तुनी जे स्थापना करनार होय तेने उपदेशेलुं ते वस्तु प्राप्त करावनारू साधन होवुं जोइए, ए आवश्यक परिणामरूप स्थिति छे.

जेम ग्रथकारनी योजना आम प्रतिपादन करवानी जणाय छे, तेम एवा प्रकारनी पण सभवे छे के, जेओ आ छ पदपूर्वक वस्तुने पाम्या छे तेओने वेषादि व्यवहारमां दुराग्रहबुद्धि रहेवी न जोइए श्रीमान् आनंदघनजी, सपूर्णपणे आ छ पदने सिद्ध करनार एवा वीतरागमार्गने अनुसरनार महा पुरुष हता, तथापि तेओश्रीना समयमां जेओने वेषादि व्यवहारमां मोहबुद्धि थइ गइ हती, तेओ, तेओश्री (आनंदघनजी) प्रत्ये, तेवी मोहबुद्धि उत्पन्न करावबा प्रयत्न करतां जोइने, आनदघनजी महाराजे, कफनी आदि वेषनुं अंगीकरण कर्यानी केटलेक स्थळे दंतकथा चाले छे. तात्पर्य के, आ छ पदना सिद्धकर्त्ता श्रीजिननी आज्ञानुसार चारित्रसेवन ए ज कर्त्तव्य छे, परतु ए चारित्रसेवनार्थे निर्णीत करेलां उपकरणोमां पाछी, ससारनी वस्तुओमां जे प्रकारनी मोहबुद्धि थइ जाय छे एम पण थवी न जोइए.

१०८ मा दोहरामा मोक्षजिज्ञासु जीवोनुं स्वरूप दर्शाव्युं छे. जेओने विषे क्रोधादि कषायो पातळा पड्या छे, जेओने आत्मानो मोक्षकरवा शिवायनी अन्य कोइ इच्छा नथी, जेओने ससारना भोगो प्रत्ये उदासीनता वर्त्ते छे, अने जेओने सर्व जगजतुप्रत्ये अंतरथी दया ज वर्त्ते छे तेओने मोक्षमार्गना जिज्ञासु कहेल छे. वर्त्तमानमां जेओ धर्मजिज्ञासुओ पोताने माने छे तेओए, आ धोरण पोतानी सन्मुख राखवु जोइए.

१०९ मा दोहराथी ते ११२ दोहरा सुधीमा आ " आत्मसिद्धिशास्त्र " ने विषे त्रण प्रकारना समकीत उपदेश्यां छे – (१) आप्त पुरुषना वचननी प्रतीतिरूप, आज्ञानी अपूर्व रुचिरूप, स्वछंद निरोधपणे आप्त पुरुषनी भक्तिरूप, ए प्रथम समकीत कह्यु छे. (२) परमार्थनी स्पष्ट अनुभवांशे प्रतीति ते समकीतनो बीजो प्रकार कह्यो छे. (३) निर्विकल्प परमार्थअनुभव ते समकीतनो त्रीजो प्रकार कह्यो छे.

अन्यत्र पण, आ विषयपरत्वे कर्त्तापुरुषे कह्यु छे के, "पहेलुं समकीत त्रीजा समकीतनुं कारण छे. बीजु समकीत त्रीजा समकीतनुं कारण छे. त्रणे समकीत वीतराग पुरुषे मान्य कर्यां छे. त्रणे समकीत उपासवा-

योग्य छे, सत्कार करवायोग्य छे, भक्ति करवायोग्य छे त्रणे प्रकारना समकीतमांथी गमे ते प्रकारनुं समकीत आवे तोपण वधारेमां वधारे पंदर भवे मोक्ष थाय, अने जो ते समकीत आव्या पछी जीव वमे तो वधारेमां वधारे अर्धपुद्गल परावर्त्तन काळसुधी संसारपरिभ्रमण थइने मोक्ष थाय. तीर्थंकरना निर्ग्रंथ निर्ग्रंथीओ श्रावक, अने श्राविकाओ सर्वने—जीव, अजीवनुं ज्ञान हतु तेथी समकीत कह्यु छे एम कंइ नथी तेमांना घणा जीवोने मात्र साचा अतरग भावथी तीर्थंकरनी, अने तेमना उपदेशेला मार्गनी प्रतीतिथी पण समकीत कह्यु छे. ए समकीत पाम्या पछी जो वम्युं न होय तो वधारेमां वधारे पदर भव थाय. साचा मोक्षमार्गने पामेला एवा सत्पुरुषनी तथारूप प्रतीतिथी सिद्धांतमां पण घणे स्थले समकीत कह्युं छे ए समकीत आव्याविना जीवने घणुं करीने जीव अने अजीवनु यथार्थ ज्ञान थतुं नथी जीव, अजीवनुं ज्ञान पामवानो मुख्य मार्ग ए ज छे. ”

केवळ निजस्वभावनुं, अखंड वर्त्ते ज्ञान;
कहिये केवळज्ञान ते, देह छतां निर्वाण.

आ ११३ मा दोहरामां केवळज्ञाननु स्वरूप बतावतां ग्रंथकर्त्ता पुरुषे देहस्थितिए निर्वाणअनुभव थाय एम कह्यु छे. श्रीमान् राजचद्रे आ पदनो अर्थ आ प्रमाणे भर्यो छे. “ सर्व आभासरहित आत्मस्वभावनुं ज्या अखंड एटले क्यारे पण खडित न थाय, मंद न थाय, नाश न पामे एवु ज्ञान वर्त्ते तेने केवळज्ञान कहिये छीए जे केवळज्ञान पाम्याथी उत्कृष्ट जीवन्मुक्तदशारूप निर्वाण देह छतां ज अत्रे अनुभवाय छे ”

जैनशास्त्रकारोए केवळज्ञाननी व्याख्या जूदा जूदा घणा प्रकारे करी छे, छतां सर्वनु कथन एक ज स्थाने आवीने उभुं रहे छे. दृष्टांततरीके, श्री “कर्मग्रथ”ना कर्त्तापुरुष आ प्रमाणे व्याख्याओ आपे छे.—

१. " केवळ एटले एक अर्थात् मत्यादि ज्ञाननी अपेक्षा विनानुं."
२. " केवळ एटले आवरण मलकलंकपंकरहित."
३. " तदावरण कर्मनो निःशेषपणे नाश थतां उपजतुं ज्ञान."
४. " केवळज्ञान जेवो अन्य कोइ पदार्थ न होइ जे अनन्य सदृश ते."
५. " अनंत ज्ञेय पदार्थोने जाणे माटे केवळज्ञान."
६. " जेनो लोकालोकविषे क्यांय पण व्याघात थतो नथी ते केवळज्ञान."
७. " भूत, भविष्य तथा वर्त्तमान काळनो यथावस्थित भाव जेथी प्रकट थाय ते केवळज्ञान."

आ रीते केवळज्ञाननी व्याख्या जूदा जूदा प्रकारे करवामां आवी छे, तथापि वर्त्तमानमां लोकसमूहने विषे तो " भूत, भविष्य तथा वर्त्तमान काळनो यथावस्थित भाव जेथी प्रकट थाय तेने केवळज्ञान " ए प्रकारनी सातमी व्याख्यामां जणाववामां आवेली वस्तुने मुख्यपणे केवळज्ञान समजवामां आवे छे, अर्थात् लोकसमूहनी दृष्टिमां तो मुख्यपणे मात्र आ व्याख्या रही छे; तेनी दृष्टिमां वीजी व्याख्याओ प्रत्ये लगभग उपेक्षा ज थइ गइ जणाय छे. श्रीमान् राजचंद्र व्याख्या करे छे के, " सामान्य विशेप-चैतन्यात्मदृष्टिमां परिनिष्ठित शुद्धि ते केवळज्ञान " तेमां उपर्युक्त सर्व व्याख्याओनो समावेश थाय छे. आत्माने अनादिकाळथी अष्टकर्मनो सबंध छे तेनो ज्यारे सर्वथा क्षय थाय त्यारे आत्मा निजस्वभावमां सपूर्णपणे–अखंडपणे–रमे छे. आवी आत्मानी निजस्वभावरमणनी सपूर्ण स्थिति ज्यारे थाय त्यारे केवळज्ञान थयुं कहेवाय. आ प्रकारे केवळज्ञाननी उत्पत्ति थयेथी उपर्युक्त भिन्न भिन्न व्याख्याओ प्रमाणे तेनुं परिणाम प्राप्त थाय छे, अर्थात् श्रीमान राजचंद्रे करेली व्याख्या प्रमाणे आत्मा पोताना निज-स्वभावमां ज अखंडपणे वर्त्ते त्यारे तेने "कर्मग्रंथ" कारे करेली पहेली व्याख्या प्रमाणे मति, श्रुतादि ज्ञानी

अपेक्षानी जरूर रहेती नथी, तेम ज बीजी व्याख्याप्रमाणे आत्मा अष्टकर्मना आवरणरूप मलथी रहित थाय छे वळी, त्रीजी व्याख्याप्रमाणे सर्व प्रकारनां घाती कर्मो क्षय करतां करतां बाकी रहेल मात्र केवळज्ञानावरणीय कर्मनो सर्वथा नाश थाय छे, चोथी व्याख्या प्रमाणे केवळज्ञान अनन्यसदृश्य थाय छे. पांचमी प्रमाणे अनंतज्ञेय पदार्थोने समये समये जाणे छे, छठ्ठी प्रमाणे लोकालोकने विषे क्यांय पण एनो व्याघात थतो नथी, अने सातमी व्याख्या प्रमाणे भूत, भविष्य तथा वर्त्तमान काळनो यथावस्थित भाव प्रकट थाय छे. तात्पर्य के, आत्मा ज्यारे सपूर्णपणे पोताना ज्ञानस्वभावमां रमे छे, अने परस्वभावथी रहित थाय छे त्यारे भूतभविष्यादिनो यथावस्थित भाव जाणवो इत्यादि तेना सहज परिणामरूप थाय छे पोताना ज्ञानस्वभावनु सपूर्ण रमण ते आत्मारूप स्वच्छ निर्मल वस्तु छे. अने भूतभविष्यादिना यथावस्थित भाव जाणवारूप तेम ज जूदी जूदी व्याख्याओमां करेल निरूपण प्रमाणे थवारूप जे स्थिति, ते तेनां परिणामो छे. आपणा समुदायमां शास्त्रकारोए करेली अनेक व्याख्याओमांथी मात्र एक ज व्याख्या उपर वर्त्तमानमां दृष्टि रहेली छे, तेम न थतां सर्व व्याख्याओ उपर दृष्टि रहेवी जोइए, जो के आनो अर्थ एम नथी के, सातमी व्याख्या प्रत्ये उदासीनता जोइए सर्व व्याख्याओ प्रत्ये सपूर्ण समान लक्ष्य रहेवो जोइए.

अत्र ज्यारे जैनदृष्टिए केवळज्ञानना विवेचनमां उतरवु पड्यु त्यारे जैनदर्शने कहेलां बीजां चार ज्ञानसबधमां थोडांक वचनो लखवां एटला माटे उपयोगी थइ पडशे के, तेथी केवळज्ञाननो संबंध निहाळी शकाशे. आ चार ज्ञान ते आ प्रमाणे छे १. मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान. ३ अवधिज्ञान. ४. मन पर्यवज्ञान. आ दरेकनी व्याख्या आ रीते छे—

मतिज्ञानः—जेथी मनन थाय अथवा जे मनन करे ते मतिज्ञान, अथवा इंद्रिय तथा मनोद्वाराए निश्चित वस्तु जेवडे जणाय, अथवा मनाय ते मति योग्य देशने विषे अवस्थित वस्तु तेने विषय करनारां

मन तथा इंद्रियो होय छे, तेमां निमित्तकारण ज्ञान छे. ते ज्ञान आत्माने थयुं होय ते मतिज्ञान. श्रीजिनागममां मतिज्ञानने 'आभिनिबोधिकज्ञान' कह्युं छे. भगवान् देवर्द्धिक्षमाश्रमणे कह्यु छे के,

नाणं पंचविहं पन्नतं, तंजहा आभिणिबोहिय नाणं।
सुयनाणं ऊहिनाणं मणपय्यवनाणं, केवलनाणं ॥

भगवान् देवर्धिक्षमाश्रमणना आ वचननो अर्थ करतां टीकाकारे 'आभिनिबोधिक ज्ञान' नो अर्थ आम कर्यो छे· " वस्तु, योग्य देशावस्थान अपेक्षी इंद्रिय मनोनिमित्त स्वस्वविषयनी अपेक्षाए जे बोध थाय छे ते 'आभिनिबोधिकज्ञान.'

श्रुतज्ञान·-'श्रुतम्' (श्रवणं) एटले जे संभळाय ते 'श्रुत'. श्रुतज्ञाननी व्याख्या "कर्मग्रंथना" कर्त्तापुरुषे आ रीते करी छे:-पूर्वापर पर्यालोचनस्वरूप व्यंजनपर्यायविशिष्ट मतिपूर्वक ज्ञान ते 'श्रुतज्ञान.'

अवधिज्ञानः-इंद्रियादिकनी अपेक्षाविना आत्माने विषे जे साक्षात् अवधान एटले अर्थ ग्रहण थाय ते 'अवधिज्ञान' आ व्याख्या श्रीकर्मग्रंथकारनी छे. श्रीमान राजचंद्रे जे व्याख्या आपी छे ते आ छे· "इच्छितपणे अवलोकन करतो आत्मा इद्रियना अवलंबनवगर अमुक मर्यादा जाणे ते अवधि."

मनःपर्यवज्ञानः-'कर्मग्रथ'ना प्रणेता पुरुष मन.पर्यवज्ञाननी स्वरूपता आ प्रकारे कहे छे:-" मनुष्यलोकने विषे रहेलां संज्ञी पंचेद्रिय जीवोना मनोगत भावनुं जाणवु ते मनःपर्यवज्ञान." आ ज्ञाननी श्रीमान् राजचंद्रनी व्याख्या आ छे: " अनिच्छित छतां मानसिक विशुद्धिना बळवडे जाणे ते मनःपर्यव."

जैनतत्त्ववेत्ताओनु एम कथन छे के, मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव अने केवळ एम पांच प्रकारे ज्ञानना भेद छे. आपणने सामान्यपणे मति अने श्रुत ज्ञान होय छे. पांच इंद्रियो तथा मनद्वाराए

आपणे जे निश्चित वस्तु जाणी शकीए छीए, अथवा मानीए छीए ते ' मतिज्ञान ' छे. मतिज्ञानने आवरण करनारां जे कर्म तेने जे परिमाणमां टाळेल होय छे ते परिमाणामां मतिज्ञान प्रकाशे छे ' श्रुतज्ञान ' एटले पूर्वापर सांभळेलुं ज्ञान . मतिज्ञानविना श्रुतज्ञान होय नहीं. एम कहेवामां आवे छे के, मुख्यपणे वर्त्तमानमां आ बे ज्ञाननो आ क्षेत्रे संभव छे. ' अवधिज्ञान ' आत्मानी विशेष विशुद्धि थये थाय छे. ज्यारे इद्रियोना अवलबन वगर इच्छितपणे अवलोकन करतो आत्मा अमुक मर्यादा जाणे त्यारे तेने अवधिज्ञान छे एम जाणवु. ' मनःपर्यवज्ञान ' आत्माने त्यारे थयु कहेवाय के ज्यारे अनिच्छित छतां मानसिक विशुद्धिना बळवडे जणावुं थाय त्यारे. ' केवळज्ञान ' एटले मात्र ज्ञान ज. ते शिवाय बीजु कंइ ज नही सर्वथा–सर्व प्रकारे–रागद्वेषनो क्षय थाय त्यारे ज ' केवळज्ञान ' थाय. ज्यां केवळज्ञान छे त्यां रागद्वेष नथी, अथवा ज्यां रागद्वेष छे त्यां केवळज्ञान नथी.

श्रीमान् राजचंद्रना एक श्रोता मति, श्रुत अने मनःपर्यवज्ञाननो भेद आ रीते दर्शावे छेः–

" मतिज्ञान अने श्रुतज्ञानथी जे कइ जाणी शकाय छे तेमां अनुमान साथे रहे छे, परन्तु तेथी आगळ, अने अनुमानविना शुद्धपणे जाणवुं ए मनःपर्यवज्ञाननो विषय छे, एटले मूळ तो मति, श्रुत अने मनः-पर्यवज्ञान एक छे, परतु मनःपर्यवमां अनुमानविना मतिनी निर्मळताए शुद्ध जाणी शकाय छे मतिनी निर्मळता थवी ए संयमविना थइ शके नहीं, वृत्तिने रोकवाथी संयम थाय छे, अने ते संयमथी मतिनी शुद्धता थइ शुद्ध पर्यायनुं जे जाणवुं (अनुमानविना) ते मनःपर्यवज्ञान छे. मतिज्ञान ए लिंग एटले चिन्हथी जाणी शकाय छे, अने मनःपर्यवज्ञानमां लिंग अथवा चिन्हनी जरूर रहेती नथी मतिज्ञानथी जाणवामां अनुमाननी आवश्यकता रहे छे, अने ते अनुमानने लइने जाणेलुं फेरफाररूप पण थाय छे. ज्यारे मनःपर्यवने विषे तेम (फेरफाररूप) थतुं नथी, केमके तेमां अनुमानना सहाय-

पणानी जरूर नथी. शरीरनी चेष्टाथी क्रोधादि पारखी शकाय छे; परंतु तेनुं (क्रोधादिनुं) मूळ स्वरूप न देखावासारू शरीरनी विपरीत चेष्टा करवामां आवी होय, तो ते उपरथी पारखी शकवुं–परीक्षा करवी–दुर्घट छे, तेम ज शरीरनी चेष्टा कोइ पण आकारमां न करवामां आवी होय, छतां तदन चेष्टा जोयाविना तेनु 'क्रोधादिनुं' जाणवु ते अति दुर्घट छे, छतां ते प्रमाणे परभारूं थइ शकवु (जाणवुं) ते ज मनःपर्यवज्ञान छे."

पुन', कह्युं छे के, "मति स्फुरायमान थइ जणायेलुं जे ज्ञान ते 'मतिज्ञान;' अने श्रवण थवाथी थयेलुं जे ज्ञान ते श्रुतज्ञान,' अने ते श्रुतज्ञाननुं मनन थइ प्रगम्युं त्यारे ते पाछुं मतिज्ञान थयुं, अथवा ते 'श्रुतज्ञान' प्रगम्याथी वीजाने कहेवामां आव्युं त्यारे ते ज कहेनारने विषे 'मतिज्ञान' अने सांभळनारने माटे श्रुतज्ञान थाय छे तेम 'श्रुतज्ञान' 'मति' विना थइ शकतु नथी, अने ते ज 'मति' पूर्वे 'श्रुत' होवु जोइए. एम एक वीजाने कार्यकारणनो संवध छे"

ज्यारे आत्मस्वरूपनी सम्यक् प्रतीति थाय त्यारे मति, श्रुत, अने अवधि ए त्रण ज्ञानने तथाप्रकारना ज्ञान कहेवामां आवे छे, ज्यारे आत्मस्वरूपनी सम्यक् प्रतीति न थइ होय अने मिथ्यात्व वर्त्तु होय त्यारे तेने मतिआदि अज्ञान कहेवामां आवे छे.

केटलाक आचार्य महाराजोनो अभिप्राय एवो छे के, ज्यारे केवळज्ञान प्राप्त थाय छे त्यारे मति-आदि चार ज्ञाननुं होवापणुं रहेतुं नथी, केमके मतिज्ञानावरणीयथी मांडी केवळज्ञानावरणीय कर्मोनो क्षय थवाथी मात्र आत्माने एक केवळज्ञान ज रहे छे. अन्य आचार्य एम कहे छे के, सयोगीकेवलीने विषे पण, मति श्रुतादिक ज्ञान छे, पण ते केवळ फळशून्य छे आ संवधमां आ आचार्यजी एम

दृष्टांत घटावे छे के, सूर्यनो उदय थया पछी पण नक्षत्रादि होय छे, छतां ते नि.प्रयोजक होवाथी विविक्षा करवायोग्य नथी आ ११३ मा दोहरामां जे छेल्लु चरण छे के,

"देह छतां निर्वाण."

ते परथी एम स्वाभाविक रीते प्रश्न उद्भववा योग्य छे के, जैनदर्शन पण जीवन्मुक्त दशा स्वीकारे छे के शु? श्री जैनदर्शन जीवन्मुक्तदशानो स्वीकार करे छे ते आ रीतेः ते कहे छे के, जीवना गुण, ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप स्वभाव तेनी तरतमताए करीने चौद गुणस्थानक पाडी शकाय आ चौद गुणस्थानकोमांथी तेरमा गुणस्थानके ज्यारे जीव पहोंचे त्यारे तेने जो के मन, वचन अने कायाना योग होय छे, तथापि तेणे 'ज्ञानावरणीय,' 'दर्शनावरणीय,' 'मोहनीय' अने 'अतराय' (आनु स्वरूप पूर्वे कहेवाई गयुं छे) ए चार कर्मो (जेने जैनपरिभाषामां 'घनघातिकर्म' कहेवामा आवे छे)ने व्यवच्छेद करी नांखेला होवाथी भवबीजनो आत्यंतिक नाश कर्यो होय छे, अने 'वेदनीय,' 'आयुः' 'नाम' अने 'गोत्र' ए चार कर्मोने एवा सत्वहीन करी नांख्या होय छे के, जेम बळेली सीदरी सत्वरहित थइ मात्र आकारवत् रहे छे आ प्रकारे ज्यारे तेरमुं गुणस्थानक जीवने वर्त्ते छे त्यारे तेने मन, वचन अने कायाना योग होय छे, छतां केवळज्ञाननी उत्पत्ति थाय छे चौदमा एटले छेल्ला गुणस्थानकमां अने तेरमा गुणस्थानकमां भेद मात्र एटलो ज छे के, तेरमामां पोताना सत्वरहित मन, वचन अने कायानो योग होय छे, अने चौदमामा ए योग होतो नथी. बाकी ज्ञान संबधी तेरमा अने चौदमा गुणस्थानक बन्नेमां समानता छे. तेरमा गुणस्थानके देहनो संबंध छे एटले जैनपरिभाषा ते आत्माने "सयोगीकेवली" कहे छे, अने चौदमा गुणस्थानके देहनो योग नथी एटले ते आत्माने

" अयोगीकेवली " कहे छे. चौदमा अने तेरमा गुणस्थानकोनी शक्तिना संबंधमां कांइ पण भेद नथी, समानता छे, एटले तेरमा गुणस्थानके वर्त्तता एवा सयोगीकेवलीना आत्माने देह छतां पण निर्वाण ज छे. एम जे आ ग्रंथकर्त्तापुरुषे कह्यु छे ते योग्य लागवुं जोइए, अने तेथी जैनदर्शन, आ अपेक्षाए जीवन्मुक्तता स्वीकारे छे एम कहेवुं ते पण योग्य ज गणाय, केमके जीवन्मुक्तता ते कहेवाय छे के, जेमां देह छतां मुक्तिसदृश्यपणुं होय छे; तेरमा गुणस्थानके देह छतां केवळज्ञान थयुं होय छे अने ज्यां केवलज्ञान थयुं त्यां राग द्वेष सर्वथा होता ज नथी, अने आत्मानी मुक्ति रागद्वेषथी देह छतां थइ एटले जीवन्मुक्तता पण सिद्ध थइ गणाय.

श्रीजैनदर्शने जे चौद गुणस्थानको कह्यां छे तेमां प्रथमनुं 'मिथ्यात्वगुणस्थानक' ज्यां सुधी होय त्यां सुधी सम्यग्दर्शन थतुं नथी प्रथम गुणस्थानक जेने " मिथ्यात्वगुणस्थानक " कहेवामां आवे छे ते ज्यारे जीवने होय छे त्यारे देहादिने विपे आत्मबुद्धि, अने आत्मभावने विषे देहबुद्धि एवो विपर्यास रहे छे. बीजा गुणस्थानकने " सास्वादानसम्यक्दृष्टिगुणस्थानक " कहेवामां आवे छे. उपशमभावे जे सम्यक्त्व थाय छे एटले के जे सम्यक्त्व पाछु वमावायोग्य छे तेवुं सम्यक्त्व एक वेळा थयाबाद पाछुं ते वमाई जाय छे, अर्थात् प्रथम मिथ्यात्वगुणस्थानके जीव आवे छे आ जे उपशम सम्यक्त्व वम्या पछीनी अने मिथ्यात्वगुणस्थानके आववा पहेलांनी वच्चेनी जे आत्मानी स्थिति ते बीजुं " सास्वादान गुणस्थानक " छे एम कहेवामां आवे छे के, जेम क्षीरनु भोजन लीधुं होय अने ते वमी नांखतां ते क्षीरनो जेवो स्वाद मुखमां रहे, तेम आ बीजे गुणस्थानके सम्यग्दर्शन वमी नांखतां अने पुन प्रथम गुणस्थानके जतां पहेलां वमातां क्षीरना प्रकारना आत्मभाव रहे छे श्रीजिने प्ररूपेल आत्मभावपर रुचि, अरुचि बन्ने न होय, परतु मिश्रता होय एवो जे अध्यवसाय ते त्रीजुं " मिश्रदृष्टि

गुणस्थानक" छे चोथा गुणस्थानकने " अविरतिसम्यग्दृष्टिगुणस्थानक " कहेवामां आवे छे आ गुणस्था-
नके आत्मा ने देह बन्ने भिन्न प्रतीत थाय छे, अर्थात् आत्माना अनुभवनी शरुआत अहींथी थाय छे
मोक्ष थवानुं बीज अहीं रोपाय छे एक वखत सम्यग्दर्शन थयु, तो अवश्य मोक्ष थवो ज जोइए
सम्यग्दर्शनथी आत्मा अने देहनु भिन्नपणु प्रतीत थाय छे, अने ते सम्यग्दर्शन चोथे गुणस्थानके थाय
छे. आत्मा अने देह बन्ने भिन्न छे एवी प्रतीति छतां ते प्रमाणे वर्त्तना आ गुणस्थानके थती न
होवाथी तेने "अविरतिसम्यग्दृष्टिगुणस्थानक" कहेल छे एवो नियम छे के, एक वखत वस्तुनुं यथार्थ
स्वरूप समजाय, अर्थात् सम्यग्दर्शन थाय, तो नियमा चारित्रसेवना थवानी, चोथा गुणस्थानकेथी
मांडी तेरमा गुणस्थानकसुधी आत्मानुभव एक सरखो छे, परंतु ज्ञानावरणीयकर्मना निरावरणानुसार
ज्ञाननी विशुद्धता ओछी अदकी होय छे तेना परिमाणमां अनुभवनो प्रकाश थइ शके छे पांचमा
गुणस्थानके देशे (अंशे आचरण) होय छे, अर्थात् आत्मा अने देह भिन्न छे एवी प्रतीति, जे चोथा
गुणस्थानके थइ, ते प्रमाणे वर्त्तन पांचमा गुणस्थानके संपूर्णपणे थतुं नथी, परतु कोइ अंशे थाय छे
आ कारणथी आ गुणस्थानकने " देशविरतिगुणस्थानक " कहेवामां आवे छे छट्ठा गुणस्थानके सर्व देशे
आचरण होय छे, तथापि तेमां जीवो कइक प्रमत्त रहे छे आ कारणथी तेने ' सर्वविरतिप्रमत्तसंयत '
गुणस्थानक कह्युं छे सातमुं गुणस्थानक "अप्रत्तमसयत" छे अहीं अप्रमत्तपणे सर्वविरति–आचरण
होय छे आठमा "निवृत्तिगुणस्थानके " अपूर्व आत्मजागृति होय छे, नवमा "अनिवृत्ति" अथवा "बादर-
संपरायगुणस्थानके" सत्तागत स्थूळ कपायवळपूर्वक स्वस्वरूपस्थिति होय छे दशमा " सूक्ष्मसंपराय-
गुणस्थानके" सत्तागत सूक्ष्म कषायवळपूर्वक स्वस्वरूपस्थिति होय छे अगीआरमा "उपशांतमोहगुण-
स्थानके" सत्तागत उपशांतकषायवळपूर्वक स्वस्वरूपस्थिति होय छे. बारमा "क्षीणमोहगुणस्थानके"

सत्तागत क्षीणकपायवळपूर्वक स्वस्वरूपस्थिति होय छे तेरमा "सयोगीगुणस्थानके" उपर वर्णव्या प्रमाणे मात्र मन, वचन अने कायानो योग रहे छे, अहीं केवळज्ञान उत्पन्न थाय छे, चौदमा "अयोगीगुणस्थानके" मन, वचन अने कायाना योग किंचित्मात्र पण न रहेतां सिद्धपदप्राप्ति थाय छे. तेरमा गुणस्थानकने जीवन्मुक्त दशा कही शकाय, के जेने माटे ग्रंथकारे ११३ मा दोहरामां विवेचन कर्युं छे.

एम जे शंका करवामां आवे छे के, जैनदर्शन कहे छे तेम अनादिनो आत्माने विभाव वर्त्ते छे तो ते केम? तेनुं समाधान ११४ मा दोहरामां आ प्रमाणे करवामां आव्युं छे —

कोटी वर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत थतां समाय;
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दूर थाय.

अहीं ग्रंथकर्त्ताए स्वप्ननो अत्यंत विशेप काळ दर्शाववाना उद्देशथी 'कोटी वर्षनुं स्वप्न' एम कहुं छे कोइने घणा दीर्घ समय सुधी स्वप्न चाल्युं आवतुं होय, अने ते जागृत थतां एकदम विलय पामी जाय छे, तेनी पेठे अनादिकाळथी आत्मामां देहबुद्धि, अने देहमां आत्मबुद्धि एवा प्रकारे जे विपर्यास चाल्यो आवे छे, ते आत्मा अने देह बन्ने भिन्न स्वभावी पदार्थो छे, एवुं सम्यग्दर्शन थतां, दूर थइ जाय छे.

जैनदर्शने जेम आत्मा अने कर्मनो संबंध अनादिनो मान्यो छे तेम जगत्ना सर्व भावो पण अनादि छे एम स्वीकारेल छे. आ वातनी प्रतीति हवे विज्ञानशास्त्र (Science) ना प्रभाव पछी थवा लागी छे. अद्यापिपर्यंत जनसमूहमां एवी भ्रांति चाली आवती हती के, ईश्वरे आ सघळी रचना अने घटना करी छे. हजु पाश्चात्य विज्ञानशास्त्र घणुं ज अपूर्ण होवाथी तेनो (विज्ञानशास्त्रनो) प्रभाव हजु सुधी एवो प्रबल थयो नथी के जेथी आ भ्रांति सर्वथा दूर थाय. जैन ए एक ज दर्शन छे के जेणे जगत् अने तेना

भावो अनादि कह्या छे मिथ्याज्ञान अथवा असम्यग्दर्शननु वस्तुत स्वरूप निरखवाने माटे आ भ्रांति ज वस छे जैने एक ज सिद्धांतमां आ प्रसंगनु यथास्थित निरूपण कर्यु छे, अने ते आ रीते "जे वस्तु वर्त्तमान काळने विषे छे ते वस्तु भूतकाळमां पण हती, अने भविष्यकाळमां पण होवी जोइए भले पछी रूपान्तर थयेल होय, पण मूळ वस्तु तो होवी ज जोइए" बार वागे एक पदार्थनु होवापणु छे तो तेनु होवापणु बार वाग्या पहेलां अने बार वाग्या पछी पण होवु जोइए भले पछी ते रूपान्तर पामेल होय अत्रे बार वाग्यानो समय वर्त्तमानकाळ तरीके कल्प्यो छे, बार वाग्या पहेलां नो 'भूत' तरीके अने बार वाग्या पछीनो 'भावि' तरीके कल्पेल छे जेम बार वागे मनुष्यदेहनी स्थिति जोवामां आवी, ते पहेलांना समये तेनी स्थिति जोवामां न आवी होय, तेम ज बार वाग्या पछी तेनो विलय थइ गयेलो जणाय, छता तेनी स्थिति त्रणे काळमां होवी ज जोइए, केमके बार वाग्या पहेलां स्थिति हती, परतु ते बीजा आकारे हती, तेम ज बार वाग्या पछी विलय थयो जणाय छे, छता ते देहना परमाणुओनो नाश थयो नथी, परंतु ते परमाणुओ छूटा पडी गया छे आ वातनी प्रतीति जैनदर्शने मूळथी स्वीकारेल अने पाश्चात्य विज्ञानशास्त्रे हमणां स्वीकारेल "कोइ वस्तु नवी उत्पन्न थती नथी के, कोइ वस्तुनो नाश नथी थतो, रूपान्तर परिणाम थाय छे" ए सिद्धांत विचारवाथी थशे, अने आ विचारणाथी "उत्पत्तिनियम" (Law of Creation) नुं मूल्य शून्यतामां छे एम निश्चित थशे जो जैननो आ सिद्धांत प्रतीत थयो होत, तो सृष्टिनी उत्पत्ति थवानी कल्पना घणा काळथी नीकळी गइ होत 'भूस्तरविद्या' (Geology) हवे शीखवे छे के, सृष्टि अनादिनी होवी जोइए, पण जैनदर्शने, तो ते सहस्र वर्षो पहेलां समजाव्युं हतुं जैननो "जे वस्तु वर्त्तमानकाळे होय ते वस्तु भूतकाळमां होवी जोइए, अने भविष्यमां पण होवी जोइए" ए सिद्धांत जगत्‌ने 'अनादि अनंत' सिद्ध करे छे.

आत्मा अने कर्मनो अनादिनो संबंध छे एम दर्शवता अत्रे अनादिथी जगत् अने तेना भावो वर्त्ते छे एम जे कह्युं ते वातनी प्राधान्यता नथी अत्रे ते वात प्रसंगवशात् लखी छे.

एम शंका थवायोग्य छे के, आत्माने कर्मनी साथे अनादिनो संबंध छे ते संबंध केम निवृत्त थाय ? तेनुं समाधान ११५ थी ११७ मा दोहरा सुधीनुं वस्तुस्वरूप विचार्याथी थाय छे. आ दोहरामां कह्युं छे के,

११५. छूटे देहाध्यास तो, नहीं कर्त्ता तुं कर्म;
नहीं भोक्ता तुं तेहनो, ए ज धर्मनो मर्म.

११६. ए ज धर्मथी मोक्ष छे, तुं छो मोक्षस्वरूप;
अनंतदर्शन ज्ञान तुं, अव्याबाध स्वरूप.

११७. शुद्ध, बुद्ध, चैतन्यघन, स्वयं ज्योति सुखधाम;
बीजुं कहीए केटलुं ? कर विचार तो पाम.

श्रीमान् राजचंद्रे आ पदोनो अर्थ आ प्रमाणे भर्यो छे – " हे शिष्य ! देहमां जे आत्मता मनाई छे, अने तेने लीधे स्त्रीपुत्रादि सर्वमां अहंममत्वपणुं वर्त्ते छे, ते आत्मता जो आत्मामां ज मनाय, अने ते देहाध्यास एटले देहमां आत्मबुद्धि तथा आत्मामां देह बुद्धि छे ते छूटे, तो तुं कर्मनो कर्त्ता पण नथी, अने भोक्ता पण नथी, ए ज धर्मनो मर्म छे (११५) ए ज धर्मथी मोक्ष छे, अने तुं ज मोक्षस्वरूप छो, अर्थात् शुद्ध आत्मपद ए ज मोक्ष छे तुं अनंत ज्ञान, दर्शन तथा सुख स्वरूप छो. (११६) तुं देहादिक सर्व पदार्थोथी जूदो छे, कोइमां आत्मद्रव्य भळतुं नथी, कोइ तेमां भळतुं नथी, द्रव्ये द्रव्य परमार्थथी सदाय भिन्न छे. माटे तु शुद्ध छो, बोधस्वरूप छो, चैतन्यप्रदेशात्मक छो, स्वयंज्योति एटले कोइ पण

तेने प्रकाशतु नथी, स्वभावे ज तु प्रकाशस्वरूप छो, अने अव्याबाध सुखनुं धाम छो बीजुं केटलुं कहीए ? अथवा घणु शु कहेवु ? टुकमां एटलु ज कहीए छीए के, जो विचार कर, तो ते पदने पामीश (११७)"

जो देहाध्यास टळे, तो प्रत्येक आत्मा, श्रीजिननी पेठे, मोक्षस्वरूप, अनंतज्ञानदर्शन तथा सुखस्वरूप, शुद्ध, बुद्ध, चैतन्यघन, स्वयज्योति, अने अव्याबाध सुखनुं धाम छे एवु दृढ कराववा माटे आ स्थळे ग्रंथकर्त्तापुरुषे भापारचना तथाप्रकारनी जागृतिवाळी करी छे अनादिनो आत्मानी साथेनो कर्मसबध केम निवृत्त थाय ए आ दोहरापरथी जे प्रकारे जाणी शकाय छे ते प्रकार आ छे.—

प्रथम, 'जीव' 'पुद्गलपरमाणु' 'धर्म,' 'अधर्म' 'आकाश' अने 'काळ' ए छ द्रव्यो जणाव्यां छे ते द्रव्यो जो के एक बीजामा प्रवेश करे छे, एकमेकने अवकाश आपे छे, एकमेक मळी जाय छे, अने जूदां पडे छे, पण पोतपोताना स्वभावनो त्याग करता नथी, (जुओ, श्रीमान् कुदकुदाचार्य प्रणीत 'पचास्तिकाय' नामक ग्रंथ) एटले जेम श्रीमान् राजचंद्रे ११६ मा दोहरामां कह्युं छे, तेम आत्मा पोताना ज्ञानस्वभावनो त्याग करतो नथी के, पुद्गलपरमाणु पोताना जडस्वभावनो त्याग करता नथी. प्रत्येके प्रत्येक द्रव्य पोतपोताना स्वभावमां रमण करे छे आत्मा अने कर्मनो सबंध छतां आत्मा पोताना ज्ञानस्वभावमां अने पुद्गलपरमाणुरूप कर्म पोताना जडस्वभावमां वर्त्ते छे. आम होवाथी आत्माने वास्तवमां पोताना ज्ञानस्वभावनो कर्त्ता, भोक्ता, मानवो जोइए, छतां आत्माने कर्मनो कर्त्ता कहेल छे तेनो हेतु आ छे. आत्माने अनादिथी देहसंबंधी जे विपर्यास छे तेने लइने आत्मा एम माने छे, अथवा भावे छे के, देह अने तेनां कार्यो ए मारां छे. आवुं जे मानवु अथवा भाववुं (भावना करवी) तेथी ते ते प्रकारना पुद्गलपरमाणरूप कर्मो पोतपोतानी जातिना नूतन पुद्गलोनो सचय करे छे, जे पछी पोत-

पोताना स्वभावानुसार परिणमे छे. ज्यारे आत्माने देह संबंधीनो विपर्यास मटी जाय छे त्यारे सम्यग्दर्शन थाय छे के "हुं ज्ञानमय आत्मा छुं, अने देहादिरूप पुद्गलपरमाणुओ माराथी अन्य छे." आवुं ज्यारे सम्यग्दर्शन आत्माने थाय छे त्यारे पोताना चारित्ररूप गुणवडे पूर्वे एकत्र करेल कर्मोने सर्वथा खपावी क्षय करे छे, (कर्मो केम क्षय करी शकाय ते संबंधी १०३–१०४ मा दोहरामां विवेचन थइ गयुं छे) अने नूतन कर्मो बांधतो नथी. आवुं सम्यग्दर्शन थयाथी सम्यक्चारित्रद्वाराए पूर्वनिष्पन्न कर्मो सर्वथा खपेछे, अवे नवां कर्मो (अर्थात् नूतन देह) नो संबंध थतो नथी, अने नूतन कर्मनो संबंध न थवो, ते आत्मा अने कर्मना संबंधनी निवृत्ति छे. जैने कर्मने आत्मानी साथेनो संबंध कोइ न्याये अनादि–सांत कह्यो छे ते न्याय आ कह्यो ते छे. ११८ मा दोहरामां गुरु–शिष्य वचेनो संवाद पूर्ण करतां ग्रंथकारे कह्युं छे के, जे जे ज्ञानीओ थइ गया छे ते सर्वेनो आत्मानी मुक्ति संबंधी आ एक ज प्रकारनो निश्चय छे. एम जे कह्युं छे के,

निश्चय सर्वे ज्ञानीनो, आवी अत्र समाय;
धरी मौनता एम कही, सहज समाधिमांय.

तेमां "धरी मौनता एम कही, सहजसमाधिमांय" तेनो आशय अति गंभीर होइ बहु विचारवायोग्य छे. ग्रथकारे तेनो अर्थ एम भर्यो छे के, "एम कहीने सद्गुरु मौनता धरीने सहजसमाधिमां स्थित थया, अर्थात् वाणीयोगनी अप्रवृत्ति करी." आ वाक्यो परथी सहज एम प्रश्न थाय छे के, एवा सद्गुरु कया गणवा के जे सहजसमाधिना पात्र छे, अथवा जेनी वाणी अप्रवृत्त थवाने पात्र छे? उपर चौद गुणस्थानक अने तेनां स्वरूप दर्शावेल छे तेनी साथे एम पण कहेवाइ गयुं छे के, तेरमा अने चौदमा गुणस्थानके अनुभवज्ञाननो सद्भाव समान ज छे, भेद मात्र एटलो ज छे के, तेरमा 'सयोगीकेवलीगुणस्थानके' केवल-

ज्ञाननी प्राप्ति छतां मन, वचन अने कायानो योग होय छे, ज्यारे चौदमा 'अयोगीकेवलीगुणस्थानके' ए योग नथी होतो. ज्यारे मन, वचन, अने कायानो योग होतो नथी, एटले वाणीयोगनी अप्रवृत्ति थाय छे, अने सहजसमाधिनी प्राप्ति थाय छे आ दोहरानी जे योजना करवामां आवी छे ते परथी विदित थाय छे के, सहजसमाधि थवा पूर्वेनी जे स्थिति ते स्थितिएथी सद्गुरुए आ उपदेश कर्यो छे आ स्थिति कइ? तेरमु 'सयोगीकेवलीगुणस्थानक' श्रीजिनेश्वरोए आपणाप्रत्ये परम कृपा करी पोताना तीर्थंकरकर्म भोगववा निमित्ते जे आत्मकल्याणनो उपदेश कर्यो छे ते आ तेरमा 'सयोगीकेवली-गुणस्थानके'थी कर्यो छे के, जे गुणस्थानक पछीनुं तरतजनुं गुणस्थानक सहजसमाधि माटेनु 'अयोगी-केवलीगुणस्थानक' छे. ग्रंथकारनो आशय आ परथी एम अनुमानवामां आवे के, आ गुरु–शिष्यना सवादमा जे गुरु कल्पवामा आव्या छे ते श्री अर्हत् छे, तो ते सत्यरूप गणावानो सभव धारी शकाय

आ लेखना प्रारंभमां एम जे कहेवामां आव्यु छे के, श्रीमान् राजचंद्रने प्रत्यक्ष सद्गुरुनो योग तो बन्यो न होतो, अने तेओए सद्गुरुनु आरोपण श्री जिननेविषे कर्युं होवानो संभव छे ते आ प्रसगथी विशेष दृढ थवायोग्य छे. आ वात विशेषदृष्टिनी छे, सामान्यदृष्टिए तो एम गणाय के सद्गुरु (के जेनां लक्षणो पूर्वे कहेवाइ गयेल छे)ए शिष्यप्रत्ये एम कह्युं छे के, जो उपर्युक्त बोध ग्रहण करवामां आवे, तो सद्गुरुने मोक्षमार्ग माटे विशेष कहेवानु कंइ रहेतु नथी, केमके आत्मज्ञाननो सर्व सार तेमां आवी जाय छे.

११९ मा दोहराथी ते १२७ दोहरा सुधीमां "शिष्यबोधबीजप्राप्तिकथन" ए प्रकारनो विभाग छे. "बोधबीजप्राप्ति" एने कहेवामां आवे छे के, ज्यारे आत्मासंबधीनो उपर्युक्त वास्तविक बोध थाय 'बोधबीजप्राप्ति'ने बीजु नाम 'सम्यग्दर्शन' पण आपी शकाय. 'बोधबीजप्राप्ति' अथवा 'सम्यग्दर्शन' थता आत्माने अपूर्व भान आवे छे, अने पोतानु स्वरूप पोताने विषे यथातथ्य भासे छे. देहात्म–

वृद्धिरूप अज्ञान दूर थाय छे, पोतानु स्वरूप शुद्ध चैतन्यस्वरूप अजर, अमर, अविनाशी अने देहथी स्पष्ट जूदु भासे छे. वळी, ज्यां विभाव (मिथ्यादर्शन) वर्त्ते छे, त्यां मुख्यनय–(मुख्यनय 'व्यवहारनय'ने माटे वापरेलो जणाय छे,)थी कर्मनु कर्त्तापणुं अने भोक्तापणु छे, परंतु हवे (सम्यग्दर्शन थतां) 'आत्मस्वभावमां वृत्ति वही तेथी आत्मा अकर्त्ता थयो, अथवा आत्मपरिणाम जे शुद्ध चैतन्यस्वरूप छे तेनो निर्विकल्प स्वरूपे कर्त्ता भोक्ता थयो ' एम ११९ थी १२२ मा दोहरामां सद्गुरुनो शिष्य उपकार मानतो होय तेवा आकारमां जणावी आत्माने सम्यग्दर्शन थतां जे अनुभव थाय छे ते दर्शावेल छे.

निजशुद्धता ए ज मोक्ष मोक्ष छे, अने जे वडे ते पमाय ते मोक्षनो मार्ग छे, अने ते ज निग्रथ–जैननो सकल मार्ग छे, एम १२३ मा दोहरामां जणाव्यु छे.

१२४ थी १२७ मा दोहरामां सद्गुरुए मोक्षमार्ग बताववारूप जे करुणा करी ते अर्थे तेमनो अत्यत उल्हासपूर्वक आभार मानी बताव्यो छे. आभार मानवा अर्थे जे शब्दरचना करी छे तेनुं अर्थगांभीर्य केवुं मनोरंजक छे ते नीचेथी जणाशे.–

१२४. अहो ! अहो ! श्रीसद्गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो! अहो! उपकार.

१२५. शुं प्रभुचरण कने धरुं ? आत्माथी सौ हीन.
ते तो प्रभुए आपियो; वर्त्तुं चरणाधीन.

१२६. आ देहादि आजथी, वर्त्तो प्रभुआधीन,
दास, दास, हुं दास छुं, तेह प्रभुनो दीन.

१२७. षट्स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यानथकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप.

अमाप उपकार कया कारणथी श्रीसद्गुरुथी थयो छे ते १२७मा दोहरामां जणाव्युं छे. म्यान् अने तरवार बन्ने भिन्न छे तेनी पेठे आत्मा अने देह बन्ने भिन्न छे एवु आ छ पदनेविषे विवेचन करी बताव्युं छे ते अमाप उपकार छे. आत्मा अने देहनी भिन्नता न जाणवाना कारणे ससारअटविमां परिभ्रमण थतु हतु ते, आत्मा अने देहनुं भिन्नपणुं बताववाथी अटक्यु. सद्गुरुनी आ परम करुणा छे, अने आ कारणे ज करुणाना सिंधुसमान सद्गुरुने १२४ मा दोहरामां कहेल छे. कोइ आपणाप्रत्ये उपकार करे, तेनो बदलो वाळवो जोइए ए कर्त्तव्यक्रम छे वळी, बीजो क्रम एवो छे के, आपणने अमुक चीज कोइए आपी, आपणे ते आपनारने बदलामां ते मळेली चीज आपता नथी, कारण के तेम करवामां विशेषता शुं? ए तो एनी हती ने एने पाछी आपवी छे. आ कारणे आपणे आपणी यथाशक्ति बदलानी चीज आपीए छीए. श्रीसद्गुरुए वास्तविक रीते अत्र आत्मा आपेल छे, कारणके शिष्यने, तो मिथ्यादर्शन हतुं ते कारणे आत्माना होवापणानुं ज भान नहोतुं. श्रीसद्गुरुए तेनु भान कराव्यु एटले शब्दपर्यायमा कहीए, तो आत्मा आप्या समान ज छे. आ आत्मारूपी पदार्थना श्रीसद्गुरु तो आपनार छे, एटले तेओना उपकारना बदलामां तेओए आपेल पदार्थ तो उपर्युक्त न्याये क्यांथी ज अपाय? जो ते शिवाय कंइ अर्पण करवामां आवे, तो तो विशेषता कहेवाय हवे शिष्ये पोता तरफथी आपवु शुं? उत्तमोत्तम एवो आत्मारूपी पदार्थ तो श्रीसद्गुरुए आपेल छे. (श्री निर्ग्रंथप्रवचन छे के "जेणे आत्मा जाण्यो तेणे सर्व जाण्युं, एटले आत्मा ए उत्तमोत्तम पदार्थ छे.) आ कारणथी शिष्य आत्मा करतां

विशेषतावाळो पदार्थ तो न आपी शके, परंतु तेथी न्यूनतावाळो पदार्थ आपी शके. शिष्य पोतापरना अपार उपकारना भारना कारणे १२६ मा दोहरामां एटला माटे कहे छे के, उत्तमोत्तम एवो आत्मारूपी पदार्थ तो आपश्रीए आप्यो छे, एटले हु मारी यथाशक्ति आपनो जेनाथी बदळो वाळी शकु, ते देहादि वधां पदार्थो तो आत्माथी हीन छे. ते सघळां हुं आपने अर्पण करूं तो पण बदलो वळे तेम छे ज नही अहीं देहार्पण करवा-पर भार मुकवानो उद्देश नथी, अहीं तो सद्गुरुए जे अमाप उपकार कर्यो छे तेनो बदलो कोइ रीते वाळी शकाय एवुं छे ज नहीं, एवुं महत्व बतावचानो हेतु छे. १२५ मा दोहराना पहेला चरणमां एम जे कह्युं छे के,

शुं प्रभु चरण कने धरुं ?

तेथी श्रीमान् राजचंद्र एम कहे छे के, एवुं समजवानु नथी के, श्रीसद्गुरुने शिष्यना बदलानी किंचित्मात्र इच्छा होय छे, केमके सद्गुरु तो परम निष्काम होय छे, तेओ एक निष्काम करुणाथी ज मात्र उपदेशना आपनार छे. आ उपकारवचन कहेवानो शिष्यनो धर्म होवाथी कहेल छे.

ग्रथनो उपसंहार १२८ मा दोहराथी ते १४२ मा दोहरा सुधीमां करवामां आव्यो छे. १२८ मा दोहरामां एम कह्यु छे के,

दर्शनषटे समाय छे, आ षट् स्थानकमांहि;
विचारतां विस्तारथी, संशय रहे न कांई.

उपर समालोचना करवामां आवी ते परथी जोइ शकायुं हशे के, ग्रंथकर्त्ता कहे छे तेम विस्तारपूर्वक विचार्याथी आ छ पदमां छए दर्शनोनो समास थइ जाय छे एटलुं ज नहीं, पण प्रसिद्ध एवां छ दर्शनोमां अंतर्गत थता जूदा जूदा अनेक अभिप्रायोनो समावेश आ छ पदने विषे थाय छे.

१२८ मा दोहरामां मोटामा मोटो व्याधि कयो ? तेने माटे निपुण वैद्य कोण ? तेने माटे पथ्य शुं ? अने तेनु औषध शु ? ए वातनो प्रसग लइ कह्यु छे के,

आत्मभ्रांति सम रोग नहीं, सद्गुरु वैद्य सुजाण;
गुरु आज्ञासम पथ्य नहीं, औषध विचार ध्यान.

ए नवीन कहेवानु नथी के, आत्मानी प्रतीतिना अभावे शरीरने विषे जे विपर्यास थइ गयो छे ते जेवो एके पण रोग छे नहीं जेओने आत्मानी प्रतीति छे तेओ सुखदु.खनु वेदन जेवी समतापूर्वक करी शके छे तेवी समतापूर्वक देहने विषे ज जेणे सर्वस्व मान्यु छे एवा जडवादीओ कोइ पण काळे करी शकवाना नथी. आ कारणे, ग्रथकारे पूर्व पुरुषनी परंपराए अनुभवपूर्वक आ भ्रांतिने सर्वथी अनिष्ट रोगरूप कहेल छे. ए पण खरुं छे के, जेम शरीरव्याधिओने माटे निपुण वैद्यनी जरूर छे, तेम आ आत्मव्याधिने माटे वस्तु पामेला एवा सद्गुरुरूप वैद्यनी जरूर छे. व्याधिनु भान थाय, ते व्याधि दूरकर्त्ता वैद्य मळे, परतु जेने व्याधि छे ते पथ्य सेवे नहीं, तो ते व्याधि दूर थतो नथी, तेम आत्मानी भ्रांतिरूप रोग टाळवाने माटे पथ्यनी जरूर छे. ए पथ्य ते गुरुआज्ञा छे गुरुआज्ञाने पथ्य कहेवानो हेतु ए छे के, जेम व्याधि जवा माटेनी वैद्यनी सूचना, बराबर विचारपूर्वक थइ होय, तेम गुरु पण ए आत्मभ्रांतिना व्याधिने दूर करवा–अर्थे जे सूचनाओ (आज्ञा) करे छे ते सम्यक् विचारपूर्वक होवायोग्य छे विचार अने निदिध्यासन ए आ रोगने माटे औषध छे ए वात प्रसिद्ध ज छे. पुरुषार्थनु माहात्म्य १३० मा दोहरामां प्रकट कर्यु छे, अने जेओ एम कहे छे के, भवस्थिति पूर्ण थये एनी मेळे मोक्ष थशे, एटले के जेटला भव लख्या हशे

तेटला थशे एम जेओ कही पुरुषार्थनो अनादर करे छे तेओने जाग्रति आपी छे के आम मानी बेसी पुरुषार्थ नहीं करो, तो आत्मार्थनु छेदन थशे.

प्रथम कहेवाई गयुं छे के, जैनमां निश्चय अने व्यवहार एवा बे प्रकारना नय कहेल छे. आत्मा अबंध, असंग, सिद्ध छे एवुं जे न्यायपूर्वक कहेवामां आवे छे ते निश्चयनय छे. निश्चयनये आ प्रकारनुं आत्मानुं स्वरूप छतां, तेने अनादिनो कर्मनो संबंध छे, अने ते कर्मनो संबंध सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन अने सम्यक्चारित्ररूप रत्नत्रयपूर्वक निवृत्त करवो जोइए एवुं जे नय बतावे छे ते ' व्यवहारनय ' छे. वेदांतादि दर्शनो आत्माने असंग, अबंध, अने सिद्ध छे एवुं जेम माने छे तेम ज निश्चयनये जैनदर्शन पण माने छे. जेम वेदांतादि दर्शनो आत्माने पोतानुं स्वरूप ' माया 'ने लइने समजातुं नथी एम कहे छे, तेम जैन पण माने छे के मिथ्यादर्शनने लइने आत्माने पोतानुं वास्तविक स्वरूप समजातुं नथी. जैन अने वेदांतमां भेद त्यां पडे छे के, ज्यां वेदांत एम कहे छे के, आत्माने जे मायाने लइने पोतानुं स्वरूप समजातुं नथी ते माया जणाय, तो आत्मा मुक्त थाय छे. ' माया ' शब्दनी व्याख्या अनुकूळता प्रमाणे जेटली विशाळ करवानी जरूर जणाय तेटली करवामां आवे छे, एटले वेदांतदर्शननी वस्तुस्थितिना निर्धारपर अंकुश राखी शकावो संभावनीय नथी, तथापि आटलुं तो निर्विवाद छे के जेम जैनदर्शन कहे छे के, मिथ्यादर्शन गया छतां पूर्वे बांधेलां कर्मो भोगववां ज जोइए,-जेम श्रीकृष्ण भगवानने मिथ्यादर्शन गया छतां पूर्वे बांधेलां कर्मो माटे नारकादि अवस्थाओ वर्त्तमानमां भोगववी पडे छे, अने ते अवस्थाओ भोगवाइ रहे, मिथ्यादर्शन जइने उत्पन्न थयेल सम्यग्दर्शनना कारणे सम्यक्चारित्रपूर्वक वर्त्तना कर्येथी आवती चतुर्विंशतिमां तीर्थंकर थशे,-तेम वेदांत स्पष्टपणे कहेतुं होय एम तेनी प्रवृत्ति परथी जणातुं नथी. वेदांतनो कहेवानो आशय कदाच् न समजातो होय अने तेथी अन्यथा समजातुं

होय, ते जूदी वात, वाकी तेनी प्रवृत्तिपरथी तो एम लागे छे के केम जाणे तेओ एम मानता होय के माया (मिथ्यादर्शन) जणाये, पूर्वे करेलां कर्मोनो क्षय करवानुं रहेतु न होय आ स्थळ जैन अने वेदांतना भेद संबंधीनु छे. वेदातमां माया जणाये तरत ज मोक्ष थयाना दाखलाओ अनेक मळी शकशे, पण एवा दाखला मळशे के, मिथ्यादर्शन गया छता पूर्वे करेलां कर्मोनु फल भोगववा माटे, अनेक भवो कोइने पण भोगववा पड्या होय ? ते गमे तेम हो, परतु आटलुं तो चोकस छे के, जेम वेदांतमां "हुं एक ब्रह्म छु" एवुं पोताने ज्ञान थयेलु माननारा अने पोताने मायामुक्त थयेल गणनारा जीवो पोताने पछी साधन करवानी जरूर रहेती नथी एवु मानी वेसे छे, तेम जैनमां पण उपर्युक्त निश्चयनयने माननारा, पोताने साधनादिनी जरूर नथी एम मानी निरकुश जीवन गाळे छे, अने पोताने जीवन्मुक्त माने छे एवा पण जीवो नथी एम नथी आवा जीवोने त्यागादि साधनोनी आवश्यकताअर्थे सावध राखवाना हेतुथी १३१ मा दोहरामा श्रीमान् राजचंद्रे कह्यु छे के,

निश्चय वाणी सांभळी, साधन तजवां न होय;
निश्चय राखी लक्षमां, साधन करवां सोय.

आ 'आत्मसिद्धिशास्त्र' मा निश्चय अने व्यवहार ए बन्ने नयनु निरूपण छे. बन्नेमांथी कोइ पण एक नयने पराधीन न थवानु सूचवतां, अने बन्नेने युगपद्भावे अनुसरवानु कहेतां १३२ मा दोहरामां जणाव्युं छे के,

नय निश्चय एकांतथी, आमां नथी कहेल;
एकांते व्यवहार नहीं, बन्ने साथ रहेल.

व्यवहार अने निश्चय कोने कहेवा ते १३३ मा दोहरामां कहेल छे. गच्छ, समुदाय अथवा मतमां पोतापणानी बुद्धि ए कांइ सद्व्यवहार नथी. अगाउ आत्मार्थीना लक्षणोमां, अने छट्ठा मोक्षोपायना पदमां कह्या ते जिज्ञासुना लक्षणोमां, कह्या प्रमाणेनी वर्त्तना ते सद्व्यवहार छे. श्रीमान् राजचंद्रे तो गच्छ, मतभेदनी कल्पनाने ते सद्व्यवहार नथी एम मात्र कही, आ घणी ज मृदु भाषामां

गच्छमतनी जे कल्पना, ते नहीं सद्व्यवहार,
भान नहीं निजरूपनुं, ते निश्चय नहीं सार.

अप्रशंसेल छे, परंतु परमआत्मज्ञानी श्रीमान् आनंदघनजीए, तो गच्छना भेदमां आग्रह धरावनाराओ प्रत्ये बहु ज परमोपकारक तीव्रता वापरता कह्युं छे के,

गच्छना भेद बहु नयण नीहाळतां,
तत्त्वनी वात करतां न लाजे.
उदरभरणादि निज काज करतां थकां,
मोह नडिया कळिकाळ राजे.

आ १३३ मा दोहरानी बीजी लीटीमां निश्चय कयो सारभूत गणावो योग्य छे ते कह्युं छे. पोताने असंग के अबंध मानवाथी नहीं, पण पोताने असंग, अबंध करवाथी निश्चय सचवाय एम ग्रथकारे कहेल छे.

भूतकाळे थइ गयेला ज्ञानी पुरुषोनुं, वर्त्तमानमां विद्यमान ज्ञानी पुरुषो छे तेमनुं अने भविष्यमां थनारा ज्ञानी पुरुषोनुं मोक्षमार्ग माटे एक ज प्रकारनुं कथन छे एम १३४ मा दोहरामां कह्युं छे. मोक्षनो मार्ग एक ज छे एम कहेतां संवत् १९४५ मां श्रीमाने एक लेखमां कह्युं छे के,

आगळ ज्ञानी थइ गया, वर्त्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मार्गभेद नहीं कोय.

" मोक्षना मार्ग बे नथी जे जे पुरुषो मोक्षरूप परमशांतिने भूतकाळे पाम्या, ते ते सघळा सत्पुरुषो एक ज मार्गथी पाम्या छे, वर्त्तमानकाळे पण तेथी ज पामे छे, भविष्यकाळे पण तेथी ज पामशे. ते मार्गमां मतभेद नथी, असरळता नथी, उन्मत्तता नथी, भेदाभेद नथी, मान्यामान्य नथी, ते सरळ मार्ग छे, ते समाधिमार्ग छे, तथा ते स्थिरमार्ग छे, अने स्वाभाविक शांति स्वरूपे छे. सर्वकाळे ते मार्गनु होवापणु छे मार्गना मर्मने पाम्याविना कोइ भूतकाळे मोक्ष पाम्या नथी, वर्त्तमानकाळे पामता नथी, अने भविष्यकाळे पामशे नहीं. श्रीजिने सहस्र क्रियाओ अने सहस्र उपदेशो ए एक ज मार्ग आपवा माटे कह्या छे; ने ते मार्गने अर्थे ते क्रियाओ अने उपदेशो ग्रहण थाय, तो सफळ छे, अने ए मार्गने भूली जइ ते क्रियाओ, अने ते उपदेशो ग्रहण थाय, तो ते सौ निष्फळ छे. श्रीमहावीर जे वाटेथी तर्या ते वाटेथी श्रीकृष्ण तरशे, जे वाटेथी श्रीकृष्ण तरशे, ते वाटेथी श्रीमहावीर तर्या छे. ए वाट गमे त्यां बेठां, गमे ते काळे, गमे ते श्रेणिमा, गमे ते योगमां ज्यारे पमाशे त्यारे, पवित्र, शाश्वत, सत्पदना अनंत अतीन्द्रिय सुखनो अनुभव थशे. ते वाट सर्व स्थळे संभवित छे योग्य सामग्री नहीं मेळववाथी भव्य पण ए मार्ग पामता अटक्या छे, तथा अटकशे, अने अटकयां हतां कोइ पण धर्मसंबधी मतभेद राखवो छोडी दइ, एकाग्रभावथी सम्यक्‌योगे ए ज मार्ग सशोधन करवानो छे विशेष शुं कहेवु ? ते मार्ग आत्मामा रह्यो छे. आत्मत्वप्राप्य पुरुष–निर्ग्रंथ आत्मा ज्यारे योग्यता गणीने आत्मत्व अर्पशे–उदय आपशे त्यारे ज ते प्राप्त थशे, त्यारे ज तेनी वाट मळशे, त्यारे ज ते मतभेदादिक जशे. मतभेद राखी

व्यवहार अने निश्चय कोने कहेवा ते १३३ मा दोहरामां कहेल छे. गच्छ, समुदाय अथवा मतमां पोतापणानी बुद्धि ए कांइ सद्व्यवहार नथी. अगाउ आत्मार्थीना लक्षणोमां, अने छठ्ठा मोक्षोपायना पदमां कह्या ते जिज्ञासुना लक्षणोमां, कह्या प्रमाणेनी वर्त्तना ते सद्व्यवहार छे श्रीमान् राजचंद्रे तो गच्छ, मतभेदनी कल्पनाने ते सद्व्यवहार नथी एम मात्र कही, आ घणी ज मृदु भाषामां

गच्छमतनी जे कल्पना, ते नहीं सद्व्यवहार,
भान नहीं निजरूपनुं, ते निश्चय नहीं सार.

अप्रशंसेल छे, परंतु परमआत्मज्ञानी श्रीमान् आनंदघनजीए, तो गच्छना भेदमां आग्रह धरावनाराओ प्रत्ये बहु ज परमोपकारक तीव्रता वापरता कह्युं छे के,

गच्छना भेद बहु नयण नीहाळतां,
तत्त्वनी वात करतां न लाजे.
उदरभरणादि निज काज करतां थकां,
मोह नडिया कळिकाळ राजे.

आ १३३ मा दोहरानी बीजी लीटीमां निश्चय कयो सारभूत गणावो योग्य छे ते कह्युं छे. पोताने असंग के अबंध मानवाथी नहीं, पण पोताने असंग, अबंध करवाथी निश्चय सचवाय एम ग्रथकारे कहेल छे.

भूतकाळे थइ गयेला ज्ञानी पुरुषोनु, वर्त्तमानमां विद्यमान ज्ञानी पुरुषो छे तेमनुं अने भविष्यमां थनारा ज्ञानी पुरुषोनुं मोक्षमार्ग माटे एक ज प्रकारनुं कथन छे एम १३४ मा दोहरामां कह्युं छे. मोक्षनो मार्ग एक ज छे एम कहेता संवत् १९४५ मां श्रीमाने एक लेखमां कह्यु छे के,

आगळ ज्ञानी थइ गया, वर्त्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मार्गभेद नहीं कोय.

" मोक्षना मार्ग बे नथी जे जे पुरुषो मोक्षरूप परमशातिने भूतकाळे पाम्या, ते ते सघळा सत्पुरुषो एक ज मार्गेथी पाम्या छे, वर्त्तमानकाळे पण तेथी ज पामे छे, भविष्यकाळे पण तेथी ज पामशे. ते मार्गमां मतभेद नथी, असरळता नथी, उन्मत्तता नथी, भेदाभेद नथी, मान्यामान्य नथी, ते सरळ मार्ग छे, ते समाधिमार्ग छे, तथा ते स्थिरमार्ग छे, अने स्वाभाविक शाति स्वरूपे छे. सर्वकाळे ते मार्गनु होवापणु छे मार्गना मर्मने पाम्याविना कोइ भूतकाळे मोक्ष पाम्या नथी, वर्त्तमानकाळे पामता नथी, अने भविष्यकाळे पामशे नहीं. श्रीजिने सहस्र क्रियाओ अने सहस्र उपदेशो ए एक ज मार्ग आपवा माटे कह्यां छे, ने ते मार्गने अर्थे ते क्रियाओ अने उपदेशो ग्रहण थाय, तो सफळ छे, अने ए मार्गने भूली जइ ते क्रियाओ, अने ते उपदेशो ग्रहण थाय, तो ते सौ निष्फळ छे श्रीमहावीर जे वाटेथी तर्या ते वाटेथी श्रीकृष्ण तरशे, जे वाटेथी श्रीकृष्ण तरशे, ते वाटेथी श्रीमहावीर तर्या छे. ए वाट गमे त्या बेठां, गमे ते काळे, गमे ते श्रेणिमां, गमे ते योगमां ज्यारे पमाशे त्यारे, पवित्र, शाश्वत, सत्पदना अनत अतींद्रिय सुखनो अनुभव थशे. ते वाट सर्व स्थळे संभवित छे. योग्य सामग्री नहीं मेळववाथी भव्य पण ए मार्ग पामतां अटक्यां छे, तथा अटकशे, अने अटक्यां हतां कोइ पण धर्मसंबधी मतभेद राखवो छोडी दइ, एकाग्रभावथी सम्यक्योगे ए ज मार्ग सशोधन करवानो छे. विशेप शुं कहेवु ? ते मार्ग आत्मामां रह्यो छे आत्मत्वप्राप्य पुरुष–निर्ग्रंथ आत्मा ज्यारे योग्यता गणीने आत्मत्व अर्पशे–उदय आपशे त्यारे ज ते प्राप्त थशे, त्यारे ज तेनी वाट मळशे, त्यारे ज ते मतभेदादिक जशे. मतभेद राखी

कोइ मोक्ष पाम्या नथी; विचारीने जेणे मतभेदने टाळ्यो, ते अंतर्वृत्तिने पामी क्रमे करी शाश्वतमोक्षने पाम्या छे, पामे छे अने पामशे. ”

सर्व जीव आत्मसत्ताए तो समान छे, तथापि सम्यक् वस्तु जाणवाना अभावे ससारपरिभ्रमण करे छे. जो खरू समजाय, तो पूर्वे जेओ सिद्धिपदने पाम्या छे, तेओनी पेठे सर्व जीवो ते सिद्धिपदने पामी शके. आ सामान्यवचन छे. आ वात श्रीजिनसिद्धांतमां ‘ भव्य ’ अने ‘ अभव्य’ जीवोनी गतिस्थितिविषे कह्यु छे तेने वाधक गणवानी नथी, केमके जेम श्रीमान् राजचंद्रे कह्युं छे

–सर्व जीव छे सिद्ध सम, जे सम जे ते थाय;

तेम सर्व जैनतत्त्वज्ञानीओए कह्युं छे. “ सिद्धप्राभृत ” मां कह्यु छे के,

जारिस सिद्ध सहावो । तारि सहावो सव्वजीवाणां ॥
तह्मा सिद्धंत रुइ । कायव्वा भव्व जीवेहिं ॥

“ जेवुं सिद्ध भगवाननुं आत्मस्वरूप छे, तेवुं सर्व जीवोनु आत्मस्वरूप छे, ते माटे भव्य जीवोए सिद्धत्वने विषे रुचि करवी. ”

आत्मसत्ताए सर्व जीवो समान छतां जेओए आत्मस्वरूपरूप वस्तु प्राप्त करी नथी तेओ केम प्राप्त करी शके ते सबंधीनुं विवेचन १३५–१३६ दोहरामां कर्यु छे. शास्त्रनो एक सिद्धांत छे के, कोइ पण वस्तु वे कारणो मळ्याविना न थाय. एक ‘मूळ’ अथवा ‘ उपादान ’ कारण, अने बीजुं ‘ निमित्त ’ अथवा उत्तरकारण. आ बे कारणो मळे तोज वस्तुसिद्धि थाय. आत्मस्वरूपनी प्राप्ति माटे उपादानकारणरूप तो आत्मानां ज्ञानदर्शनादि छे, अने निमित्तकारणोमां

सद्गुरुआज्ञा अने जिनदशानु ध्यान ए मुख्यपणे छे. जेओ उपादाननुं नाम लइ निमित्तकारणने तजी दे, अने निमित्तमां आग्रह राखी उपादानने तजी दे तेओने बन्नेप्रत्ये योग्य जागृति राखवा अर्थे ग्रथकर्त्ता पुरुषे नीचेनां वचनो कह्यां छे:–" सद्गुरु आज्ञा आदि ते आत्मसाधनना निमित्तकारण छे, अने आत्मानां ज्ञानदर्शनादि उपादानकारण छे, एम शास्त्रमां कह्युं छे, तेथी उपादाननुं नाम लइ जे कोइ ते निमित्तने तजशे ते सिद्धपणाने नहीं पामे, अने भ्रांतिमा वर्त्या करशे, केमके साचा निमित्तना निषेधार्थे ते उपादाननी व्याख्या शास्त्रमां कही नथी, पण उपादान अजागृत राखवाथी तारु साचां निमित्त मळ्या छतां काम नहीं थाय, माटे साचा निमित्त मळ्ये ते निमित्तने अवलंबीने उपादान सन्मुख करवु, अने पुरुषार्थरहित न थवुं, एवो शास्त्रकारे कहेलो ते व्याख्यानो परमार्थ छे. "

१३७ थी १४० मा दोहरा सुधीमां ज्ञानी अने मुमुक्षुनां लक्षणो कह्यां छे. जे तेजस्वी भाषा आ लक्षणो दर्शावतां ग्रंथकारे मूकी छे ते आ प्रमाणे छे:–

मुखथी ज्ञान कथे अने, अंतर् छूट्यो न मोह;
ते पामर प्राणी करे, मात्र ज्ञानीनो द्रोह.
दया, शांति, समता, क्षमा; सत्य, त्याग, वैराग्य;
होय मुमुक्षु घटविषे, एह सदाय सुजाग्य.
मोह भाव क्षय होय ज्यां, अथवा होय प्रशांत,
ते कहिये ज्ञानी दशा, बाकी कहिये भ्रांत.

सकळ जगत् ते एठवत्, अथवा स्वप्नसमान;
ते कहिये ज्ञानी दशा, बाकी वाचाज्ञान.

'आत्मा छे,' 'आत्मा नित्य छे,' 'आत्मा पोताना कर्मनो कर्त्ता छे,' 'आत्मा पोताना कर्मनो भोक्ता छे,' 'मोक्ष छे,' अने मोक्षनो उपाय छे, ए जे छ पदपर आ ग्रंथमां विवेचन कर्यु तेमां प्रथमनां पांच पद 'ज्ञेय' अर्थात् जाणवा योग्य छे, अने छेल्लुं पद "मोक्षनो उपाय छे" ए 'उपादेय' अर्थात् आदरवा (आचरण करवायोग्य) छे, ए वात १४१ मा दोहरामां कही छे. १४२ मा दोहराए ग्रंथ पूर्णता पामे छे:

देह छतां जेनी दशा, वर्त्ते देहातीत;—
ते ज्ञानीनां चरणमां, हो वंदन अगणित.

श्रीमान् राजचंद्र १४२ मा दोहराए ग्रंथनी पूर्णता करे छे. जेम ग्रंथप्रारंभमां नमस्कार करवानी पद्धति ग्रंथकारो राखे छे तेम ग्रंथपूर्णता करतां पण घणा ग्रंथकारो नमस्कार करवानी पद्धति राखे छे. श्रीमान् राजचंद्रे एवा पुरुषने नमस्कार कर्यो छे के जे पुरुषनी दशा "देह छतां निर्वाण" अथवा "देह छतां देहातीत." वर्त्तती होय, अर्थात् जेओने जीवन्मुक्तता वर्त्तती होय. अगाउ कही जवामां आव्युं छे के, जीवन्मुक्तदशा तेरमा सयोगीकेवलीगुणस्थानके होय छे. तेरमा सयोगीकेवलीगुणस्थानके स्थिति धरावता एवा उपदेशना आपनार श्री अर्हत् छे, अने श्री अर्हत्‌ने नमस्कार करवानो हेतु शो छे ते 'नवकारमंत्र' ना क्रमथी समजी शकाय छे श्री अर्हत् उपदेश आपवारूप कार्य करी शकता होइ तेओ प्रत्यक्ष सद्गुरु छे,

अने आत्मकल्याण माटे प्रत्यक्ष सद्गुरु अद्वितीय बळवान साधन छे माटे तेओने वदन करेल छे. अगणितवार वंदन करवानो हेतु ए छे के आत्मा जेवी सर्वोत्कृष्ट वस्तु तेओए पमाडी छे

देह छतां देहातीत दशा सपूर्णपणे तो तेरमा सयोगीकेवलीगुणस्थानके होय छे, परंतु छट्ठा अने सातमा गुणस्थानकेथीज केवी अद्भुत दशा होय छे तेनु भान नीचेना श्रीमान् बनारसीदासजीए 'परमपुरुष-दशावर्णन, नामक लखेल एक काव्य अने ते पर श्रीमान् राजचंद्रे लखेला विवेचन परथी जणाशे.—

कीचसो कनक जाके, नीचसो नरेशपद;
मीचसी मिताइ गरवाइ जाके गारसी.
जहरसी जोग जानि कहरसी करामति.
हहरसी हौंस पुद्गल छवी छारसी;
जालसो जगविलास, भालसो भुवनवास.
कालसो कुटुंबी काज, लोकलाज लारसी.
सीठसो सुजस जानै, बीठसो वखत मानै,
एसी जाकी रीति ताही, वंदत बनारसी.

"जे कचनने कादवसरखुं जाणे छे, राजगादीने नीचपद सरखी जाणे छे, कोइथी स्नेह करवो तेने मरणसमान जाणे छे, मोटाइने लीपवानी गार जेवी जाणे छे, किमिया वगेरे जोगने झेर समान

सकळ जगत् ते एठवत्, अथवा स्वप्नसमान;
ते कहिये ज्ञानी दशा, बाकी वाचाज्ञान.

'आत्मा छे,' 'आत्मा नित्य छे,' 'आत्मा पोताना कर्मनो कर्त्ता छे,' 'आत्मा पोताना कर्मनो भोक्ता छे,' 'मोक्ष छे,' अने मोक्षनो उपाय छे, ए जे छ पदपर आ ग्रंथमां विवेचन कर्यु तेमां प्रथमनां पांच पद 'ज्ञेय' अर्थात् जाणवा योग्य छे, अने छेल्लुं पद "मोक्षनो उपाय छे" ए 'उपादेय' अर्थात् आदरवा (आचरण करवायोग्य) छे, ए वात १४१ मा दोहरामां कही छे. १४२ मा दोहराए ग्रंथ पूर्णता पामे छे:

देह छतां जेनी दशा, वर्त्ते देहातीत;—
ते ज्ञानीनां चरणमां, हो वंदन अगणित.

श्रीमान् राजचंद्र १४२ मा दोहराए ग्रंथनी पूर्णता करे छे. जेम ग्रंथप्रारंभमां नमस्कार करवानी पद्धति ग्रंथकारो राखे छे तेम ग्रंथपूर्णता करतां पण घणा ग्रंथकारो नमस्कार करवानी पद्धति राखे छे. श्रीमान् राजचंद्रे एवा पुरुषने नमस्कार कर्यो छे के जे पुरुषनी दशा "देह छतां निर्वाण" अथवा "देह छतां देहातीत" वर्त्तती होय, अर्थात् जेओने जीवन्मुक्तता वर्त्तती होय. अगाउ कही जवामां आव्युं छे के, जीवन्मुक्त-दशा तेरमा सयोगीकेवलीगुणस्थानके होय छे तेरमा सयोगीकेवलीगुणस्थानके स्थिति धरावता एवा उपदेशना आपनार श्री अर्हत् छे, अने श्री अर्हत्‌ने नमस्कार करवानो हेतु शो छे ते 'नवकारमंत्र' ना क्रमथी समजी शकाय छे. श्री अर्हत् उपदेश आपवारूप कार्य करी शकता होइ तेओ प्रत्यक्ष सद्गुरु छे;

अने आत्मकल्याण माटे प्रत्यक्ष सद्गुरु अद्वितीय बळवान साधन छे माटे तेओने वदन करेल छे. अगणितवार वंदन करवानो हेतु ए छे के आत्मा जेवी सर्वोत्कृष्ट वस्तु तेओए पमाडी छे

देह छतां देहातीत दशा सपूर्णपणे तो तेरमा सयोगीकेवलीगुणस्थानके होय छे, परंतु छट्ठा अने सातमा गुणस्थानकेथीज केवी अद्भुत दशा होय छे तेनु भान नीचेना श्रीमान् बनारसीदासजीए 'परमपुरुप-दशावर्णन, नामक लखेल एक काव्य अने ते पर श्रीमान् राजचंद्रे लखेला विवेचन परथी जणाशे:—

कीचसो कनक जाके, नीचसो नरेशपद;
मीचसी मिताइ गरवाइ जाके गारसी.
जहरसी जोग जानि कहरसी करामति.
हहरसी हौंस पुद्गल छबी छारसी;
जालसो जगविलास, भालसो भुवनवास.
कालसो कुटुंबी काज, लोकलाज लारसी.
सीठसो सुजस जानै, बीठसो वखत मानै,
एसी जाकी रीति ताही, वंदत बनारसी.

"जे कंचनने कादवसरखुं जाणे छे, राजगादीने नीचपद सरखी जाणे छे, कोइथी स्नेह करवो तेने मरणसमान जाणे छे, मोटाइने लीपवानी गार जेवी जाणे छे, किमिया वगेरे जोगने झेर समान

जाणे छे, सिद्धि वगेरे ऐश्वर्यने असाता समान जाणे छे, जगत्मां पूज्यता थवा आदिनी होंसने अनर्थ समान जाणे छे, पुद्गलनी छबी एवी औदारिकादि कायाने राख जेवी जाणे छे. जगतना भोगविलासने मुंझावारूप जाळ समान जाणे छे, घरवासने भाला समान जाणे छे, कुटुंबनां कार्यने काळ एटले मृत्यु-समान जाणे छे, लोकमां लाज वधारवानी इच्छाने मुखनी लाळ समान जाणे छे, कीर्त्तिनी इच्छाने नाकना मेल जेवी जाणे छे, अने पुण्यना उदयने जे विष्टासमान जाणे छे, एवी जेनी रीति होय तेने वनारसीदास वंदना करे छे. (जुओ, श्रीमद् राजचद्र, पृष्ट ४१९).

आ रीते, आवा परमपुरुषप्रत्ये वंदन करतां आ " आत्मसिद्धिशास्त्र " ग्रंथकार सपूर्ण करे छे. आ ग्रंथ 'द्रव्यानुयोग 'नो छे. जैनदर्शननां शास्त्रो चार प्रकारे वहेंचायेला छे. आ प्रकारने अनुयोग कहेवामां आवे छे. ते चार छे: १ द्रव्यानुयोग. २. गणितानुयोग. ३. चरणानुयोग अने ४ धर्मकथानुयोग. लोक (विश्व) ने विषे रहेलां द्रव्यो, तेनां स्वरूप, तेनां गुण, धर्म, हेतु, अहेतु पर्यायादि अनंत अनत प्रकारे छे तेनुं जेमां वर्णन छे ते 'द्रव्यानुयोग.' आ द्रव्यानुयोगनु स्वरूप समजाया पछी, केम चालवुं, ते संबंधीनुं वर्णन जे अनुयोगमां छे ते 'चरणानुयोग.' लोकने विषे रहेला पदार्थ, भाव, क्षेत्र, कालादि जे गणत्रिद्वाराए सिद्ध थाय छे ते गणत्रि जे अनुयोगमां दर्शावेल छे ते 'गणितानुयोग.' सत्पुरुषना धर्मचरित्रनी कथाओ जेमां छे ते 'धर्मकथानुयोग.' द्रव्यानुयोगनी विशेषता नीचेना शब्दोमां श्रीमान् राजचंद्रे, परमपुरुषो अनुसार गाइ छे:—

" द्रव्यानुयोग परम गंभीर अने सूक्ष्म छे. निर्ग्रंथ प्रवचननुं रहस्य छे शुक्लध्याननुं अनन्य कारण छे. शुक्लध्यानवडे केवळज्ञान समुत्पन्न थाय छे. महाभाग्यवडे ते 'द्रव्यानुयोग 'नी प्राप्ति थाय छे. दर्शन-

मोहनो अनुभाग घटवाथी, अथवा नाश पामवाथी, विषयप्रत्ये उदासीनताथी, अने महत्पुरुषनां चरण-कमळनी उपासनाना बळथी ‘ द्रव्यानुयोग ’ परिणमे छे जेम जेम सयम वर्द्धमान थाय छे, तेम तेम ‘ द्रव्यानुयोग ’ यथार्थ परिणमे छे सयमनी वृद्धिनु कारण सम्यग्दर्शननुं निर्मलत्व छे, तेनु कारण पण ‘ द्रव्यानुयोग ’ थाय छे. सामान्यपणे ‘ द्रव्यानुयोग ’नी योग्यता पामवी दुर्लभ छे. आत्माराम परिणामी, परमवीतराग दृष्टिवंत, परमअसंग एवा महात्मा पुरुषो तेनां मुख्यपात्र छे. हे आर्य ! ‘ द्रव्यानुयोग ’नु फळ सर्व भावथी विराम पामवारूप संयम छे, ते आ पुरुषनां वचन तारा अंतःकरणमां तुं कोइ दिवस शिथिल करीश नहीं. वधारे शु ? समाधिनु रहस्य ए ज छे. सर्व दु.खथी मुक्त थवानो अनन्य उपाय ए ज छे. ”

आवा परम कल्याणकर्त्ता ‘द्रव्यानुयोग’ मां वर्णवेला पदार्थोमां पामवा योग्य पदार्थ जे आत्मा तेना स्वरूप संबंधीनो आ ‘आत्मसिद्धिशास्त्र’ नामना ग्रथमां विचार कर्यो छे. जो तेने सम्यक्वृत्ति अने सम्यक् विचारणाए अवलोकवामां आवशे तो तेनो उपकार प्रतीत थशे. जैनना आ ‘द्रव्यानुयोग’ ना माहात्म्यविषे मारा जेवा पामर जीवथी जे कइ पण कहेवामां आवे ते जेम बाळक समुद्रनो विस्तार दर्शाववा माटे हाथनी बांह्यो पसारीने बतावे तेना जेवुं छे. वर्त्तमान समयमां पाश्चात्यविज्ञानशास्त्र (Science)थी लोको चकित थइ गया छे. जो के पाश्चात्य शोधको जे शोधो करे छे ते शोधो माटे करवामां आवता पुरुषार्थने जेटलो प्रशंसीए तेटलो ओछो छे, परतु तेनी साथे कहेवुं जोइए के, ते जैनना ‘ द्रव्यानुयोग ’ अने ‘ गणितानुयोग ’ पासे किंचित् मात्र विसातमां नथी प्रोफेसर हक्सली, मी० हर्बर्ट स्पेन्सर, मी० एडिसन वगेरे शोधकोए करेली शोधोए वर्त्तमान जीवोने आंजी दीधा छे, परंतु जो तेओनी शोध जैनना आ

जाणे छे, सिद्धि वगेरे ऐश्वर्यने असाता समान जाणे छे, जगत्‌मां पूज्यता थवा आदिनी होंसने अनर्थ समान जाणे छे, पुद्गलनी छत्री एवी औदारिकादि कायाने राख जेवी जाणे छे. जगत्‌ना भोगविलासने मुंझावारूप जाळ समान जाणे छे, घरवासने भाला समान जाणे छे, कुटुंबनां कार्यने काळ एटले मृत्यु-समान जाणे छे, लोकमां लाज वधारवानी इच्छाने मुखनी लाळ समान जाणे छे, कीर्त्तिनी इच्छाने नाकना मेल जेवी जाणे छे, अने पुण्यना उदयने जे विष्टासमान जाणे छे, एवी जेनी रीति होय तेने वनारसीदास वंदना करे छे. (जुओ, श्रीमद् राजचंद्र, पृष्ठ ४१९).

आ रीते, आवा परमपुरुषप्रत्ये वंदन करतां आ " आत्मसिद्धिशास्त्र " ग्रंथकार संपूर्ण करे छे. आ ग्रंथ 'द्रव्यानुयोग'नो छे. जैनदर्शननां शास्त्रो चार प्रकारे वहेंचायेला छे. आ प्रकारने अनुयोग कहेवामां आवे छे. ते चार छे: १. द्रव्यानुयोग. २ गणितानुयोग. ३. चरणानुयोग अने ४ धर्मकथानुयोग. लोक (विश्व) ने विषे रहेलां द्रव्यो, तेनां स्वरूप, तेनां गुण, धर्म, हेतु, अहेतु पर्यायादि अनंत अनंत प्रकारे छे तेनुं जेमां वर्णन छे ते 'द्रव्यानुयोग.' आ द्रव्यानुयोगनु स्वरूप समजाया पछी, केम चालवु, ते संबंधीनुं वर्णन जे अनुयोगमां छे ते 'चरणानुयोग.' लोकने विषे रहेला पदार्थ, भाव, क्षेत्र, कालादि जे गणत्रिद्वाराए सिद्ध थाय छे ते गणत्रि जे अनुयोगमां दर्शावेल छे ते 'गणितानुयोग.' सत्पुरुपना धर्मचरित्रनी कथाओ जेमां छे ते 'धर्मकथानुयोग.' द्रव्यानुयोगनी विशेपता नीचेना शब्दोमां श्रीमान् राजचंद्रे, परमपुरुपो अनुसार गाइ छे:–

" द्रव्यानुयोग परम गंभीर अने सूक्ष्म छे. निर्ग्रंथ प्रवचननु रहस्य छे. शुक्लध्याननुं अनन्य कारण छे. शुक्लध्यानवडे केवळज्ञान समुत्पन्न थाय छे. महाभाग्यवडे ते 'द्रव्यानुयोग'नी प्राप्ति थाय छे. दर्शन-

मोहनो अनुभाग घटवाथी, अथवा नाश पामवाथी, विषयप्रत्ये उदासीनताथी, अने महत्पुरुषनां चरण-कमळनी उपासनाना बळथी ' द्रव्यानुयोग ' परिणमे छे जेम जेम संयम वर्द्धमान थाय छे, तेम तेम ' द्रव्यानुयोग ' यथार्थ परिणमे छे. संयमनी वृद्धिनु कारण सम्यग्दर्शननु निर्मलत्व छे, तेनु कारण पण ' द्रव्यानुयोग ' थाय छे. सामान्यपणे ' द्रव्यानुयोग 'नी योग्यता पामवी दुर्लभ छे आत्माराम परिणामी, परमवीतराग दृष्टिवंत, परमअसंग एवा महात्मा पुरुषो तेनां मुख्यपात्र छे. हे आर्य ! ' द्रव्यानुयोग नुं फळ सर्व भावथी विराम पामवारूप संयम छे, ते आ पुरुषनां वचन तारा अंतःकरणमा तुं कोइ दिवस शिथिल करीश नहीं. वधारे शुं ? समाधिनु रहस्य ए ज छे. सर्व दुःखथी मुक्त थवानो अनन्य उपाय ए ज छे. "

आवा परम कल्याणकर्त्ता 'द्रव्यानुयोग' मां वर्णवेला पदार्थोमां पामवा योग्य पदार्थ जे आत्मा तेना स्वरूप संबंधीनो आ 'आत्मसिद्धिशास्त्र' नामना ग्रथमा विचार कर्यो छे जो तेने सम्यक्वृत्ति अने सम्यक्-विचारणाए अवलोकवामां आवशे तो तेनो उपकार प्रतीत थशे. जैनना आ 'द्रव्यानुयोग' ना माहात्म्यविषे मारा जेवा पामर जीवथी ज कइ पण कहेवामां आवे ते जेम बाळक समुद्रनो विस्तार दर्शाववा माटे हाथनी बांहो पसारीने बतावे तेना जेवु छे. वर्त्तमान समयमां पाश्चात्यविज्ञानशास्त्र (Science)थी लोको चकित थइ गया छे. जो के पाश्चात्य शोधको जे शोधो करे छे ते शोधो माटे करवामां आवता पुरुषार्थने जेटलो प्रशंसीए तेटलो ओछो छे परतु तेनी साथे कहेवुं जोइए के, ते जैनना ' द्रव्यानुयोग ' अने ' गणितानुयोग ' पासे किंचित मात्र विसातमा नथी. प्रोफेसर हक्स्ली, मी० हर्बर्ट स्पेन्सर, मी० एडिसन वगेरे शोधकोए करेली शोधोए वर्त्तमान जीवोने आजी दीधा छे, परतु जो तेओनी शोध जैनना आ

द्रव्यशास्त्रनी साथे सरखाववामां आवे, तो अनुभव थाय के ते केटली पामर छे. आ वात जैनप्रत्ये मोह छे ते कारणे कहेवामां नथी आवती, परंतु वस्तुस्थिति तेम कहेवरावे छे.

पाश्चात्यविज्ञानविद्याना आश्रये आज सुधीमां जे जे शोधो थइ छे तेमां सर्वोत्कृष्ट शोध आपणा भारतवासी शोधक कलकत्तावाळा डॉक्टर जगदीशचंद्र बोझनी गणाय छे. तेओए सात वर्ष उपर पोतानी जगप्रसिद्ध शोध ए करीके, Animals (त्रसकाय जीवो ?)नी पेठे वनस्पतिमां जेम जीव छे, तेम धातु आदिमां पण छे. आ शोधथी आखी पाश्चात्यविज्ञानसृष्टि विस्मयता पामी गइ हती. डॉक्टर बोझ प्रत्ये, अमने एक स्वदेशी शोधके, पाश्चात्य विज्ञानवेत्ताओ करतां विशेष करी बताव्युं ते माटे उत्तम भाव थाय छे, तथापि तेनी साथे आ वात लक्ष्यमां रहेवी जोइए के, ए शोध जैन शिवायनी सृष्टिने नूतन लागी छे, केमके जैनसृष्टिने ए वात तो सहस्र वर्षो थयां जाणवामां छे. डॉक्टर बोझ धातुआदिमां जीवनुं अस्तित्व जे प्रकारे स्वीकारे छे ते प्रकारमां तेने हजु कांइ पण फेरफार करवो पडशे, एम जैनदृष्टिए लागे छे. आत्मानी पेठे परमाणुओनी शक्तिओ पण अनंत छे, अने ए अनंत शक्तिओ एवी छे के, जे मात्र शुद्ध निर्मल आत्मत्व पाम्येथी अनुभवगोचर थाय छे. धातु आदिमां जीव छे ए, तो जैन 'पृथ्वीकाय-जीव ' माने छे तेथी सिद्ध छे, परंतु ए जीवो क्यारे च्यवन पामे छे, क्यारे जन्मे छे, क्यारे मरण पामे छे ते जाणवानु हजी डॉक्टर बोझ माटे रहे छे. एम लागे छे के, डॉक्टर बोझ च्यवनादिना विषयमां प्रवेश करे, तो परमाणुओ अने जीव बन्नेनी भिन्न भिन्न अनंत शक्तिओ छे, अने ते भिन्न भिन्न अनंत शक्तिओ वच्चे तेओ जे तफावत पाडे छे ते करतां विशेष पाडवो जोइए एम तेओने प्रतीत थाय.

इंग्लंडमां प्रकट थता "पॉलमॉलगेझिट" मां प्रख्यात पाश्चात्यविज्ञानवेत्ता डॉक्टर सॅलीवीए सी. डबल्यु एम नी सहीथी " डॉक्टर बोझनी शोधो माटे अत्यत प्रशसा करता एक लेख लख्यो छे. जेमां डॉक्टर बोझनी शोध माटे आ प्रमाणे जणावे छे —*

"एक विज्ञान (Science) अने बीजा विज्ञान वच्चे केटला वधा क्षुद्र, कृत्रिम, अने संकुचित अवरोधो रहेला छे एनु जोइ शकनार विद्वानोमा प्रख्यात नर साम्प्रत समयमा एक हिंदवासी पदार्थविज्ञान-शास्त्री अने कलकत्तानी युनिवार्सिटीना प्रोफेसर जगदिशचद्र बोझ छे. पश्चिम युरोपमां लिखित भाषा प्रचारमा आवी ते पहेलां आर्यो के जेमणे वगवर कहीए तो केटलाक युगो पहेलां जगत्ने जाहेर कर्युं हतु के सत्य एक–अद्वितीय छे (आ ऋग्वेद परथी प्रत्यक्ष थाय छे) ते आर्योमांना एक उक्त विद्वान् छे. सात वर्ष पहेला डॉक्टर बोझे सजीव अने जडमां प्रतिक्रिया आपवानी शक्ति सबंधे तपास अने शोध करवानु शरु कर्यु हतु. आ सबंधे तेमणे पुस्तक प्रसिद्ध कर्यु छे. उक्त तपास अने शोधने वधारे लांबा रस्तामा लइ जवाने तेओ शक्तिमान थया छे, अने ते तेमणे पोताना ' एक बीजाने सरखावी जोतां विजळीना प्रयोगथी सिद्ध थतुं प्राणीगुणधर्मशास्त्र' (Comparative Electro-Physiology) ए नामनुं

*Notable at the present day amongst those who see how puny and artificial and cramping are the accepted barriers between the sciences is an Indian physicist, Professor Jagadish Chandra Bose of the University of Calcutta—who belongs, appropriately enough, to the race which declared, ages before Western Europe had a written language at all, that "the Real is One," as the Rig-Veda has it. Seven years ago, Dr Bose began the inquiries into response in the living, (and the not living,) which he has now carried a long stage further in his book "Comparative Electro-Physiology," just published by Messrs Longmans, Green and Co. The general purport of Dr Bose's former work was to show that reactions for

पुस्तक के जे हमणां ज 'मेसर्स लॉंगमेन्स ग्रीननी कंपनी'ए प्रसिद्ध कर्युं छे तेमां विस्तारपूर्वक जणावेल छे. डॉक्टर बोझना प्रथम पुस्तकनो सार ए बतावबानो हतो के, पहेलां एम जे मनातुं हतुं के प्राणिओना जीवतां स्नायुनी झीणी शीराओ ज फक्त प्रतिक्रियाओ आपी शके छे, ते हवे घणे मोटे अशे वनस्पतिनी नसोमां पण जोइ शकाय छे; एटलु ज नहीं पण जड वस्तुओ जेवी के कलइना पतरां अने बीजा सघळा जड पदार्थोमां देखी शकाय छे. सजीव वस्तु जेवी के प्राणीओ अने वनस्पति ए द्रव्य वस्तुओ छे, अने तेओ पोतानी अंदर रहेलां परमाणुओनी प्रतिक्रियाओ जेवी रीते अस्त्राने थाक लागे छे ते वखते जेवी प्रतिक्रियाओ थाय छे तेवी दर्शावे छे. जेम डॉक्टर बोझे दर्शावेलुं जणाय छे तेम आ प्रतिक्रियाओ ज्ञानतंतुने लागता श्रमनी साथे अदृश्य ज नहीं परंतु संभावित रीते ते अदृश्य करतां पण विशेष अने विशेष मळती आवे छे. जेनी अंदर वस्तुपर थयेली असर पोतानी मेळे बराबर नोंधाइ जाय एवां घणां ज उत्तम अने सूक्ष्मयंत्रथी पोताना पुस्तकमां बतावेली तपासोने दृढ करी तेने विस्तारपूर्वक वचारवामां डॉक्टर बोझ खास करीने ध्यानमां राखवा योग्य रीते शक्तिमान निवड्या छे. वळी वधारे जाणवा योग्य तो ए थइ पडशे के, पोतानी तपासोना केटलाक परिणामो तो डॉक्टर बोझ जर्मनीना मानसशास्त्रीओ पासे चर्चवाना छे.

---

merly thought to be peculiar to the living muscular tissue of animals are in a large measure to be detected in vegetable tissues, and also in inorganic matter—strips of tin, and what not Living matter, animal or vegetable, is matter, and displays molecular reactions similar to those involved in, for instance, the fatigue of a razor–which, as Dr Bose seems to have shown is probably more than analogous to the fatigue of a nerve By means of the most delicate apparatus, which is strictly self-recording, Dr Bose has

"प्राणीगुणधर्मशास्त्री जुदी जुदी जातनी चेतनावृद्धिथी सजीव वस्तुना यथार्थ स्वरूपनी खात्री करवाने प्रयत्न करे छे. आपणे जेने जींदगीना नामथी ओळखीए छीए ते जींदगीनी स्थितिमां रहेली वस्तुना ऊपर आधार राखती खास प्रतिक्रियाओ अस्तित्व धरावे छे ए सत्य वातमां अंदेशो लावनार भाग्ये ज अज्ञ माणस मारी कल्पना प्रमाणे कोइ नथी एक जीवतु ज्ञानतंतु मृतज्ञानतंतु करतां जुदी ज रीते प्रतिक्रिया करे छे, परंतु नक्कर द्रव्यने साधारण रीते पोतानुं ज बंधारण होय छे ए वात स्पष्ट छे, बंधारण प्रमाणे ते नक्कर द्रव्यमां पोतानी अंदर रहेला अंतर्गत परमाणुओनी प्रतिक्रियाओ के जेपर ते नक्कर द्रव्यनुं नक्करपणुं जलीय अने वायवीय द्रव्य साथे सरखामणीमां आधार राखे छे, आम होवाथी प्राणीगुणधर्मशास्त्री ते नक्कर द्रव्यना नक्करपणाने लइने तेनापर पोतानां साधनोनो उपयोग करवाथी कइ प्रतिक्रियाओ थशे ते जाण्या वगर पोतानी तपासमां खरी अने पाकी शोध सुधारा तथा वधारा साथे करी शके एम धारवुं भाग्ये ज संभवित छे.

---

been able to confirm and extend his inquiries latterly in a very remarkable fashion, and it is interesting to learn that he is about to discuss some of his results before the psychologists in Germany

The physiologist endeavours to ascertain the exact behaviour of living matter in various stimuli. No one, I fancy, will be so foolish as to question that there are specific reactions dependent upon or involved in the state which we call life, a living nerve reacts otherwise than a deed nerve But it is evident that, if solid matter in general has its own architecture, its own inter molecular reactions—upon which its solidity depends as compared with the state of a liquid or a gas—the physiologist can scarcely expect to make real progress until he knows what rections his material will display simply in virtue of the fact that it is solid matter,

"कुदरतमां सदा ऐक्यता रहेली छे ए मुख्य विचारथी ज दोराइने डॉक्टर बोझ सजीव वनस्पतिनी नसोने चेतना वृद्धि आपतां तेनापर जेवी रीते प्राणीओनी नसोपर तेम थतां असर थाय छे तेवी ज बराबर असर थाय छे ए बतावी शक्या छे, एटलुं ज नहीं परंतु साथे विशेष अने महत्वनुं ए दर्शावी आप्युं छे के घणा रोपाओमां अमुक खास जातनी उष्णतावाहकता, अने सचेतनावाळां तांतणाओ छे के जेने भिन्न रीते ओळखावी शकाय अने तेनां नाम देखीती रीते पूर्ण यथार्थपणे 'वनस्पतिना ज्ञानतंतुओ' आपी शकाय. आ नाम जेओ 'प्राणीगुणधर्मात्मिक वनस्पतिशास्त्र'मां (Physiological-Botany) हमणां ज थयेली वधारे शोधथी अभिज्ञात हशे तेओने तो झाझुं असंगत लागशे नहीं. उक्त शोध ए छे के रोपाओमां अमुक जातनी खास इंद्रियबुद्धिओ छे अने तदुपरांत तेओमां खास जातना इंद्रियअवयवो छे, जेवां के सूर्यना तेजथी जेना पर तरत ज असर थती होय तेनी रचनाओ के जेने नानी आंखो-सूक्ष्मनयन कहेवामां आवे छे.

DR BOSE'S DISCOVERIES

Guided alone by the prime idea of the unity of Nature, Dr Bose has been able to show not merely that living vegetable tissues behave under stimulation in a fashion exectly parallel to that of animal tissues but even that in many plants fibres of peculiar conductivity and sensitivity can be isolated which it seems perfectly legitimate to call vegetable nerves The phrase will not seem so preposterous to those who are aware of the recent trend of physiological botany, the discovery of certain special senses in the plant, and even of special sense organs, such as the photo-sensitive structures, which are now called ocelli or little eyes.

"[illegible] उपर [illegible] नवी शोधो 'प्राणीगुणधर्मात्मिक मानसशास्त्र'ना (Physiological-Psychology) प्रदेशमां नवो विस्तार अने मदत. [illegible] उथल पाथल करे छे, अने ते कइ रीते, तेनो फक्त नानो सरखो [illegible] नहन संक्षेपमां करवानु [illegible] रहे छे डाक्टर बोझे शोधी काढ्यु छे के एक ज्ञानतंतु–स्नायुनी [illegible] आपना लंबाइमा बदलाय छे, अने ते ज्ञानतंतुपरनी असर अने फेरफार तरत ज [illegible] थाय तेम एक नहीं पण बे रीते करवामा बोझे फत्तेह मेळवी छे एक तो 'फोटोग्राफ' [illegible] पडी [illegible] तेम, अने ते 'सेन्सीटीव' कागळपर फेंकेला प्रकाशना किरणोने हलावीने अने बीजी [illegible] रीते [illegible] 'स्मोक्ड ग्लास' उपर लखे तेवु 'लिवर' हलावीने तदुपरांत, ज्ञानतंतुने विद्युच्छक्ति [illegible] पछी ते विद्युच्छक्तिनु केटलु परिमाण आपवामा आव्यु छे तेनु बराबर अने यथार्थ रीते डॉक्टर [illegible] शके छे, अने पछी ते परिमाणनु शुं थाय छे ते केटलेक अंशे खात्रीपूर्वक निर्धारी शके छे. [illegible] ज्ञानतंतुनी समग्र क्रियामां शक्ति के बळ केवी रीते वपराइने खूटी जाय छे ते प्रश्ननु समाधान करवामां डॉक्टर बोझे घणी मोटी फत्तेह मेळवी छे"

[illegible] pace remains for the merest indication of the manner in which these new researches extend towards and indeed actually invade, the domain of physiological phychology Dr Bose has found that a nerve like muscle alters in length under stimulation, and has succeeded in making the nerve record its own changes photographically (by moving a spot of light directed upon sensitive paper) and mechanically (by moving a lever writing upon smoked glass) Further, he has contributed largely to the question of the consumption of energy in nervous action since he can measure precisely the quantity of the [illegible] of electrical energy administered to the nerve, and then can ascertain, in some measure, what [illegible] of it. These remarks give an idea of the quantity, and but an imperfect notion of the quality of

"आ उपर जणावेली टीकाओ, डॉक्टर बोझे केटलुं (Quantity) कर्युं छे तेनो ख्याल आपे छे, परंतु तेमनी आ शोध केवा प्रकारनी छे (Quality) तेनुं ज्ञान आपवाने उपली हकीकत तद्दन अपूर्ण ज छे. दाखला तरीके वैद्यकमां काम आवती वनस्पतिओपर अने तेमां पण खास करीने आल्कोहोलपर डॉक्टर बोझना कामे अगर तपासे शुं असर करी छे ते जणाववाने हुं अशक्त निवड्यो छुं. छेवटे आ उपरथी कोइ पण खास करीने नोंधमां राखी शके के आ शोधो के जे मूळ कलइनां पतरां अने तेवा बीजा पदार्थोनी प्रतिक्रियाओना अभ्यासथी शरु थइ हती ते सघळी वधी वधीने मानसशास्त्रना प्रदेश-तरफ पण संचार करवा लागी छे. मूळ शोधक डॉक्टर बोझे आगळथी कार्यक्रम निश्चित करीने आ शोधो शोधी छे एम नथी, कारण के तेमने पहेलां ख्याल पण हतो नहीं के आम प्रयोगो करतां पोते कइ दिशामां घसडाइ जशे."

डॉक्टर बोझनी आ शोधे पाश्चात्य विज्ञानवेत्ताओमां तेओमाटे घणुं मान उत्पन्न कर्युं छे. आपणे पण एक स्वदेशीय तरीके तेओप्रत्ये जेटलो प्रमोद राखीए तेटलो ओछो छे. डॉक्टर बोझनी शोधो, जो जैन-सिद्धांतनी शोधोनी साथे सरखाववामां आवे, तो हजी घणी अल्प लागे तेम छे, परंतु डॉक्टर बोझनी शोधोथी बीजा बधां करतां जैनसृष्टिने विशेष हर्षनुं कारण छे, केमके जे वस्तु जैनमहात्माओए असंख्य वर्षो

Dr Bose's work I have, for instance, been able to make no allusion to his work on the action of drugs and of alcohol in special One may merely note, in conclusion, that these researches, which began with the study of response in strips of tin and the like, have led onwards to the domain even of Psychology itself, not from any determination of the worker, who had no idea at first, of the direction in which he would be led.

प्रदेश पोताना अद्भुत ज्ञानबळे जोई हती ते यथार्थ ज छे एवु डॉक्टर बोझनी शोधो दृढ करती थइ छे. एम छतां हालमा जाणु छे के डॉक्टर बोझनी शोधो जैनशोधोनी सरखामणीए घणी अल्प लागे तेम छे ते आ उपरथी वांचवामा आवशे. डॉक्टर बोझनुं कहेवुं एम छे के "सजीव वनस्पतिनी नसोने चेतनावाळा प्राणीओनी नसो पर जेवी रीते प्राणीओनी नसोपर तेम थता असर थाय छे तेवी ज रीते बराबर असर थाय छे, एटलु ज नहीं, परन्तु घणा रोपाओमा अमुक खास जातनी उष्णता, वाहकता अने सचेतनतावाळा ज्ञानतंतुओ छे. रोपाओमा अमुक जातनी खास इन्द्रियबुद्धिओ छे, अने तदुपरांत तेओमा खास इन्द्रियरचनाओ छे ज्यां के. स्पर्शना तेमनी तेनापर तरत ज असर थती होय तेवी रचनाओ के जेने नानी आंखो–सूक्ष्म नयन कहेवामा आवे छे." वनस्पतिना जीवो माटे "जैनजीवनशास्त्र" केटलो प्रकाश पाडी शके तेम छे ते नीचेनो भाग "षड्दर्शनसमुच्चय" नो लेवामा आव्यो छे ते परथी जणाशे –

"यथा मनुष्य शरीर आदि अनेकविध वनस्पतिना आवा शरीर जीवव्यापारविना मनुष्य शरीरना जेवा संघाळा होइ शके नहीं. जुओ जे प्रकारे, पुरुषशरीर बाल कुमार वृद्ध आदि दशा परिणाम भोगवतु होवाथी चेतनावान परिस्फुटतावाळु स्पष्ट चेतनावाळु जणाय छे, ते ज प्रकारे वनस्पतिशरीरने पण ते ज जाणवु. केमके केतक तरु बाल जन्म्यु, युवा थयु, वृद्ध थयु, एम अनुभव थाय छे. अने एम वनस्पतिशरीर पुरुषशरीर तुल्य छे एम समजाय छे, माटे ते चेतनावाळु पण छे ज वळी बालकुमार-वृद्धावस्थामा नियतकालिक मनुष्यशरीर जेम क्रमे क्रमे वृद्धि पामतु जणाय छे, ते ज प्रकारे वनस्पतिशरीर पण अंकुर, किसलय, शाखा, प्रशाखा, आदि अवस्थाविशेषथकी वृद्धि पामे छे तेम ज वळी मनुष्यशरीर जेम ज्ञानवान छे तेम वनस्पतिशरीर पण तेवु छे. केमके शमी, अगस्त्य, आमलकी, कडी, आदि वनस्पतिओने निद्रा अने प्रबोध होय छे तेथी ज्ञानवन्त थाय छे तेम ज मूळमा दाटेला द्रव्यराशिने वृक्ष

पोतानां मूलाडीआंथी वीटी ले छे, वड, पीपळा, लींबडा वगेरेने वर्षाऋतुना मेघनाद तथा शिशिर वायुथी अंकुर फूटे छे, अशोकतरुने नूपुर धारण करेला एवा सुकुमार कामिनीचरणनो प्रहार थतां पल्लव कुसुमादि आवे छे, फणसने युवतिना आलिगनथी तेम थाय छे, वकुलने सुगंधी दारुनो कोगळो रेडवाथी तेम थाय छे, चपकने सुरभि अने निर्मल एवा जलना सिचनथी तेम थाय छे, तिलकने कटाक्षे जोवाथी तेम थाय छे, शिरीषने पंचमस्वर संभळाव्याथी पुष्प आवे छे, पद्मादि प्रभाते विकसे छे, घोषातकी आदि सध्या काळे खीले छे, ने पीयणी वगेरे चंद्रोदयमां प्रफुल्ल थाय छे, मेघवृष्टि थतां ज घास उगी नीकळे छे, वेलीओ योग्य आश्रयने शोधीने उपर चढे छे, लाजालु वगेरे हाथ अडकाडतां मीचाइ जाय छे, एम वनस्पतिमात्रने पोतपोतानी विशिष्ट क्रिया स्फुट जणाय छे, अथवा वनस्पतिमात्र पोतपोतानी ऋतु-ए ज फल आपे छे आ वधी जे क्रिया कही ते तमाम तर्वादिमां ज्ञान न होय तो संभवे नहीं, माटे वनस्पतिमां चेतना छे ए सिद्ध थयुं. वळी मनुष्यादि शरीर जेम रसनादिनो छेद थतां सुकाय छे, तेम तरु-शरीर पण फल पल्लव मुकुलादि छिन्न थतां सुकावा मांडे छे एवो जे धर्म ते अचेतनने घटे नहीं. वळी मनुष्यशरीर जेम स्तनपान व्यंजनौदनादि आहार लेवाथी आहारनुं वनेलुं छे तेम वनस्पतिशरीर पण पृथ्वीजलादि आहार लेवाथी आहारनुं वने छे ने आ रीते आहार लेवो ते अचेतनने वनतुं नथी; माटे वनस्पतिशरीर सचेतन छे वळी जेम मनुष्यशरीर नियतायुष्वालुं छे तेम वनस्पतिशरीर पण नियतायुष्वालु छे, ने तेनुं वहुमां वहु आयुष् दशहजार जेटलुं छे. तेम ज मनुष्यशरीर इष्टानिष्ट आहारथी जेम वृद्धि हानिवालु जणाय छे तेम वनस्पतिशरीर पण जणाय छे वळी मनुष्यशरीरने नाना प्रकारना रोगथी जेम पांडुत्व, उदरवृद्धि, शोफ, कृशत्व, अंगुलीनासिकादिनुं नमी जवुं, गळी जवुं आदि जणाय छे, तेम वनस्पतिशरीरने पण रोग थकी पुष्प फल पत्र त्वचादि वदलाइ जाय छे, के जतां रहे छे.

जेम मनुष्यशरीरने औषधप्रयोगथी वृद्धि हानि के भांग्यातुट्या कुट्यानु मटी जवापणु थाय छे, ते ज प्रकारे वनस्पतिशरीरने पण थाय छे. मनुष्यशरीरने जेम रसायनस्नेहादि उपयोगथी विशिष्ट कांति, रस, बल आदि प्राप्त थाय छे, तेम वनस्पतिने पण विशिष्ट नभोजलादि सिचनथी विशिष्ट रस वीर्य स्निग्धत्वादि प्राप्त थाय छे. जेम स्त्रीशरीरने दोहदादि पूर्ण करवा पछी पुत्रादि प्रसव थाय छे, तेम वनस्पतिशरीरने पण दोहद पूर्ण कर्या पछी फल पुष्पादि जणाय छे. त्यारे हवे वनस्पतिनु सचेतनत्व साधवानो प्रयोग आ प्रमाणे वनस्पतिओ सचेतन छे आ प्रतिज्ञा सिद्ध करवाने अनेक हेतु आपी शकाय. (१) बाल कुमार वृद्धावस्था जणाय छे तेथी (२) नियतवृद्धि थाय छे तेथी (३) निद्रा प्रबोध स्पर्शादिथी लज्जालुना संकोचादि अने क्रियानी ते आश्रयभूत छे तेथी (४) अवयवादि छेद थता करमाय छे तेथी. (५) नियत प्रदेश थकी आहार ले छे माटे (६) इष्टानिष्टाहार निमित्त वृद्धि हानि थाय छे अने आयुष्यनी सीमा छे तेथी. (७) रोग संभवे छे तेथी (८) औषध प्रयोगथी सारु थवानो संभव जणाय छे तेथी (९) अमुक प्रयोगानुसार रसवीर्य स्निग्धत्वादि जणाय छे तेथी (१०) दोहद पूर्ण कर्याथी फल जणाय छे तेथी. आ आदि हेतु लेतां प्रत्येकने स्त्रीपुरुष शरीरादि उदाहरण पण सुलभ छे, अथवा आवा दश पूर्ण हेतु न लेतां एक ज प्रयोग करवो होय तो ते पण थाय वनस्पति सचेतन छे, केमके तेने जन्ममरण रोगादि समस्त क्रियानो संभव छे ."

वनस्पतिना जीवो माटे " जैनजीवनशास्त्र " जेटलो प्रकाश पाडी शके छे, तेटलो ज प्रकाश ते पृथ्वी, पाणी, तेजस् अने वायुना जीवो माटे पण पाडे छे. " जैनजीवनशास्त्र "नु एम कहेवुं छे के, " पृथ्वीना जीवो मसुरनी दाळ अथवा अर्धचन्द्रना आकारना छे. पाणीना जीवो पाणीना परपोटा जेवा छे. तेजस्कायना जीवो सोयना आकारना छे वायुना जीवो पताकाना आकारे छे. आ पृथ्व्यादिना जीवोने

पोतानां मूलाडीआंथी वींटी ले छे, वड, पीपळा, लींबडा वगेरेने वर्षाऋतुना मेघनाद तथा शिशिर वायुथी अंकुर फूटे छे, अशोकतरुने नूपुर धारण करेला एवा सुकुमार कामिनीचरणनो प्रहार थतां पल्लव कुसुमादि आवे छे, फणसने युवतिना आलिंगनथी तेम थाय छे. बकुलने सुगंधी दारूनो कोगळो रेडवाथी तेम थाय छे, चंपकने सुरभि अने निर्मल एवा जलना सिंचनथी तेम थाय छे; तिलकने कटाक्ष जोवाथी तेम थाय छे, शिरीषने पंचमस्वर संभळाव्याथी पुष्प आवे छे पद्मादि प्रभाते विकसे छे, घोषातकी आदि संध्या काळे खीले छे, ने पीयणी वगेरे चंद्रोदयमां प्रफुल्ल थाय छे, मेघवृष्टि थतां ज ताम्र उगी नीकळे छे, वेलीओ योग्य आश्रयने शोधीने उपर चडे छे, लाजालु वगेरे हाथ अडकाडतां संकोचाइ जाय छे. एम वनस्पतिमात्रने पोतपोतानी विशिष्ट क्रिया स्फुट जणाय छे, अथवा वनस्पतिमात्र पोतपोतानी ऋतु-ए ज फल आपे छे. आ बधी जे क्रिया कही ते तमाम तर्वादिमां ज्ञान न होय तो संभवे नहीं, माटे वनस्पतिमां चेतना छे ए सिद्ध थयुं. वळी मनुष्यादि शरीर जेम रसनादिनो छेद थतां मुझाय छे, तेम तरु-शरीर पण फल पल्लव मुकुलादि छिन्न थतां मुझावा मांडे छे. एवो जे धर्म ते अचेतनने घटे नहीं. वळी मनुष्यशरीर जेम स्तनपान व्यंजनौदनादि आहार लेवाथी आहारनु वधे छे तेम वनस्पतिशरीर पण पृथ्वीजलादि आहार लेवाथी आहारनुं वधे छे. ने आ रीते आहार लेवो ते अचेतनने बनतु नथी; माटे वनस्पतिशरीर सचेतन छे वळी जेम मनुष्यशरीर नियतायुष्वाळु छे तेम वनस्पतिशरीर पण नियतायुष्वाळुं छे, ने तेनुं वहुमां वहु आयुष् दशहजार जेटलुं छे. तेम ज मनुष्यशरीर इष्टानिष्ट आहारथी जेम वृद्धि हानिवाळु जणाय छे तेम वनस्पतिशरीर पण जणाय छे वळी मनुष्यशरीरने नाना प्रकारना रोगथी जेम पांडुत्व, उदरवृद्धि, शोफ, कृशत्व, अंगुलीनासिकादिनु नमी जवु, गळी जवुं आदि जणाय छे, तेम वनस्पतिशरीरने पण रोग थकी पुष्प फल पत्र त्वचादि बदलाइ जाय छे, के गळतां रहे छे.

जेम मनुष्यशरीरने औपधप्रयोगथी वृद्धि हानि के भांग्यातुट्या फुट्यानु मटी जवापणु थाय छे, ते ज प्रकारे वनस्पतिशरीरने पण थाय छे मनुष्यशरीरने जेम रसायनस्नेहादि उपयोगथी विशिष्ट कांति, रस, बल आदि प्राप्त थाय छे, तेम वनस्पतिने पण विशिष्ट नभोजलादि सिंचनथी विशिष्ट रस वीर्य स्निग्धत्वादि थइ आवे छे, जेम स्त्रीशरीरने दोहदादि पूर्ण करवा पछी पुत्रादि प्रसव थाय छे, तेम वनस्पतिशरीरने पण दोहद पूर्ण कर्या पछी फल पुष्पादि जणाय छे. त्यारे हवे वनस्पतिनु सचेतनत्व साधवानो प्रयोग आ प्रमाणे वनस्पतिओ सचेतन छे आ प्रतिज्ञा सिद्ध करवाने अनेक हेतु आपी शकाय. (१) बाल कुमार वृद्धावस्था जणाय छे तेथी (२) नियतवृद्धि थाय छे तेथी (३) निद्रा प्रबोध स्पर्शादिथी प्रफुल्लता संकोचादि अने क्रियानी ते आश्रयभूत छे तेथी (४) अवयवादि छेद थतां करमाय छे तेथी. (५) नियत प्रदेश थकी आहार ले छे माटे (६) इष्टानिष्टाहार निमित्त वृद्धि हानि थाय छे अने आयुष्यनी सीमा छे तेथी (७) रोग सभवे छे तेथी (८) औषध प्रयोगथी सारुं थवानो सभव जणाय छे तेथी. (९) अमुक प्रयोगानुसार रसवीर्य स्निग्धेत्यादि जणाय छे तेथी (१०) दोहद पूर्ण कर्याथी फल जणाय छे तेथी. ए आदि हेतु लेतां प्रत्येकने स्त्रीपुरुष शरीरादि उदाहरण पण सुलभ छे, अथवा आवा जुदा जुदा हेतु न लेतां एक ज प्रयोग करवो होय तो ते पण थाय वनस्पति सचेतन छे, केमके तेने जन्ममरण रोगादि समस्त क्रियानो सभव छे ”

वनस्पतिना जीवो माटे “ जैनजीवनशास्त्र ” जेटलो प्रकाश पाडी शके छे, तेटलो ज प्रकाश ते पृथ्वी, पाणी, तेजस् अने वायुना जीवो माटे पण पाडे छे. “ जैनजीवनशास्त्र ”नु एम कहेवुं छे के, “ पृथ्वीना जीवो मसुरनी दाळ अथवा अर्धचंद्रना आकारना छे. पाणीना जीवो पाणीना परपोटा जेवा छे. तेजस्कायना जीवो सोयना आकारवत् छे. वायुना जीवो पताकाना आकारे छे. आ पृथ्व्यादिना जीवोने

स्पर्श नामनी एक द्रव्य–व्यक्त (Patent) इंद्रिय छे. आ एक द्रव्य (Patent) इंद्रिय उपरांत बाकीनी चार भाव (Latent) इंद्रियो छे. मन पण भाव (Latent) मन छे. आ जीवोने त्रण प्रकारनां शरीरो छे. 'औदारिक' (बाह्यशरीर), 'तेजस्' (अन्नादिक पाचनकर्त्ता शरीर) अने 'कार्मण' कहेतां कर्मना समूहरूप. अन्नादि पाचन करवानी शक्ति (शरीर) जो आ एकेंद्रिय जीवोमां छे, तो पाचन करवाने लगता अवयवो पण होवा जोइए ए स्पष्ट छे. अव्यक्त (Latent) ज्ञानतत्त्व छे एटले ज्ञानतंतुओ पण होवां जोइए. वळी तेने श्वासोच्छ्वास छे एटले नसो पण होवी ज जोइए. "जैनजीवनशास्त्र" तो आगळ वधीने एम पण कहे छे के, आ एकेंद्रिय जीवोने आहारसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा, भयसंज्ञा, परिग्रहसंज्ञा, लोभ, मोह, माया तथा मान ए चार कषाय तथा लोकसंज्ञा अने ओघसंज्ञा ए अव्यक्तपणे (Latent) छे ज. वळी, तेने मतिअज्ञान अने श्रुतअज्ञान ए बे प्रकारनां ज्ञान पण अव्यक्तपणे छे. चक्षुदर्शन अने अचक्षुदर्शन ए प्रकारनां 'दर्शन' तथा अनाकार 'उपयोग' ए पण अव्यक्तपण रहेलां छे. चार मनयोग, चार वचनयोग अने त्रण काययोग पण भावपणे छे." जैनमहात्माओए जीवोनुं स्वरूप केवुं अद्भुतपणे प्ररूप्युं छे ते जाणवा माटे 'जीवाभिगम,' 'सूत्रकृतांग' 'प्रज्ञपन्ना,' 'भगवती,' आदि सूत्रो, अने 'कर्मग्रंथ,' 'गोमठ्ठसार,' 'विशेषावश्यक' आदि शास्त्रो अवलोकवा विनंति छे.

आ उपरथी कहेवानो हेतु एवो छे के, "जैनजीवनशास्त्र" अने "जैनपदार्थविज्ञान" एटलां बधां अद्भुत छे के, पाश्चात्य शोधो तेनी पासे अति पामर सिद्ध थाय तेवु छे.

हमणां हमणांमां पाश्चात्य परिणामवाद (Evolution theory) थी लोको विस्मय थइ गया छे. जैनना द्रव्यानुयोगमां द्रव्योनुं जे सूक्ष्म स्वरूप दर्शाववामां आव्युं छे ते पूर्ण अवलोक्याथी परिणामवादनी उत्पत्ति हमणां ज थइ छे एवो व्यामोह दूर थशे. भूस्तरविद्या (Geology) ना सिद्धांतो हमणां प्ररूपायां, अने त्यारबाद

सृष्टि अनादि छे एम मानवामा आव्युं. परतु ए सिद्धांत तो जैननो प्रथममां प्रथम छे. जैनना मानसशास्त्र (Psycological-Science) नी अपूर्वता केटली छे ते तो पाश्चात्य मानसशास्त्र (Psycologcal-science)-नी सरखामणी करवामा आवे त्यारे ज जणाय तेम छे. सृष्टिनो ईश्वर जेवो कर्त्ता कोइ नथी, पण बधुं स्वाभाविक रीते थयां करे छे एवु जे हवे स्वभाववादीओ (Naturalists) कहेवा शीख्या ते तो जैन काळांतर थया कहे छे, अने ते ज कारणे ते अपेक्षाए जैनीओ स्वभाववादीओ पण कहेवाय छे.

आम बतावी, अत्र एम आडम्बर करवानो उद्देश नथी राख्यो के, जैनमां सर्वस्व छे, केमके आडम्बर राखवानु कारण ज नथी, आडम्बर तो क्यारे होय के, ज्यारे मूळ वस्तु न होय, अने छे एम दर्शाववु होय. जैन तत्त्वज्ञान अभ्यासवाथी प्रतीत थशे के, श्री जिनेश्वरो खरेखर केवल्यज्ञानी ज हता, अने तेओना तेवा ज्ञानवळे ज वस्तुनुं यथार्थ स्वरूप जोइ, कही गया छे.

जैननी अद्भुतता बतावावामां आ लखनारने जेटलो हर्ष थाय छे, तेटलो ज खेद तेने एटला माटे थाय छे के, आवुं जे अद्भुत जैनतत्त्वज्ञान तेनो प्रकाश पाडवानां साधनो ते दर्शनमां अत्यत अल्प रह्यां छे. क्यां छे एवो पुरुपार्थ के जे समस्त मनुष्यमंडळने प्रतीत करावी शके के जैनज्ञाननी अद्भुतता अद्वितीय छे ?

विद्या (Science) ना अभ्यासीओ जे प्रकाश पाडी शके, ते शुद्ध आतमत्वने पामेला एवा ज्ञानीओना प्रकाश पासे अल्प ज रहेशे, ए निःसंशय छे. एक आर्यपाश्चात्यसंस्कारी विद्वाने हमणां ज कह्युं छे के,

" When we first received an European education, we allowed ourselves to be misled by the light of Science. Science is a light within a limited room, not the sun which illuminates the world. "

अर्थात् " आपणे ज्यारे प्रथम युरोप्यन शिक्षण मेळव्युं त्यारे आपणे आपणने पोतानी मेळे विद्या (Science) ना प्रकाशथी अन्यथा मार्गे चढावी दीधा. विद्या ए एक मर्यादित ओरडा विषेनो प्रकाश छे; अने नहीं के ते विश्वने प्रकाशित करनार सूर्य छे."

आ ज कारणे जेओने आत्माना ऐश्वर्यनुं भान छे ते पाश्चात्यविद्या (Science) थी अंजाइ जता नथी, के जे अंजाइ जवानुं परिणाम जडवाद (Science) ने पराधीन थवानुं छे. जेओने आत्मानुं कंइ पण भान छे तेओने तो श्री निर्ग्रंथप्रवचननां परमकृपालु वचन

"–जेणे आत्माने जाण्यो तेणे सर्व जाण्युं."

तेमां पूर्ण श्रद्धान् छे, अने ते अर्थे ज तेनी प्रवृत्ति होय छे. आ ग्रंथमां ते ज परमवस्तुनुं दर्पणवत् निरूपण कर्युं छे. श्री जिनेश्वरोए अत्यंत सूक्ष्मतापूर्वक पुद्गलपरमाणु आदि द्रव्योनुं स्वरूप जोयु छे, छतां ते पर ते परम कृपालुओए अने तेओने अनुसरनारा महात्माओए विशेष भार नथी मूक्यो, तेनु कारण एटलुं ज छे के तेओने ते पदार्थो अंतिम कल्याणना हेतुओ लाग्या नथी. आत्मा शिवायना पदार्थोमां तेओए अंतिम सारभूतपणुं मान्युं नथी. आत्मत्व पामवा माटे पुरुषार्थ कर्त्तव्य छे; अने ते पुरुषार्थनो प्रारंभ त्याग, वैराग्य, अने ज्ञानपूर्वक क्रियाथी थवो जोइए.

जेओ श्री जैनदर्शनपर आक्षेप करे छे के, जैनमां गुरुमाहात्म्य गायुं नथी तेओ आ ग्रंथनी कृतिथी जोइ शकशे के, तेओने ते भ्रांति छे. श्री वीतरागोए केवळज्ञान उत्पन्न थवाना छेल्ला समय सुधी सत्पुरुषना वचनोनुं अवलंबन कह्युं छे, अर्थात् बारमा क्षीणमोहगुणस्थानकपर्यंत श्रुतज्ञानथी आत्माना अनुभवने निर्मळ करतां करतां ते निर्मळता संपूर्णता पाम्ये केवळज्ञान उत्पन्न थाय छे; ते उत्पन्न थवाना प्रथम

समयसुधी सत्पुरुषे उपदेशेलो मार्ग आधारभूत छे एम कह्यु छे. मोक्षमार्ग पामवा माटे जे आवश्यक त्रण तत्त्वो श्री वीतरागे कह्या छे ते त्रण तत्त्वोमां सद्देव, सद्धर्म अने सद्गुरु ए त्रणे युगपद्भावे वर्णव्या छे ते ज वात श्री जैनदर्शनमा गुरुमाहात्म्य केटलुं गायु छे ते बतावा माटे बस छे.

एटलु खरु छे के, जे देश, काळ, भावने जे खास अगत्यनी बाबत होय तेनापर ज्ञानीपुरुषो विशेष भार मूके छे श्रीमान् हरिभद्राचार्यना समयमां लोकसमूहनी वृत्ति 'योगविद्या' प्रत्ये विशेषपणे गयेली जोइ, शासनआकर्षणता अर्थे, हरिभद्राचार्य, शुभचंद्राचार्यादि महत्पुरुषोए जैनशास्त्रोमां पण अद्भुत 'योग-विद्या'नु निरूपण कर्यु छे ते बतावा परमपुरुषार्थ कर्यो. कळिकाळसर्वज्ञ श्रीहेमचद्राचार्यना समयमां ब्राह्मणोप्रत्ये 'पांडित्य'ना कारणे लोकदृष्टि विशेष आकर्षायेली जोइ, श्रीहेमचद्रादि महात्माओए अद्वितीय पांडित्य दर्शावी जैनशासननी विजयध्वजा फरकावी छे. शासनमा 'आत्मज्ञान' भणी आवश्यक लक्ष्यमां न्यूनता आवी जतां श्रीमान् आनदघनजीए अद्भुततापूर्वक आत्मज्ञान गायु छे. 'तप' प्रत्ये लोकवृत्ति उदासीन थइ जतां, तपागच्छना स्थापक पुरुषे ते प्रत्ये बहु भार मूक्यो क्रियामां शिथिलत्व आवेलुं जोइ, उपाध्यायजी श्रीयशोविजयजी महाराजे तेना संबंधमा आवश्यक पुरुषार्थ कर्यो. आ वर्त्तमानसमयमा सत्पुरुषोनो अभाव विशेष परिमाणमां जोइ श्रीमान् राजचंद्रे सत्पुरुषनुं माहात्म्य गायु छे. वळी जेम श्रीमान् आनंदघनजीने मताधता दूर करवानी अगत्य उपर भार आपवो पड्यो हतो, तेम श्रीमान् राजचंद्रने पण मूकवो पड्यो छे.

वर्त्तमानमां एक एवी फर्याद प्रवृत्त थई छे के, पाश्चात्य विद्याद्वाराए, उछरता युवानवर्गमां जडवाद उत्पन्न थाय छे, अने तेटला माटे धर्मशिक्षण आपवानी खास जरूर छे. 'धर्मशिक्षण' ए एक एवो विस्तार-वाळो बोल छे के जेनी व्याख्या करवी ए दुर्घट छे. व्यावहारिक शिक्षण साथे धार्मिक शिक्षण अपातुं होय

तो ते बहु ज उपकारक थाय ए निःसंशय छे, तथापि हिंदुस्थान के ज्यां अनेक अनेक धर्ममतो चाले छे त्यां व्यावहारिक शिक्षणनी साथे धार्मिक शिक्षण अपावु शक्य छे के नहीं ए एक गंभीर प्रश्न छे. प्रत्येक संप्रदाय एम इच्छे छे के, अमारा धर्मनुं शिक्षण अमारी प्रजामां अपावुं जोइए. ज्यां सार्वजनिक शाळाओ अने विद्यालयो छे त्यां प्रत्येक सम्प्रदायनुं शिक्षण अपावुं अशक्य छे. अशक्य छे छतां धारो के, एवी कोइ मोटा भोगे व्यवस्था करवामां आवे, तो ते उपकारक छे के नहीं ? मारा अभिप्रायप्रमाणे, अशक्यने मोटा भोगे शक्य बनावी आवी व्यवस्था करवामां आवे, तोपण तेथी लाभ थाय तेनां करतां हानि वधारे थवानो संभव छे, केमके प्रत्येक संप्रदाय जो पोतानुं शिक्षण आप्या करे, तो प्रजामांथी मूळ विचारशक्ति (Original thinking) नो लोप थवानो संभव छे, एटले के जे सांप्रदायिक धार्मिक शिक्षण मळे, तेथी ते सम्प्रदायने विषे ज अभ्यासीने ममत्वबुद्धि वधाइ जाय, अने एवी ममत्वबुद्धि बंधाइ गये, अन्यदर्शनोमां वस्तुस्वरूप शुं छे ते जोवानु चित्त न थइ शके. आवी स्थितिमां सांप्रदयिक धार्मिक शिक्षण आपवुं ए जोखमवाळु छे आम छतां पण धर्मशिक्षणना संस्कारोनी तो जरूर छे आ जरूर कई रीते पूरी पाडवी ए विचार कर्त्तव्य छे. लगभग चारेक वर्ष पूर्वे एक जाहेर वर्त्तमानपत्रमां एक लेखके एवी सूचना करी हती के, आ 'आत्मसिद्धिशास्त्र' ए एवा प्रकारनो ग्रथ छे के, जेमां जडवादने प्रवेश थतां अटकाववानुं कोइ अंशे सामर्थ्य रह्युं छे, तेम तेमां सांप्रदायिक ममत्व उत्पन्न करे तेवु तत्त्व नथी. जडवादने प्रवेश थतां अटकावनार वस्तु आत्मा अने कर्मनी सिद्धिदर्शक साधन छे आ 'आत्मसिद्धिशास्त्र'मां आत्मा अने कर्मनुं होवापणुं सिद्ध करवानां साधनो केवां छे ते तो वाचकवर्ग जोइ शकशे. जो आत्मानुं अने कर्मनुं होवापणुं अभ्यासीना मन उपर प्रतीत करावी शकाय, तो जडवादनो प्रवेश सहेजे रोकी शकाय, एटले धर्मानुयायीओ जडवादनो जे भय राखे छे ते भय आ ग्रथमा ते बन्ने वस्तुना थयेल प्रतिपादनद्वारा दूर

करावी शकाय. ईश्वरनु अस्तित्व, आत्मानु नित्यत्व, आत्माने कर्मकर्त्तृत्व, आत्माने कर्मभोक्तृत्व, मोक्षनुं स्वरूप ए जे पांच विषयो तेने विषे जूदा जूदा दर्शनोमां जे भेद पडे छे ते भेदनुं स्वरूप अने निराकरण पण आ ग्रथमां करवामां आवेलु छे एटले अभ्यासीओने न्यायद्वारा (Logically) शिक्षागुरुओ तेनो अभ्यास करावी शके. तात्पर्य के, उक्त जाहेर वर्त्तमानपत्रना लेखकनी सूचना प्रमाणे आ ग्रंथ धर्मशिक्षण आपवानु एक साधन थई पडे तेवां तत्त्वो धरावे छे, तेनी साथे उपर कह्यु तेम ते सांप्रदायिक ममत्व उत्पन्न करे तेम नथी, एटलुं ज नहीं, पण सांप्रदायिक अधतानुं निरूपयोगीपणुं आ ग्रंथमां जे प्रकारे दर्शाव्यु छे ते प्रकार, साम्प्रदायिक मोह अने तेथी उत्पन्न थतुं मननु संकुचितपणुं (Narrow-Mindedness) रोकी शके तेम छे जेओ धर्मशिक्षणने माटे केवा प्रकारना ग्रथो जोइए ते सबंधीनो विचार चलावे छे तेओने आ ग्रथ अवलोकवानु निमत्रण करवुं अयोग्य नहीं कहेवाय

प्रकाशक तरफथी आटला विस्तारपूर्वक विवेचननी खास जरूर होय नहीं, छतां मारा तरफथी तेम करवामा आव्युं छे. आनु कारण ए छे के, ग्रथकर्त्तापुरुषे ग्रंथमा केवो गभीर विषय चर्च्यो छे तेना सवधमा विवेचन करवानो स्वाभाविक हक प्रकाशकने होवो जोइए, एम मारु मानवु छे. एक बीजी बाबतने माटे खुलासो करवो रहे छे ते ए के, ग्रथकर्त्तापुरुषे ग्रंथनी कृति एवा प्रकारनी करी छे के, गमे ते दर्शनना आश्रित जीवने वांचतां, विचारतां एवो भाव न थाय के, ते चोक्कस सम्प्रदायने आधीन छे, परतु एवी भावना थाय के ते सर्वमान्य ग्रथ छे आवा एक सर्वसामान्यगणावायोग्य ग्रथना संबधमां प्रकाशक पोता तरफना विचारो लखतां एवा प्रकारनी ग्रंथकर्त्तानी कृतिने रूप आपे के, जेथी ग्रंथकारना सर्वसामान्य करवाना मूळ उद्देशमां व्याघात थाय, ए हु समजु छुं के योग्य नथी. छतां तेम मे कर्यु छे ते मारी दृष्टि प्रमाणे सहेतुक छे. आ ग्रंथनु गौरव १४२ दोहरानु छे, छतां ते उपर १४२००

श्लोकोनी टीका लखाई शके तेम छे, एम एक प्रसगे ग्रथकर्त्तापुरुपे कयुं हतु. ग्रथनो अंतीम आश्रय निर्ग्रंथ-मार्गनो छे, एटले पछी ते मार्गना जे जे सिद्धांतो, आ ग्रथमा जे जे प्रसंगोए अनुकूळ थता होय ते ते प्रसंगोए वतावेल छे, तेनो हेतु ए छे के, ग्रथकर्त्ताए जे १४२०० श्लोकनी टीका लखावाने पात्र आ ग्रंथ छे एम कह्युं हतुं ते यथार्थ हतु एम कोई अशे जणाय आ विवेचन लखवामां मारो आ हेतु छे. ते हेतुनी यथार्थता जोवानुं कार्य वाचक महाशयोना उपर छोडु छु. विवेचनमा दोप थयेल होय तो ते माटे माराप्रत्ये अनुकंपावुद्धिए जोवामां आवे, अने तेनी साथे तेपर मध्यस्थ अने कपायरहित शैलीए विचारो जणाववामां आवे एम हु इच्छु छु.

आ लेखने समाप्ति आपतां पहेलां, आ "आतमसिद्धिशास्त्र"ना कर्त्तापुरुपनु जीवनचरित्र आपवा मारी तीव्र इच्छा हती, तथापि आप श्रीनुं जीवन आध्यात्मिक होइ आळेखवु ए दुष्कर होवाथी, आ वखते आपवानुं तो वनी शक्युं नथी. कर्त्तापुरुपना जीवनसंबंधीनो सहज ख्याल आपवा अर्थे तेओ श्रीए पोते लखेल एक स्वात्मवृत्तांतोपयोगी काव्य (Autobiographical Poem) अहीं स्थिर करुं छु आ काव्य कर्त्तापुरुपे पोताना देहोत्सर्ग पहेलां चार वर्प अगाउ (वि० स० १९५३ मा) लख्यु हतुं.

धन्य रे दीवस आ अहो, जागी रे शांति अपूर्व रे.
दश वर्पे रे धारा उलसी, मट्यो उदयकर्मनो गर्व रे. धन्य०
ओगणीसें ने एकत्रीसे, आव्यो अपूर्व अनुसार रे;
ओगणीससें ने वेतालीसे, अद्भुत वैराग्य धार रे. धन्य०
ओगणीससें ने सुडतालीसे, समकित शुद्ध प्रकाश्युं रे,

श्रुत अनुभव वधती दशा, निजस्वरूप अवभास्युं रे. धन्य०
त्यां आव्यो रे उदय कारमो, परिग्रह कार्य प्रपंच रे;
जेम जेम ते हडसेलीए, तेम वधे न घटे रंच रे. धन्य०
वधतुं एम ज चालियुं; हवे दीसे क्षीण कांइ रे.
क्रमे*करीने ते जशे, एम भासे मनमांहि रे. धन्य०
यथाहेतु जे चित्तनो, सत्य धर्मनो उद्धार रे;
थशे अवश्य आ देहथी, एम थयो निरधार रे. धन्य०
आवी अपूर्व वृत्ति अहो; थशे अप्रमत्त योग रे.
केवळ लगभग भूमिका, स्पर्शीने देह वियोग रे. धन्य०
अवश्य कर्मनो भोग छे, भोगववो अवशेष रे;
तेथी देह एक ज धारिने, जाशुं स्वरूप स्वदेश रे. धन्य०

मुम्बई, झवेरी बजार, }
चत्र वद ५, १९६४. }

अल्पज्ञ बाल,
मनसुखलाल रवजीभाइ मेहता.

*** आ विवेचनना पृष्ट ४ थामां "ज्ञानदर्शनचारित्राणि मोक्षमार्ग" एवु जे सूत्र मूक्यु छे त्यां "सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्राणि मोक्षमार्ग." एम सूत्र जोइए.—म० र० मे०

गमे तेवा तुच्छ विषयमां प्रवेश छतां उज्वल आत्माओनो स्वत वेग वैराग्यमां झपलावु ए छे बाह्यदृष्टिथी ज्यांसुधी उज्वल आत्माओ संसारना मायिक प्रपंचमा दर्शन दे छे त्यांसुधी ते कथननी सिद्धता क्वचित् दुर्लभ छे, तोपण सूक्ष्म-दृष्टिथी अवलोकन करतां ए कथननु प्रमाण केवल सुलभ छे; ए निःसंशय छे

—श्रीमान् राजचंद्र, वर्ष १६ मुं.

शास्त्रकर्त्ता पुरुषनां छेल्लां वचनो.

घणी त्वराथी प्रवास पूरो करवानो हतो; त्यां वच्चे सहरानुं रण संप्राप्त थयुं. माथे घणो बोजो रह्यो हतो ते आत्मवीर्ये करी जेम अल्पकाळे वेदी लेवाय तेम प्रघटना करतां पगे निकाचित उदयमान थाक ग्रहण कर्यो.

जे स्वरूप छे ते अन्यथा थतुं नथी, ए ज अद्भुत आश्चर्य छे. अव्याबाध स्थिरता छे. प्रकृति उदयानुसार कंइक असाता मुख्यत्वे वेदी साताप्रत्ये.

राजकोट, फागण वद ३, शुक्र, १९५७. शांतिः

इच्छे छे जे जोगी जन, अनंत सुखस्वरूप; मूल शुद्ध ते आत्मपद सयोगी जिनस्वरूप,
आत्मस्वभाव अगम्य ते, अवलंबन आधार; जिनपदथी दर्शावियो, तेह स्वरूपप्रकार.
जिनपद निजपद एकता, भेद भाव नहीं कांइ; लक्ष थवानो तेहनो, कह्यां शास्त्र सुखदाइ.
जिनप्रवचन दुर्गम्यता, थाके अति मतिमान; अवलंबन श्री सद्गुरु, सुगम अने सुखखाण.
उपासना जिनचरणनी, अतिशय भक्ति सहीत; मुनिजन संगति रति अति, संयम योग घटीत.

गुण प्रमोद अतिशय रहे, रहे अंतर्मुख योग; प्राप्ति श्री सद्‌गुरुवडे, जिनदर्शन अनुयोग.
प्रवचन समुद्र बिंदुमां, उलटी आवे एम; पूर्व चौदनी लब्धिनुं, उदाहरण पण तेम.
विषय विकार सहीत जे, रह्या मतिना योग; परिणामनी विषमता, तेने योग अयोग.
मंद विषय ने सरळता, सह आज्ञा सुविचार; करुणा कोमळतादि गुण, प्रथम भूमिका धार.
रोक्या शब्दादिक विषय, संयम साधन राग; जगत इष्ट नहीं आतमथी, मध्य पात्र महाभाग्य.
नहीं तृष्णा जीव्या तणी, मरण योग नहीं क्षोभ; महा पात्र ते मार्गना, परम योग जित लोभ.
आव्ये बहु सम देशमां, छाया जाय समाइ; आव्ये तेम स्वभावमां, मन॰स्वरूप पण जाइ.
उपजे मोह विकल्पथी, समस्त आ संसार; अंतर्मुख अवलोकतां, विलय थतां नहीं वार.

सुखधाम अनंत सुसंत चही, दिन रात्र रहे तद ध्यान मंही.
परशांति अनंत सुधामय जे, प्रणमुं पद ते वरते जय ते—राजकोट, चैत्र शुद ९, १९५७.

ॐ

ग्रंथकारगुणस्थानक्रमारोह.

अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे ? क्यारे थइशुं बाह्यांतर निर्ग्रंथ जो ?
सर्व संबंधनुं बंधन तिक्ष्ण छेदीने, विचरीशुं कव महत्पुरुषने पंथ जो ? अपूर्व० ॥ १ ॥
सर्व भावथी औदासीन्यवृत्ति करी, मात्र देह ते संयमहेतु होय जो;
अन्य कारणे अन्य कशुं कल्पे नहीं, देहे पण किंचित् मूर्छा नव जोय जो. अपूर्व० ॥ २ ॥
दर्शनमोह व्यतीत थइ उपज्यो बोध जे, देह भिन्न केवल चैतन्यनुं ज्ञान जो;
तेथी प्रक्षीण चारितमोह विलोकिये, वर्त्ते एवुं शुद्धस्वरूपनु ध्यान जो. अपूर्व० ॥ ३ ॥
आत्मास्थिरता त्रण संक्षिप्त योगनी, मुख्यपणे तो वर्ते देहपर्यंत जो;
घोर परिषह के उपसर्गभये करी, आवी शके नहीं ते स्थिरतानो अंत जो. अपूर्व० ॥ ४ ॥

संयमना हेतुथी योगप्रवर्त्तना, स्वरूपलक्षे जिनआज्ञा आधीन जो;
ते पण क्षण क्षण घटती जाती स्थितिमां, अंते थाये निजस्वरूपमां लीन जो. अपूर्व० ॥ ५ ॥
पंच विषयमां रागद्वेष विरहितता, पंच प्रमादे न मळे मननो क्षोभ जो;
द्रव्य, क्षेत्र ने काळ भाव प्रतिबंधवण, विचरवुं उदयाधीन पण वीत लोभ जो. अपूर्व०॥६॥
क्रोधप्रत्ये तो वर्त्ते क्रोधस्वभावता, मानप्रत्ये तो दीनपणानुं मान जो;
मायाप्रत्ये माया साक्षी भावनी, लोभप्रत्ये नहीं लोभ समान जो. अपूर्व० ॥ ७ ॥
बहु उपसर्गकर्त्ताप्रत्ये पण क्रोध नहीं, वंदे चक्रि तथापि न मळे मान जो;
देह जाय पण माया थाय न रोममां, लोभ नहीं छो प्रबळ सिद्धि निदान जो. अपूर्व०॥ ८ ॥
नग्नभाव, मुंडभाव, सहअस्नानता, अदंतधोवन आदि परम प्रसिद्ध जो;
केश, रोम, नख, के अंगे शृंगार नहीं, द्रव्यभाव संयममय निर्ग्रंथ सिद्ध जो. अपूर्व० ॥९॥
शत्रु मित्रप्रत्ये वर्त्ते समदर्शिता, मान अमाने वर्त्ते ते ज स्वभाव जो;
जीवित, के मरणे नहीं न्यूनाधिकता, भव मोक्षे पण शुद्ध वर्त्ते समभाव जो. अपूर्व० ॥१०॥

एकाकी विचरतो वळी श्मशानमां, वळी पर्वतमां वाघ सिंह संयोग जो;
अडोल आसन ने मनमां नहीं क्षोभता, परम मित्रनो जाणे पाम्या योग जो. अपूर्व० ॥११॥
घोर तपश्चर्यामां पण मनने ताप नहीं, सरस अन्ने नहीं मनने प्रसन्नभाव जो;
रजकण, के रिद्धि वैमानिकदेवनी, सर्वे मान्या पुद्गल एक स्वभाव जो. अपूर्व० ॥१२॥
एम पराजय करीने चारितमोहनो, आवुं त्यां ज्यां करण अपूर्व भाव जो;
श्रेणी क्षपकतणी करीने आरूढता, अनन्य चिंतन अतिशय शुद्ध स्वभाव जो.अपूर्व०॥१३॥
मोहस्वयंभूरमण समुद्र तरी करी, स्थिति त्यां ज्यां क्षीणमोहगुणस्थान जो;
अंत समय त्यां पूर्ण स्वरूप वीतराग थइ, प्रगटावुं निज केवलज्ञाननिधान जो.अ०॥१४॥
चार कर्म घनधाती ते व्यवच्छेद ज्यां, भवना बीजतणो आत्यंतिक नाश जो;
सर्वभाव ज्ञाता द्रष्टा सह शुद्धता, कृतकृत्य प्रभु वीर्य अनंत प्रकाश जो. अपूर्व० ॥१५॥
वेदनीयादि चार कर्म वर्त्ते जहां, बळी सींदरीवत् आकृति मात्र जो;
ते देहायुष् आधीन जेनी स्थिति छे, आयुष् पूर्णे मटिये दैहिकपात्र जो. अपूर्व० ॥१६॥

मन वचन काया ने कर्मनी वर्गणा, छूटे जहां सकळ पुद्गल संबंध जो;
एवुं अयोगिगुणस्थानक त्यां वर्त्ततुं, महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अबंध जो. अपूर्व० ॥१७॥
एक परमाणुमात्रनी मळे न स्पर्शता, पूर्णकलंकरहित अडोल स्वरूप जो;
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय, अगुरु लघु अमूर्त्त सहजपदरूप जो. अपूर्व० ॥१८॥
पूर्वप्रयोगादि कारणना योगथी, ऊर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो;
सादि अनंत अनंत समाधिसुखमां, अनंत दर्शन, ज्ञान, अनंत सहित जो. अपूर्व० ॥१९॥
जे पद श्री सर्वज्ञे दीठुं ज्ञानमां, कही शक्या नहीं पण ते श्री भगवान् जो;
तेह स्वरूपने अन्यवाणी ते शुं कहे ? अनुभवगोचर मात्र रह्युं ते ज्ञान जो. अपूर्व० ॥ २० ॥
एह परमपदप्राप्तिनुं कर्युं ध्यान में, गजावगर ने हाल मनोरथरूप जो;
तोपण निश्चय राजचंद्र मनने रह्यो, प्रभुआज्ञाए थाशुं तेज स्वरूप जो. अपूर्व० ॥ २१ ॥

भूमिका.

सर्व जीवने अप्रिय छतां जे दुःखनो अनुभव करवो पडे छे, ते दुःख सकारण होवुं जोइए. ए भूमिथी मुख्यकरीने विचारवाननी विचारश्रेणी उदय पामी छे, अने तेपरथी अनुक्रमे आत्मा, कर्म, परलोक, मोक्ष आदि भावोनुं स्वरूप सिद्ध थयुं होय एम जणाय छे.

वर्त्तमानमां जो पोतानुं विद्यमानपणुं छे, तो भूतकाळने विषे पण तेनुं विद्यमानपणुं होवुं जोइए. अने भविष्यमां पण तेम ज होवुं जोइए. आ प्रकारना विचारनो आश्रय मुमुक्षु जीवने कर्त्तव्य छे. कोइ पण वस्तुनुं पूर्वपश्चात् होवापणुं न होय, तो मध्यमां तेनुं होवापणुं न होय, एवो अनुभव विचारतां थाय छे.

वस्तुनी केवळ उत्पत्ति, अथवा केवळ नाश नथी; सर्वकाळ तेनुं होवापणुं छे. रूपांतर-परिणाम थया करेछे; वस्तुता फरती नथी, एवो श्री जिननो अभिमत छे.

आ सिद्धांतानुसार शुद्ध आत्मस्वरूपने पाम्या छे एवा ज्ञानीपुरुषोए नीचे कह्यां छे ते छ पदने सम्यग्दर्शनना निवासनां सर्वोत्कृष्ट स्थानक कह्यां छे.

प्रथमपदः—"आत्मा छे." जेम घटपटआदि पदार्थो छे तेम आत्मा पण छे. अमुक गुण होवाने लीधे जेम घटपटआदि होवानुं प्रमाण छे; तेम स्वपरप्रकाशक एवी चैतन्य-सत्तानो प्रत्यक्ष गुण जेने विषे छे एवो आत्मा होवानुं प्रमाण छे.

बीजुं पदः—"आत्मा नित्य छे." घटपटआदि पदार्थो अमुक काळवर्त्ति छे. आत्मा त्रिकाळवर्त्ति छे. घटपटादि 'संयोगे करी' पदार्थ छे. आत्मा 'स्वभावे करीने' पदार्थ छे, केमके तेनी उत्पत्ति माटे कोइ पण संयोगो अनुभवयोग्य थता नथी. कोइ पण संयोगी द्रव्यथी चेतन–सत्ता प्रगट थवायोग्य नथी, माटे अनुत्पन्न छे. असंयोगी होवाथी अविनाशी छे, केमके जेनी कोइ संयोगथी उत्पत्ति न होय, तेनो कोइने विषे लय पण होय नहीं.

त्रीजुं पदः—"आत्मा कर्त्ता छे." सर्व पदार्थ अर्थक्रियासंपन्न छे. कंइने कंइ परिणाम-क्रियासहित ज सर्व पदार्थ जोवामां आवे छे. आत्मा पण क्रियासंपन्न छे. क्रियासंपन्न छे, माटे कर्त्ता छे. ते कर्त्तापणुं त्रिविध श्री जिने विवेच्युं छेः–परमार्थथी स्वभावपरिणतिए 'निजस्वरूपनो कर्त्ता छे.' अनुपचरित (अनुभवमां आववायोग्यविशेष संबंधसहित) व्यवहारथी ते आत्मा 'कर्मनो कर्त्ता छे.' उपचारथी 'घर, नगर आदिनो कर्त्ता छे.'

चोथुं पदः—"आत्मा भोक्ता छे." जे जे कंइ क्रिया छे ते ते सर्व सफळ छे, निरर्थक नथी. जे कंइ पण करवामां आवे छे तेनुं फळ भोगववामां आवे एवो प्रत्यक्ष अनुभव छे. विष खाधाथी विषनुं फळ; साकर खावाथी साकरनुं फळ; अग्निस्पर्शथी अग्नि-

स्पर्शनुं फळ, हीमने स्पर्श करवाथी हीमस्पर्शनुं जेम फळ थयाविना रहेतुं नथी, तेम कषायादि, के अकषायादि जे कंइ पण परिणामे आत्मा प्रवर्त्ते तेनुं फळ पण थवायोग्य ज छे, अने ते थाय छे. ते क्रियानो आत्मा कर्त्ता होवाथी 'भोक्ता छे.'

पांचमुं पदः—"मोक्षपद छे." जे अनुपचरित–व्यवहारथी जीवने कर्मनुं कर्त्तापणुं निरूपण कर्युं, कर्त्तापणुं होवाथी भोक्तापणुं निरूपण कर्युं, ते कर्मनुं टळवापणुं पण छे, केमके प्रत्यक्ष कषायादिनुं तीव्रपणुं होय पण तेना अनभ्यासथी–तेना अपरिचयथी–तेने उपशम करवाथी–तेनुं मंदपणुं देखाय छे, ते क्षीण थवायोग्य देखाय छे; क्षीण थई शके छे. ते ते बंधभाव क्षीण थई शकवायोग्य होवाथी तेथीरहित एवो जे शुद्ध–आत्मस्वभाव तेरूप 'मोक्षपद छे.'

छठ्ठुं पदः—"ते मोक्षनो उपाय छे". जो कदी कर्मबंधमात्र थया करे एम ज होय तो तेनी निवृत्ति कोइ काळे संभवे नहीं; पण कर्मबंधथी विपरीत स्वभाववाळां एवां ज्ञान, दर्शन, समाधि, वैराग्य, भक्त्यादि साधन प्रत्यक्ष छे. जे साधनना बळे कर्मबंध शिथिल थाय छे,–उपशम पामे छे–क्षीण थाय छे, माटे ते ज्ञान, दर्शन, संयमादि "मोक्षपदना उपाय छे."

"आत्मा छे," "आत्मा नित्य छे," "आत्मा कर्मनो कर्त्ता छे," "आत्मा कर्मनो भोक्ता छे," "तेथी ते निवृत्त थइ शके छे," "अने निवृत्त थइ शकवानां साधन छे," ए छ कारणो

जेने विचार करीने सिद्ध थाय तेने 'विवेकज्ञान' अथवा 'सम्यग्दर्शननी प्राप्ति' गणवी एम श्री जिने निरूपण कर्युं छे. जे निरूपण मुमुक्षु जीवे विशेषकरी अभ्यास करवायोग्य छे.'

पूर्वना कोई विशेष अभ्यासबळथी ए छ कारणोनो विचार उत्पन्न थाय छे, अथवा सत्संगना आश्रयथी ते विचार उत्पन्न थवानो योग बने छे.

अनित्य पदार्थप्रत्ये मोहबुद्धि होवाने लीधे आत्मानुं 'अस्तित्व,' 'नित्यत्व,' अने 'अव्याबाध समाधिसुख' भानमां आवतां नथी. तेनी मोहबुद्धिमां जीवने अनादिथी एवं एकाग्रपणुं चाल्युं आवे छे के, तेनो विवेक करतां करतां जीवने मुंझाइने पाछुं वळवुं पडे छे, अने ते मोहग्रंथी छेदवानो वखत आववा पहेलां ते विवेक छोडी देवानो योग पूर्वकाळे घणीवार बन्यो छे, केमके जेनो अनादिकाळथी अभ्यास छे, ते अत्यंत पुरुषार्थविना अल्पकाळमां छोडी शकाय नहीं; माटे फरी फरी सत्संग, सच्छास्त्र अने पोतामां सरळ विचारदशा करी ते विषयमां विशेष श्रम लेवो योग्य छे, के जेना परिणाममां 'नित्य' 'शाश्वत' सुखस्वरूप एवुं 'आत्मज्ञान' थई स्वरूप आविर्भाव थाय छे. एमां प्रथमथी उत्पन्न थता संशय धीरजथी अने विचारथी शांत थाय छे. अधीरजथी अथवा आडी कल्पना करवाथी मात्र जीवने पोताना हितनो त्याग करवानो वखत आवे छे; अने अनित्य पदार्थनो राग रहेवाथी तेना कारणे फरी फरी संसारपरिभ्रमणनो योग रह्या करे छे.

श्री ज्ञानी पुरुषोए सम्यग्दर्शनना मुख्य निवासभूत कह्यां एवां आ छ पद अत्रे संक्षेपमां

जणाव्यां छे. समीपमुक्तिगामी जीवने सहज विचारमां ते सप्रमाण थवायोग्य छे,–परम निश्चयरूप जणावायोग्य छे. तेनो सर्व विभागे विस्तार थई तेना आत्मामां विवेक थवायोग्य छे. आ छ पद अत्यंत संदेहरहित छे, एम परमपुरुषे निरूपण कर्युं छे. ए छ पदनो विवेक जीवने स्वस्वरूप समजवाने अर्थे कह्यो छे. अनादि स्वप्नदशाने लीधे उत्पन्न थयेलो एवो जीवनो अहंभाव–ममत्वभाव–ते निवृत्त थवाने अर्थे आ छ पदनी ज्ञानीपुरुषोए देशना प्रकाशी छे. ते स्वप्नदशाथी रहित मात्र पोतानुं स्वरूप छे, एम जो जीव परिणाम करे, तो सहजमात्रमां ते जागृत थई सम्यग्दर्शनने प्राप्त थाय; सम्यग्दर्शनने प्राप्त थई स्वस्वभावरूप मोक्षने पामे. कोइ विनाशी, अशुद्ध अने अन्य एवा भावने विषे तेने हर्ष, शोक, संयोग, उत्पन्न न थाय. ते विचारे स्वस्वरूपने विषे ज शुद्धपणुं, संपूर्णपणुं, अविनाशीपणुं, अत्यंत आनंदपणुं, अंतररहित तेना अनुभवमा आवे छे. सर्व विभाव–पर्यायमां मात्र पोताने अध्यासथी ऐक्यता थई छे, तेथी केवळ पोतानुं भिन्नपणुं ज छे एम, स्पष्ट–प्रत्यक्ष–अत्यंत प्रत्यक्ष–अपरोक्ष–तेने अनुभव थाय छे. विनाशी अथवा अन्य पदार्थना संयोगने विषे तेने इष्ट–अनिष्टपणुं प्राप्त थतुं नथी. जन्म, जरा, मरण रोगादि आधाररहित संपूर्ण महात्म्यनुं ठेकाणुं एवुं निजस्वरूप जाणी, वेदी, ते कृतार्थ थाय छे. जे जे पुरुषोने 'ए छ पद सप्रमाण' एवां परम पुरुषनां वचनोए आत्मानो निश्चय थयो छे, ते ते पुरुषो स्वस्वरूपने पाम्या छे. आधि, व्याधि, उपाधि सर्वसंगथी रहित थया छे, थाय छे, अने भाविकाळमां पण तेम ज थशे.

जे सत्पुरुषोए जन्म, जरा, मरणनो नाश करवावाळो; स्वस्वरूपमां सहज–अवस्थान थवानो उपदेश कह्यो छे, ते सत्पुरुषोने अत्यंत भक्तिथी नमस्कार छे. तेनी निष्कारण–करुणाने नित्यप्रत्ये निरंतर स्तववामां पण आत्मस्वभाव प्रगटे छे एवा सर्व सत्पुरुषो, तेनां चरणारविंद सदाय हृदयने विषे स्थापन रहो ! ॐ शांतिः शांतिः शांतिः



॥ श्रीसद्गुरुचरणाय नमः ॥ श्रीमान् राजचंद्रकृत

श्री आत्मसिद्धिशास्त्र प्रारंभः ॥

॥ मंगलाचरण. ॥

॥ जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत; ॥
॥ समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्गुरु भगवंत. ॥

अर्थः—जे आत्मस्वरूप समज्याविना भूतकाळे हुं अनंत दुःख पाम्यो, ते पद जेणे समजाव्युं एटले भविष्यकाळे उत्पन्न थवायोग्य एवां अनंत दुःख पामत ते मूळ जेणे छेद्युं एवा श्रीसद्गुरु भगवान्ने नमस्कार करूं छुं.

आत्म
॥ १ ॥

वर्त्तमान आ काळमा, मोक्षमार्ग बहु लोप;
विचारवा आत्मार्थीने, भाख्यो अत्र अगोप्य. ॥ २ ॥

अर्थः—आ वर्त्तमानकाळमां मोक्षमार्ग घणो लोप थइ गयो छे; जे मोक्षमार्ग गुरुशिष्यना संवादरूपे अत्रे प्रगट कहीए छीए. ॥ २ ॥

कोइ क्रियाजड थइ रह्या, शुष्कज्ञानमां कोइ;
माने मारग मोक्षनो, करुणा उपजे जोइ. ॥ ३ ॥

अर्थः—कोइ क्रियानेज वळगी रह्या छे, अने कोइ शुष्कज्ञाननेज वळगी रह्या छे; एम मोक्षमार्ग माने छे; जे जोइने दया आवे छे. ॥ ३ ॥

समर्थनः—सद्गुरुना चरणने जे पोतानो पक्ष एटले मत छोडी दइ सेवे ते पदार्थने पामे, अने निजपदनो एटले आत्मस्वभावनो लक्ष ले, अर्थात् घणाने क्रियाजडत्व वर्त्ते छे तेनो हेतु ए छे के, असद्गुरु के जे आत्मज्ञान अने आत्मज्ञानना साधनने जाणता नथी तेनो तेणे आश्रय कर्यो छे, जेथी तेनो मात्र क्रियाजडत्वनो एटले कायक्लेशनो मार्ग जाणे छे, तेमां वळगाडे छे, अने कुलधर्म दृढ करावे छे, जेथी तेने सद्गुरुनो योग मेळववानी आकांक्षा थती नथी, अथवा तेवा योग मळ्ये पण पक्षनी दृढ वासना तेने सदुपदेशसन्मुख थवा देती नथी, एटले क्रियाजडत्वपणुं टळतुं नथी; अने परमार्थनी

सिद्धि०
॥ १ ॥

प्राप्ति थती नथी, अने जे शुष्कज्ञानी छे तेणे पण सद्गुरुना चरण सेव्या नथी, मात्र पोतानी मतिकल्पनाथी स्वछदपणे अध्यात्मग्रंथो वांच्या छे, अथवा शुष्कज्ञानी समीपथी तेवा ग्रंथो, के वचनो सांभळी लइने पोताने विषे ज्ञानीपणुं मान्यु छे, अने ज्ञानी गणावाना पदनु एक प्रकारनुं मान छे तेमां तेने मीठाश रही छे, अने ए तेनो पक्ष थयो छे, अथवा कोइ एक कारणविशेषथी शास्त्रोमां दया, दान, अने अहिंसा, पूजानु समानपणु कह्यु छे तेवां वचनोने, तेनो परमार्थ समज्याविना हाथमां लइने मात्र पोताने ज्ञानी बनावा अर्थे, अने पामर जीवना तिरस्कारना अर्थे ते वचनोनो उपयोग करे छे

वाह्यक्रियामां राचता, अंतर्भेद न कांइ;
ज्ञानमार्ग निषेधता, तेह क्रियाजड आंहि. ॥ ४ ॥

अर्थः—वाह्यक्रियामांज मात्र राची रह्या छे, अंतर् कंइ भेदायुं नथी, अने ज्ञानमार्गने निषेध्या करे छे, ते अहीं क्रियाजड कह्या छे. ॥ ४ ॥

बंध, मोक्ष छे कल्पना, भाखे वाणीमांहि;
वर्त्ते मोहावेशमां, शुष्कज्ञानी ते आंहि. ॥ ५ ॥

अर्थः—बंध, मोक्ष मात्र कल्पना छे, एवां निश्चयवाक्य मात्र वाणीमां बोले छे, अने तथारूप दशा थइ नथी, मोहना प्रभावमां वर्त्ते छे, ए अहीं शुष्कज्ञानी कह्या छे. ॥ ५ ॥

वैराग्यादि सफळ तो, जो सह आतमज्ञान;
तेमज आतमज्ञाननी, प्राप्तितणां निदान. ॥ ६ ॥

अर्थः—वैराग्य त्यागादि जो साथे आत्मज्ञान होय तो सफळ छे, अर्थात् मोक्षनी प्राप्तिना हेतु छे, अने ज्यां आत्मज्ञान न होय त्यां पण जो ते आत्मज्ञानने अर्थे करवामां आवतां होय, तो ते आत्मज्ञाननी प्राप्तिना हेतु छे. ॥ ६ ॥

समर्थनः—वैराग्य, त्याग, दयादि अंतरगवृत्तिवाळी क्रिया छे, ते जो साथे आत्मज्ञान होय, तो सफळ छे, अर्थात् भवनुं मूळ छेदे छे, अथवा वैराग्य त्याग दयादि आत्मज्ञाननी प्राप्तिनां कारणो छे, एटले जीवमां प्रथम ए गुणो आव्येथी सद्गुरुनो उपदेश तेमां परिणाम पामे छे. उज्वळ अतःकरणविना सद्गुरुनो उपदेश परिणमतो नथी; तथा वैराग्यादि आत्मज्ञाननी प्राप्तिनां साधनो छे एम कह्युं. अत्रे जे जीवो क्रियाजड छे तेने एवो उपदेश कर्यो के, काया ज मात्र रोकवी ते कांइ आत्मज्ञाननी प्राप्तिना हेतु नथी. वैराग्यादि गुणो आत्मज्ञाननी प्राप्तिना हेतु छे, माटे तमे ते क्रियाने अवगाहो; अने ते क्रियामां पण अटकीने रहेवुं घटतुं नथी, केमके आत्मज्ञानविना ते पण भवनुं मूळ छेदी शकतां नथी, माटे आत्मज्ञाननी प्राप्तिने अर्थे ते वैराग्यादि गुणोमां वर्त्तो, अने कायक्लेशरूप, पण कषायादिनुं जेमां तथारूप कंइ क्षीणपणुं थतुं नथी तेमां, तमे मोक्ष-मार्गनो दुराग्रह राखो नहीं, एम क्रियाजडने कह्युं; अने जे शुष्कज्ञानीओ त्यागवैराग्यादि रहित छे, मात्र वाचाज्ञानी छे तेने एम कह्युं के, वैराग्यादि साधन छे ते आत्मज्ञाननी प्राप्तिनां कारणो छे; कारणविना कार्यनी उत्पत्ति थती नथी, तमे वैराग्यादि पण पाम्या नथी, तो आत्मज्ञान क्यांथी पाम्या हो ते कंइक

आत्मामां विचारो; संसारप्रत्ये बहु उदासीनता, देहनी मूर्छानुं अल्पत्व, भोगमां अनासक्ति, तथा मानादिनुं पातळापणु ए आदि गुणोविना तो आत्मज्ञान परिणाम पामतुं नथी, अने आत्मज्ञान पाम्ये तो ते गुणो अत्यंत दृढ थाय छे, केमके आत्मज्ञानरूप मूळ तेने प्राप्त थयु, तेने बदले तमे आत्मज्ञान अमने छे, एम मानो छो, अने आत्मामां तो भोगादि कामनानी अग्नि बळ्या करे छे, पूजा सत्कारादिनी कामना वारंवार स्फुरायमान थाय छे, सहज असाताए बहु आकुळ–व्याकुळता थई जाय छे, ते केम लक्षमां आवतां नथी के, आ आत्मज्ञाननां लक्षणो नहीं ? 'मात्र मानादि कामनाए आत्मज्ञानी कहेवरावुं छउं,' एम जे समजवामा आवतु नथी ते समजो, अने वैराग्यादि साधनो प्रथम तो आत्मामां उत्पन्न करो, के जेथी आत्मज्ञाननी सन्मुखता थाय

त्याग, विराग न चित्तमां, थाय न तेने ज्ञान;
अटके त्याग विरागमां, तो भूले निजभान. ॥ ७ ॥

अर्थः—जेना चित्तमां त्याग अने वैराग्यादि साधनो उत्पन्न थयां न होय तेने ज्ञान न थाय; अने जे त्याग, विरागमांज अटकी रही, आत्मज्ञाननी आकांक्षा न राखे, ते पोतानुं भान भूले; अर्थात् अज्ञानपूर्वक त्याग वैराग्यादि होवाथी ते पूजा सत्कारादिथी पराभव पामे, अने आत्मार्थ चूकी जाय.

समर्थनः—जेना अंत करणमां त्याग वैराग्यादि गुणो उत्पन्न थया नथी, एवा जीवने आत्मज्ञान न थाय, केमके मलीन अंतःकरणरूप दर्पणमां आत्मोपदेशनु प्रतिबिंब पडवुं घटतु नथी. तेम ज मात्र त्याग, विरा-

गमां राचीने कृतार्थता माने ते पण पोताना आत्मानुं भान भूले, अर्थात् आत्मज्ञान नहीं होवाथी अज्ञाननुं सहचारीपणुं छे, जेथी ते त्याग वैराग्यादिनु मान उत्पन्न करवा अर्थे अने मानार्थे सर्व संयमादि प्रवृत्ति थई जाय, जेथी संसारनो उच्छेद न थाय, मात्र त्यां ज अटकवु थाय; अर्थात् ते आत्मज्ञानने पामे नहीं एम क्रियाजडने साधन–क्रिया- अने ते साधननुं जेथी सफलपणुं थाय छे एवा आत्मज्ञाननो उपदेश कर्यो, अने शुष्कज्ञानीने त्याग विरागादि साधननो उपदेश करी वाचाज्ञानमां कल्याण नथी एम प्रेर्यु.

ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, तहां समजवुं तेह;
त्यां त्यां ते ते आचरे, आत्मार्थीजन एह. ॥ ८ ॥

अर्थः–ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, त्यां त्यां ते ते समजे, अने त्यां त्यां ते ते आचरे ए, आत्मार्थी पुरुषनां लक्षणो छे. ॥ ८ ॥

समर्थनः–जे जे ठेकाणे जे जे योग्य छे, एटले ज्यां त्याग वैराग्यादि योग्य होय त्यां वैराग्यादि समजे, ज्यां आत्मज्ञान योग्य होय त्यां आत्मज्ञान समजे, एम जे ज्यां जोइए ते त्यां समजवुं, अने त्यां त्यां ते ते प्रमाणे प्रवर्त्तवु, ए आत्मार्थी जीवनु लक्षण छे, अर्थात् मतार्थी होय, के मानार्थी होय ते योग्य मार्गने ग्रहण न करे, अथवा क्रियामां ज जेने दुराग्रह थयो छे; अथवा शुष्कज्ञानना ज अभिमानमां जेणे ज्ञानीपणुं मानी लीधु छे ते, त्याग विरागादि सावनने अथवा आत्मज्ञानने ग्रहण न करी शके. जे आत्मार्थी होय ते ज्यां ज्यां जे जे करवुं घटे छे ते ते करे, अने ज्यां ज्यां जे जे समजवुं घटे छे ते समजे; अथवा ज्यां ज्यां जे जे समजवु घटे छे ते ते समजे, अने ज्यां जे जे आचरवु घटे छे ते ते आचरे ते आत्मार्थी कहेवाय·

अत्रे ' समजवु ' अने ' आचरवु ' ए बे सामान्यपदे छे, पण विभागपदे कहेवानो आशय एवो पण छे के, जे जे ज्यां समजवु घटे ते ते त्यां समजवानी कामना जेने छे, अने जे जे ज्यां आचरवुं घटे ते ते त्यां आचरवानी जेने कामना छे ते पण आत्मर्थी कहेवाय.

सेवे सद्गुरुचरणने, त्यागी दइ निजपक्ष,
पामे ते परमार्थने, निजपदनो ले लक्ष. ॥ ९ ॥

अर्थः–पोताना पक्षने छोडी दइ, जे सद्गुरुना चरणने सेवे, ते परमार्थने पामे, अने आत्मस्वरूपनो लक्ष तेने थाय. ॥ ९ ॥

आत्मज्ञान, समदर्शिता, विचरे उदयप्रयोग;
अपूर्ववाणी, परमश्रुत, सद्गुरुलक्षण योग्य. ॥ १० ॥

अर्थः–आत्मज्ञानने विषे जेमनी स्थिति छे, एटले परभावनी इच्छाथी जे रहित थया छे, तथा शत्रु मित्र, हर्ष शोक, नमस्कार तिरस्कारादि भावप्रत्ये जेने समता वर्त्ते छे; मात्र पूर्वे उत्पन्न थयेलां एवां कर्मोना उदयने लीधे जेमनी विचरवाआदि क्रिया छे; अज्ञानी करतां जेनी वाणी प्रत्यक्ष जूदी पडे छे, अने षड्दर्शनना तात्पर्यने जाणे छे, ते सद्गुरुनां उत्तम लक्षणो छे. ॥ १० ॥

प्रत्यक्षसद्गुरु सम नहीं, परोक्षजिनउपकार;
एवो लक्ष थयाविना, उगे न आत्मविचार. ॥ ११ ॥

अर्थः—ज्यांसुधी जीवने पूर्वकाळे थइ गयेला एवा जिननी वातपर ज लक्ष रह्या करे, अने तेनो उपकार कह्या करे, अने जेथी प्रत्यक्ष आत्मभ्रांतिनुं समाधान थाय एवा सद्गुरुनो समागम प्राप्त थयो होय तेमां परोक्ष जिनोनां वचन करतां मोटो उपकार समायो छे, तेम जे न जाणे तेने आत्मविचार उत्पन्न न थाय. ॥ ११ ॥

सद्गुरुना उपदेशवण, समजाय न जिनरूप;
समज्यावण उपकार शो? समज्ये जिनस्वरूप. ॥ १२ ॥

अर्थः—सद्गुरुना उपदेशविना जिननुं स्वरूप समजाय नहीं, अने स्वरूप समजायाविना उपकार शो थाय? जो सद्गुरुउपदेशे जिननुं स्वरूप समजे, तो समजनारनो आत्मा परिणामे जिननी दशाने पामे. ॥ १२ ॥

आत्मादि अस्तित्वना, जेह निरूपक शास्त्र,
प्रत्यक्षसद्गुरुयोग नहीं, त्यां आधार सुपात्र. ॥ १३ ॥

अर्थः—जे जिनागमादि आत्माना होवापणानो तथा परलोकादिनां होवापणानो उपदेश करवावाळां शास्त्रो छे, ते पण ज्यां प्रत्यक्ष सद्गुरुनो जोग न होय त्यां, सुपात्र जीवने आधाररूप छे; पण सद्गुरुसमान भ्रांतिनां छेदक कही न शकाय. ॥ १३ ॥

अथवा सद्गुरुए कह्यां, जे अवगाहन काज,
ते ते नित्य विचारवां, करी मतांतर त्याज. ॥ १४ ॥

अर्थः—अथवा जो सद्गुरुए ते शास्त्रो विचारवानी आज्ञा दीधी होय, तो ते शास्त्रो मतांतर एटले कुळधर्मने सार्थक करवानो हेतु आदि भ्रांति छोडीने मात्र आत्मार्थे विचारवां. ॥ १४ ॥

रोके जीव स्वछंद तो, पामे अवश्य मोक्ष;
पाम्या एम अनंत छे, भाख्युं जिन निर्दोष. ॥ १५ ॥

अर्थः—जीव अनादि काळथी पोताना डहापणे अने पोतानी इच्छाए चाल्यो छे, एनुं नाम 'स्वछंद' छे. जो ते स्वछंदने रोके तो जरूर ते मोक्षने पामे, अने ए रीते भूतकाळे अनंत जीव मोक्ष पाम्या छे, एम राग, द्वेष अने अज्ञान एमानो एके दोष जेने विषे नथी एवा दोषरहित वीतरागे कह्युं छे. ॥ १५ ॥

प्रत्यक्षसद्गुरुयोगथी, स्वछंद ते रोकाय;
अन्य उपाय कर्या थकी, प्राये बमणो थाय. ॥ १६ ॥

अर्थः—प्रत्यक्षसद्गुरुना योगथी ते स्वछंद रोकाय छे, वाकी पोतानी इच्छाए बीजा घणा उपाय कर्या छतां घणुंकरीने ते बमणो थाय छे. ॥ १६ ॥

स्वछंद, मत आग्रह तजी, वर्त्ते सद्गुरुलक्ष,
समकित तेने भाखियुं, कारण गणी प्रत्यक्ष. ॥ १७ ॥

अर्थः—स्वछंदने तथा पोताना मतना आग्रहने तजीने जे सद्गुरुना लक्षे चाले तेने, प्रत्यक्ष कारण गणीने वीतरागे 'समकित' कह्युं छे.

मानादिक शत्रु महा, निजछंदे न मराय;
जातां सद्गुरुशरणमां, अल्प प्रयासे जाय. ॥ १८ ॥

अर्थः—मान, अने पूजा सत्कारदिनो लोभ ए आदि महाशत्रु छे, ते पोताना डहापणे चालतां नाश पामे नहीं, अने सद्गुरुना शरणमां जतां सहज प्रयत्नमां जाय. ॥ १८ ॥

जे सद्गुरुउपदेशथी, पाम्यो केवळज्ञान;
गुरु रह्या छद्मस्थ पण, विनय करे भगवान. ॥ १९ ॥

अर्थः—जे सद्गुरुना उपदेशथी कोइ केवळज्ञानने पाम्या, ते सद्गुरु हजु छद्मस्थ रह्या होय, तोपण जे केवळज्ञानने पाम्या छे एवा ते केवळीभगवान् छद्मस्थ एवा पोताना सद्गुरुनी वैयावच्च करे. ॥ १९ ॥

एवो मार्ग विनयतणो, भाख्यो श्री वितराग;
मूळ हेतु ए मार्गनो, समजे कोइ सुभाग्य. ॥ २० ॥

अर्थः—एवो विनयनो मार्ग श्री जिने उपदेश्यो छे. ए मार्गनो मूळहेतु एटले तेथी आत्माने शो उपकार थाय छे ते, कोइक सुभाग्य एटले सुलभबोधी अथवा आराधक जीव होय ते समजे. ॥ २० ॥

असद्गुरुए विनयनो, लाभ लहे जो कांइ,
महामोहिनिय कर्मथी, बुडे भवजळ मांहि. ॥ २१ ॥

अर्थः—आ विनयमार्ग कह्यो तेनो, लाभ एटले ते शिष्यादिनी पासे कराववानी इच्छा करीने जो कोइ पण असद्गुरु पोताने विषे सद्गुरुपणुं स्थापे तो ते महामोहनीय कर्म उपार्जन करीने भवसमुद्रमां बुडे. ॥ २१ ॥

होय मुमुक्षु जीव ते, समजे एह विचार,
होय मतार्थी जीव ते, अवळो ले निर्धार. ॥ २२ ॥

अर्थः—जे मोक्षार्थी जीव होय ते, आ विनयमार्गादिनो विचार समजे, अने जे मतार्थी होय ते, तेनो अवळो निर्धार ले, एटले कां पोते तेवो विनय शिष्यादि पासे करावे, अथवा असद्गुरुने विषे पोते सद्गुरुनी भ्रांति राखी आ विनयमार्गनो उपयोग करे. ॥ २२ ॥

होय मतार्थी तेहने, थाय न आतमलक्ष,
तेह मतार्थीलक्षणो, अहीं कह्यां निर्पक्ष. ॥ २३ ॥

अर्थः—जे मतार्थी जीव होय तेने आत्मज्ञाननो लक्ष थाय नहीं; एवा मतार्थी जीवनां अहिं निष्पक्षपाते लक्षणो कह्यां छेः ॥ २३ ॥

वाह्यत्याग पण ज्ञान नहीं, ते माने गुरु सत्य,
अथवा निजकुळधर्मना, ते गुरुमांज ममत्व. || २४ ||

अर्थः—जेने मात्र वाह्यथी त्याग देखाय छे, पण आत्मज्ञान नथी, अने उपलक्षणथी अंतरंग त्याग नथी, तेवा गुरुने साचा गुरु माने, अथवा तो पोताना कुळधर्मना गमे तेवा गुरु होय तोपण तेमांज ममत्व राखे. || २४ ||

जे जिनदेहप्रमाण ने, समवसरणादि सिद्धि,
वर्णन समजे जिननुं, रोकि रहे निजबुद्धि. || २५ ||

अर्थः—जे जिनना देहादिनुं वर्णन छे, तेने जिननुं वर्णन समजे छे, अने मात्र पोताना कुळधर्मना देव छे माटे मारापणाना कल्पित रागे समवसरणादि महात्म्य कह्या करे छे, अने तेमां पोतानी वुद्धिने रोकी रहे छे; एटले परमार्थ हेतुस्वरूप एवुं जिननुं जे अंतरंग-

स्वरूप जाणवायोग्य छे ते, जाणता नथी, तथा ते जाणवानुं प्रयत्न करता नथी, अने मात्र समवसरणादिमांज जिननुं स्वरूप कहीने मतार्थमां रहे छे. ॥ २५ ॥

प्रत्यक्षसद्गुरुयोगमां, वर्त्ते दृष्टि विमुख;
असद्गुरुने दृढ करे, निजमानार्थे मुख्य. ॥ २६ ॥

अर्थः—प्रत्यक्षसद्गुरुनो क्यारेक योग मळे तो दुराग्रहादिछेदक तेनी वाणी सांभळीने तेनाथी अवळी रीते चाले, अर्थात् ते हितकारी वाणीने ग्रहण करे नहीं, अने पोते खरेखरो दृढ मुमुक्षु छे एवुं मान मुख्यपणे मेळववाने अर्थे असद्गुरु समीपे जइने पोते तेनाप्रत्ये पोतानुं विशेष दृढपणुं जणावे. ॥ २६ ॥

देवादि गति भंगमा, जे समजे श्रुतज्ञान;
माने निजमतवेषनो आग्रह मुक्तिनिदान. ॥ २७ ॥

अर्थः—देव नरकादि गतिना 'भांगा' आदिनां स्वरूप कोइक विशेष परमार्थहेतुथी कह्या छे, ते हेतुने जाण्यो नथी, अने ते भंगजाळने श्रुतज्ञान जे समजे छे, तथा पोताना मतना वेषनो आग्रह राखवामांज मुक्तिनो हेतु माने छे. ॥ २७ ॥

लह्युं स्वरूप न वृत्तिनुं, ग्रह्युं व्रत अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौ

लह्युं स्वरूप न वृत्तिनुं, ग्रह्युं व्रत अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान ॥ २८ ॥

अर्थः—वृत्तिनुं स्वरूप शुं ? ते पण जाणतो नथी, अने ' हुं व्रतधारी छुं ' एवुं अभिमान धारण कर्युं छे. क्वचित् परमार्थउपदेशनो योग बने तोपण लोकोमां पोतानुं मान, अने पूजा सत्कारादि जतां रहेशे, अथवा ते मानादि पछी प्राप्त नही थाय एम जाणीने ते परमार्थने ग्रहण करे नहीं. ॥ २८ ॥

अथवा निश्चयनय ग्रहे, मात्र शब्दनी मांय;
लोपे सद्व्यवहारने, साधनरहित थाय. ॥ २९ ॥

अर्थः—अथवा ' समयसार ' के ' योगवासिष्ठ ' जेवा ग्रंथो वांची ते मात्र निश्चयनयने ग्रहण करे; केवी रीते ग्रहण करे ? मात्र कहेवारूपे; अंतरंगमां तथारूप गुणनी कशी स्पर्शना नहीं, अने सद्गुरु, सत्शास्त्र, तथा वैराग्य विवेकादि साचा व्यवहारने लोपे, तेमज पोताने ज्ञानी मानी लइने साधनरहित वर्त्ते. ॥ २९ ॥

स्वरूप जाणवायोग्य छे ते, जाणता नथी, तथा ते जाणवानुं प्रयत्न करता नथी, अने मात्र समवसरणादिमांज जिननुं स्वरूप कहीने मतार्थमां रहे छे. ॥ २५ ॥

प्रत्यक्षसद्गुरुयोगमां, वर्त्ते दृष्टि विमुख;
असद्गुरुने दृढ करे, निजमानार्थे मुख्य. ॥ २६ ॥

अर्थः—प्रत्यक्षसद्गुरुनो क्यारेक योग मळे तो दुराग्रहादिछेदक तेनी वाणी सांभळीने तेनाथी अवळी रीते चाले, अर्थात् ते हितकारी वाणीने ग्रहण करे नहीं, अने पोते खरेखरो दृढ मुमुक्षु छे एवुं मान मुख्यपणे मेळववाने अर्थे असद्गुरु समीपे जइने पोते तेनाप्रत्ये पोतानुं विशेष दृढपणुं जणावे. ॥ २६ ॥

देवादि गति भंगमा, जे समजे श्रुतज्ञान;
माने निजमतवेषनो आग्रह मुक्तिनिदान. ॥ २७ ॥

अर्थः—देव नरकादि गतिना ' भांगा' आदिनां स्वरूप कोइक विशेष परमार्थहेतुथी कह्या छे, ते हेतुने जाण्यो नथी, अने ते भंगजाळने श्रुतज्ञान जे समजे छे, तथा पोताना मतना वेषनो आग्रह राखवामांज मुक्तिनो हेतु माने छे. ॥ २७ ॥

लह्युं स्वरूप न वृत्तिनुं, ग्रह्युं व्रत अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान ८

लह्युं स्वरूप न वृत्तिनुं, ग्रह्युं व्रत अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान ॥ २८ ॥

अर्थः—वृत्तिनुं स्वरूप शुं ? ते पण जाणतो नथी, अने ' हुं व्रतधारी छुं ' एवुं अभिमान धारण कर्युं छे. क्वचित् परमार्थउपदेशनो योग बने तोपण लोकोमां पोतानुं मान, अने पूजा सत्कारादि जतां रहेशे, अथवा ते मानादि पछी प्राप्त नहीं थाय एम जाणीने ते परमार्थने ग्रहण करे नहीं. ॥ २८ ॥

अथवा निश्चयनय ग्रहे, मात्र शब्दनी मांय;
लोपे सद्व्यवहारने, साधनरहित थाय. ॥ २९ ॥

अर्थः—अथवा ' समयसार ' के ' योगवासिष्ठ ' जेवा ग्रंथो वांची ते मात्र निश्चयनयने ग्रहण करे; केवी रीते ग्रहण करे ? मात्र कहेवारूपे; अंतरंगमां तथारूप गुणनी कशी स्पर्शना नहीं, अने सद्गुरु, सत्शास्त्र, तथा वैराग्य विवेकादि साचा व्यवहारने लोपे, तेमज पोताने ज्ञानी मानी लइने साधनरहित वर्त्ते. ॥ २९ ॥

ज्ञानदशा पाम्यो नहीं, साधनदशा न कांइ;
पामे तेनी संग जे, ते बुडे भवमांहि ॥ ३० ॥

अर्थः—ते ज्ञानदशा पामे नहीं, तेम वैराग्यादि साधनदशा पण तेने नथी, जेथी तेवा जीवनो संग बीजा जीवने थाय ते पण भवसागरमां डूबे. ॥ ३० ॥

ए पण जीव मतार्थमां, निजमानादि काज;
पामे नहीं परमार्थने, अनअधिकारीमांज. ॥ ३१ ॥

अर्थः—ए जीव पण मतार्थमांज वर्त्ते छे, केमके उपर कह्या जीव तेने जेम कुळधर्मादिथी मतार्थता छे, तेम आने ज्ञानी गणाववाना माननी इच्छाथी पोताना शुष्कमतनो आग्रह छे, माटे ते पण परमार्थने पामे नहीं, अने अनअधिकारी एटले जेने विषे ज्ञान परिणामपामवा-योग्य नहीं एवा जीवोमां ते पण गणाय. ॥ ३१ ॥

नहीं कषाय उपशांतता, नहीं अंतवैंराग्य;
सरळपणुं न मध्यस्थता, ए मतार्थी दुर्भाग्य. ॥ ३२ ॥

अर्थः—जेने क्रोध मान माया लोभरूप कषाय पातळा पड्या नथी, तेम जेने अंतवैंराग्य

उत्पन्न थयो नथी, आत्मामां गुण ग्रहण करवारूप सरळपणुं जेने रह्युं नथी, तेम सत्यासत्य तुलना करवाने जेने अपक्षपात दृष्टि नथी, ते मतार्थी जीव दुर्भाग्य छे; एटले जन्म, जरा, मरणने छेदवावाळा

उत्पन्न थयो नथी, आत्मामां गुण ग्रहण करवारूप सरळपणुं जेने रह्युं नथी, तेम सत्यासत्य तुलना करवाने जेने अपक्षपात दृष्टि नथी, ते मतार्थी जीव दुर्भाग्य छे; एटले जन्म, जरा, मरणने छेदवावाळा मोक्षमार्गने पामवायोग्य एवुं तेनुं भाग्य न समजवुं. ॥ ३२ ॥

लक्षण कह्यां मतार्थीनां, मतार्थ जावा काज;
हवे कहुं आत्मार्थीना, आत्म-अर्थ सुखसाज. ॥ ३३ ॥

अर्थः—एम मतार्थी जीवनां लक्षणो कह्यां; ते कहेवानो हेतु ए छे के, कोइ पण जीवनो ते जाणीने मतार्थ जाय. हवे आत्मार्थी जीवनां लक्षणो कहीये छैयेः ते लक्षणो केवां छे के, आत्माने अव्याबाध सुखनी सामग्रिनां हेतु छे. ॥ ३३ ॥

॥ आत्मार्थीलक्षणो. ॥

आत्मज्ञान त्या मुनिपणुं, ते साचा गुरु होय;
बाकी कुलगुरु कल्पना, आत्मार्थी जन जोय. ॥ ३४ ॥

अर्थः—ज्यां आत्मज्ञान होय त्यां मुनिपणुं होय, अर्थात् आत्मज्ञान न होय त्यां मुनिपणुं

नज संभवे. "जं समति पासह तं मोणंति पासह" (ज्यां समकित एटले आत्मज्ञान छे, त्यां मुनिपणुं जाणो) एम 'आचारांगसूत्र' मां कह्युं छे, एटले जेमां आत्मज्ञान होय ते साचा गुरु छे एम जाणे छे, अने आत्मज्ञानरहित होय तोपण पोताना कुलना गुरुने सद्गुरु मानवा ए मात्र कल्पना छे; तेथी कंइ भवछेदन न थाय एम आत्मार्थी जुए छे. ॥ ३४ ॥

प्रत्यक्ष सद्गुरु प्राप्तिनो, गणे परम उपकार,
त्रणे योग एकत्वथी, वर्त्ते आज्ञाधार. ॥ ३५ ॥

अर्थः—प्रत्यक्ष सद्गुरुनी प्राप्तिनो मोटो उपकार जाणे, अर्थात् शास्त्रादिथी जे समाधान थई शकवायोग्य नथी, अने जे दोषो सद्गुरुनी आज्ञा धारण कर्याविना जता नथी, ते सद्गुरु-योगथी समाधान थाय, अने ते दोषो टळे, माटे प्रत्यक्ष सद्गुरुनो मोटो उपकार जाणे, अने ते सद्गुरुप्रत्ये मन वचन कायानी एकताथी आज्ञांकितपणे वर्त्ते. ॥ ३५ ॥

एक होय त्रण कालमां, परमार्थनो पंथ;
प्रेरे ते परमार्थने, ते व्यवहार समंत. ॥ ३६ ॥

अर्थः—त्रणे कालने विषे परमार्थनो पंथ एटले मोक्षनो मार्ग एक होवो जोइए, अने जेथी ते परमार्थ सिद्ध थाय ते व्यवहार जीवे मान्य राखवो जोइए; बीजो नहीं. ॥ ३६ ॥

एम विचारी अंतरे, शोधे सद्गुरुयोग;
काम एक आत्मार्थनुं, बीजो नहीं मन रोग. ॥ ३७ ॥

एम विचारी अंतरे, शोधे सद्गुरुयोग;
काम एक आत्मार्थनुं, बीजो नहीं मन रोग. ॥ ३७ ॥

अर्थः—एम अंतरमां विचारीने जे सद्गुरुना योगनो शोध करे, मात्र एक आत्मार्थनी इच्छा राखे, पण मान पूजादिक, रिद्धि-सिद्धिनी कशी इच्छा राखे नहीं;—ए रोग जेना मनमां नथी. ॥ ३७ ॥

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्षअभिलाष;
भवे खेद, प्राणीदया, त्यां आत्मार्थनिवास ॥ ३८ ॥

अर्थः—ज्यां कषाय पातळा पड्या छे, एक मोक्षपद शिवाय बीजा कोइ पदनी अभिलाषा नथी, संसारपर जेने दया छे, एवा जीवने विषे आत्मार्थनो निवास थाय. ॥ ३८ ॥

दशा न एवी ज्यांसुधी, जीव लहे नहीं जोग;
मोक्षमार्ग पामे नहीं, मटे न अंतरोंग. ॥ ३९ ॥

अर्थः—ज्यांसुधी एवी जोगदशा जीव पामे नहीं, त्यांसुधी तेने मोक्षमार्गनी प्राप्ति न थाय, अने आत्मभ्रांतिरूप अनंत दुःखनो हेतु एवो अंतरोंग न मटे. ॥ ३९ ॥

आवे ज्यां एवी दशा, सद्गुरुबोध सुहाय;
ते बोधे सुविचारणा, त्यां प्रगटे सुखदाय. ॥ ४० ॥

अर्थः—एवी दशा ज्यां आवे त्यां सद्गुरुनो बोध शोभे, अर्थात् परिणाम पामे, अने ते बोधना परिणामथी सुखदायक एवी सुविचारदशा प्रगटे. ॥ ४० ॥

ज्यां प्रगटे सुविचारणा, त्यां प्रगटे निजज्ञान;
जे ज्ञाने क्षय मोह थइ, पामे पद निर्वाण. ॥ ४१ ॥

अर्थः—ज्यां सुविचारदशा प्रगटे त्यां, आत्मज्ञान उत्पन्न थाय, अने ते ज्ञानथी मोहनो क्षय करी निर्वाणपदने पामे. ॥ ४१ ॥

उपजे ते सुविचारणा, मोक्षमार्ग समजाय;
गुरुशिष्यसंवादथी, भाखुं षट्पद आंहि. ॥ ४२ ॥

अर्थः—जेथी ते सुविचारदशा उत्पन्न थाय, अने मोक्षमार्ग समजवामां आवे ते, छपदरूपे गुरुशिष्यना संवादथीकरीने अहीं कहुं छुं. ॥ ४२ ॥

॥ षट्पदनामकथन. ॥

|| षट्पदनामकथन. ||

‘ आत्मा छे,’ ‘ ते नित्य छे,’ ‘ छे कर्त्ता निजकर्म;’
‘ छे भोक्ता,’ वळी ‘ मोक्ष छे’ ‘मोक्षउपाय सुधर्म.’ ॥ ४३ ॥

अर्थः—‘ आत्मा छे,’ ‘ ते आत्मा नित्य छे,’ ‘ ते आत्मा पोताना कर्मनो कर्त्ता छे,’ ‘ ते कर्मनो भोक्ता छे,’ ‘ तेथी मोक्ष थाय छे,’ अने ते ‘ मोक्षनो उपाय एवो सत्‌धर्म छे. ’॥४३॥

षट्स्थानक संक्षेपमां, षट्दर्शन पण तेह;
समजावा परमार्थने, कह्यां ज्ञानीए एह. ॥ ४४ ॥

अर्थः—ए छ स्थानक अथवा छ पद अहीं संक्षेपमां कह्यां छे, अने विचार करवाथी षड्दर्शन पण तेज छे. परमार्थ समजाववाने माटे ज्ञानीपुरुषे ए छपदो कह्यां छे. ॥ ४४ ॥

|| शंका—शिष्य उवाच. ||

शिष्य प्रथम स्थानकनी शंका करे छेः—

नथी दृष्टिमां आवतो, नथी जणातुं रूप;
बीजो पण अनुभव नहीं, तेथी न जीवस्वरूप. ॥ ४५ ॥

अर्थः—दृष्टिमां आवतो नथी, तेम जेनुं कंइ रूप जणातुं नथी, तेम स्पर्शादि बीजा अनुभवथी पण जेनुं जणावापणुं नथी, माटे जीवनुं स्वरूप नथी; अर्थात् जीव नथी. ॥ ४५ ॥

अथवा देहज आतमा, अथवा इंद्रिय प्राण;
मिथ्या जूदो मानवो, नहीं जूदुं एंधाण. ॥ ४६ ॥

अर्थः—अथवा देहज छे ते; आत्मा छे, अथवा इंद्रियो छे ते, आत्मा छे, अथवा श्वासोच्छ्वास छे ते, आत्मा छे; अर्थात् ए सौ एकना एक देहरूपे छे, माटे आत्माने जूदो मानवो ते मिथ्या छे, केमके तेनुं कशुं जूदुं एंधाण एटले चिन्ह नथी. ॥ ४६ ॥

वळी जो आत्मा होय तो, जणाय ते नहीं केम?
जणाय जो ते होय तो; घट पट आदि जेम. ॥ ४७ ॥

अर्थः—अने जो आत्मा होय तो ते जणाय शा माटे नहीं? जो घट पट आदि पदार्थो छे तो ते जेम जणाय छे, तेम आत्मा होय तो शा माटे न जणाय? ॥ ४७ ॥

माटे छे नहीं आतमा, मिथ्या मोक्षउपाय;
ए अंतर्शंकातणो, सम

माटे छे नहीं आतमा, मिथ्या मोक्षउपाय;
ए अंतर्शंकातणो, समजावो सदुपाय. ॥ ४८ ॥

अर्थः—माटे आत्मा छे नहीं, अने आत्मा नथी एटले तेना मोक्षना अर्थे उपाय करवा ते फोकट छे, ए मारा अंतरनी शंकानो कंइ पण सदुपाय समजावो एटले समाधान होय तो कहो? ॥ ४८ ॥

॥ समाधान—सद्गुरु उवाच ॥

'आत्मा छे' एम सद्गुरु समाधान करे छेः—

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देहसमान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, प्रगटलक्षणे भान. ॥ ४९ ॥

अर्थः—देहाध्यासथी एटले अनादिकाळथी अज्ञानने लीधे देहनो परिचय छे तेथी, आत्मा देह जेवो अर्थात् तने देह भास्यो छे; पण आत्मा अने देह बन्ने जूदां छे, केमके वेय जूदां जूदा लक्षणथी प्रगट भानमां आवे छे. ॥ ४९ ॥

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देहसमान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, जेम असि ने म्यान. ॥ ५० ॥

अर्थः—अनादिकाळना अज्ञानने लीधे देहना परिचयथी देहज आत्मा भास्यो छे, अथवा देह जेवो आत्मा भास्यो छे, पण जेम तरवार ने म्यान, म्यानरूप लागतां छतां बन्ने जूदां जूदां छे, तेम आत्मा अने देह बन्ने जूदां जूदां छे. ॥ ५० ॥

जे द्रष्टा छे दृष्टिनो, जे जाणे छे रूप;
अबाध्य अनुभव जे रहे, ते छे जीवस्वरूप. ॥ ५१ ॥

अर्थः—ते आत्मा दृष्टि एटले आंखथी क्यांथी देखाय? केमके उलटो तेनो ते जोनार छे. स्थूल सूक्ष्मादि रूपने जे जाणे छे, अने सर्वने बाध करतां कोइ पण प्रकारे जेनो बाध करी शकातो नथी एवो बाकी जे अनुभव रहे छे ते, जीवनुं स्वरूप छे. ॥ ५१ ॥

छे इंद्रिय प्रत्येकने, निज निज विषयनुं ज्ञान;
पांच इंद्रिना विषयनुं, पण आत्माने भान. ॥ ५२ ॥

अर्थः—कर्णेंद्रियथी सांभळ्युं ते ते कर्णेंद्रिय जाणे छे, पण चक्षु-इंद्रिय तेने जाणती नथी,

अने चक्षु-इंद्रिये दीठेलुं ते कर्णेंद्रिय जाणती नथी; अर्थात् सौ सौ इंद्रियने पोतपोताना विषयनुं ज्ञान छे, पण बीजी इंद्रियोना विषयनुं ज्ञान नथी, अने आत्माने तो पांचे इंद्रियनां विषयनुं ज्ञान छे; अर्थात जे

अने चक्षु-इंद्रिये दीठेलुं ते कर्णेंद्रिय जाणती नथी; अर्थात् सौ सौ इंद्रियने पोतपोताना विषयनुं ज्ञान छे, पण बीजी इंद्रियोना विषयनुं ज्ञान नथी, अने आत्माने तो पांचे इंद्रियनां विषयनुं ज्ञान छे; अर्थात् जे ते पांचे इंद्रियोना ग्रहण करेला विषयने जाणे छे ते, 'आत्मा' छे. अने आत्माविना एकेक इंद्रिय एकेक विषयने ग्रहण करे एम कह्युं ते पण उपचारथी कह्युं छे. ॥ ५२ ॥

देह न जाणे तेहने, जाणे न इंद्रि प्राण;
आत्मानी सत्तावडे, तेह प्रवर्ते जाण. ॥ ५३ ॥

अर्थः—देह तेने जाणतो नथी, इंद्रियो तेने जाणती नथी, अने श्वासोच्छ्वासरूप प्राण पण तेने जाणतो नथी; ते सौ एक आत्मानी सत्ता पामीने प्रवर्त्ते छे, नहीं तो जडपणे पड्या रहे छे, एम जाण. ॥ ५३ ॥

सर्व अवस्थाने विषे, न्यारो सदा जणाय;
प्रगटरूप चैतन्यमय, ए एंधाणे सदाय. ॥ ५४ ॥

अर्थः—जाग्रत, स्वप्न, अने निद्रा ए अवस्थामां वर्त्ततो छतां ते ते अवस्थाओथी जूदो जे रह्या करे छे, अने ते ते अवस्था व्यतीत थये पण जेनुं होवापणुं छे, अने ते ते अवस्थाने

जे जाणे छे, एवो प्रगटस्वरूप चैतन्यमय छे, अर्थात् जाण्याज करे छे एवो जेनो स्वभाव प्रगट छे, अने ए तेनी निशानी सदाय वर्त्ते छे; कोइ दिवस ते निशानीनो भंग थतो नथी. ॥५४॥

घट, पट आदि जाण तुं, तेथी तेने मान;
जाणनार ते मान नहीं, कहिये केवुं ज्ञान? ॥ ५५ ॥

अर्थः—घट, पट आदिने तुं पोते जाणे छे, 'ते छे' एम तुं माने छे, अने जे ते घट, पट आदिनो जाणनार छे तेने मानतो नथी; ए ज्ञान ते केवुं कहेवुं? ॥ ५५ ॥

परम बुद्धि कृष देहमां, स्थूल देह मति अल्प;
देह होय जो आतमा, घटे न आम विकल्प. ॥ ५६ ॥

अर्थः—दुर्बळ देहने विषे परम बुद्धि जोवामां आवे छे, अने स्थूल देहने विषे थोडी बुद्धि पण जोवामां आवे छे; जो देहज आत्मा होय तो एवो विकल्प एटले विरोध थवानो वखत न आवे. ॥ ५६ ॥

जड चेतननो भिन्न छे, केवळ प्रगट स्वभाव;
एकपणुं पामे नहीं, त्रणे काळ द्वयभाव. ॥ ५७ ॥

अर्थः—कोइ काळे जेमां जाणवानो स्वभाव नथी ते जड, अने सदाय जे जाणवाना स्वभाववान छे ते चेतन; एवो बेयनो केवळ जूदो स्वभाव छे, अने ते कोइ पण प्रकारे एकपणुं पामवायोग्य न

अर्थः—कोइ काळे जेमां जाणवानो स्वभाव नथी ते जड, अने सदाय जे जाणवाना स्वभाववान छे ते चेतन; एवो बेयनो केवळ जूदो स्वभाव छे, अने ते कोइ पण प्रकारे एकपणुं पामवायोग्य नथी, त्रणे काळ जड जडभावे, अने चेतन चेतनभावे रहे एवो बेयनो जूदो जूदो द्वैतभाव प्रसिद्ध ज अनुभवाय छे. ॥ ५७ ॥

समर्थनः—श्री तीर्थंकर एम कहे छे के, आ जगत्मां आ 'जीव' नामना पदार्थने गमे ते प्रकारे कह्यो होय ते प्रकार तेनी स्थितिमां हो, तेने विषे अमारू उदासीनपणुं छे, जे प्रकारे निराबाधपणे ते 'जीव' नामनो पदार्थ अमे जाण्यो छे, ते प्रकारे करीने अमे प्रकट कह्यो छे, जे लक्षणे कह्यो छे, ते सर्व प्रकारना बाधे करी रहित एवो कह्यो छे, अमे ते आत्मा एवो जाण्यो छे, जोयो छे, स्पष्ट अनुभव्यो छे,—प्रगट ते ज आत्मा छीए. ते आत्मा, समता, नामने लक्षणे युक्त छे, वर्त्तमान समये जे असंख्य प्रदेशात्मक चैतन्यस्थिति ते आत्मानी छे ते, ते पहेलानां एक, बे, त्रण, चार, दश, संख्यात, अनंत, समये हती, वर्त्तमाने छे, हवे पछीना काळने विषे पण ते ज प्रकारे तेनी स्थिति छे, कोइ पण काळे तेनुं असंख्यात प्रदेशात्मकपणुं, चैतन्यपणु, अरूपीपणुं, ए आदि समस्त स्वभाव ते छूटता घटवा नथी, एवुं जे 'समपणुं'—'समता' ते जेनामां लक्षण छे, ते 'जीव' छे.

पशु, पक्षी मनुष्यादि देहने विषे, वृक्षादिने विषे, जे कंइ रमणीयपणुं जणाय छे, अथवा जेनावडे ते सर्व प्रगट स्फुर्तिवाळां जणाय छे, प्रगट सुंदरपणा समेत लागे छे, ते—'रमणीयपणुं'—'रमता छे'—लक्षण जेनु, ते 'जीव' नामनो पदार्थ छे,—जेना विद्यमानपणा विना आखु जगत् शून्यवत् संभवे छे, एवुं रम्यपणुं जेने विपे छे,— ते लक्षण जेने विषे घटे—ते 'जीव' छे.

कोइ पण जाणनार, क्यारे पण, कोइ पण पदार्थने पोताना अविद्यमानपणे जाणे एम, बनवायोग्य नथी, प्रथम पोतानु विद्यमानपणुं घटे छे, अने कोइ पण पदार्थनुं ग्रहण, त्यागादि के उदासीन ज्ञान थवामां पोते ज कारण छे, बीजा पदार्थना अंगीकारमां,–तेना अल्पमात्र पण ज्ञानमां प्रथम जो होय, तो ज थई शके, एवो सर्वथी प्रथम रहेनारो जे पदार्थ, ते जीव छे,–तेने गौण करीने एटले तेनाविना कोइ कंइ पण जाणवा इच्छे, तो ते बनवायोग्य नथी. मात्र ते ज मुख्य होय, तो ज बीजुं कंइ जाणी शकाय; एवो जे प्रगट 'ऊर्ध्वताधर्म' ते जेने विषे छे, ते पदार्थने श्री तीर्थंकर 'जीव' कहे छे.

प्रगट एवा जड पदार्थो, अने जीव, ते जे कारणे करी भिन्न पडे छे, ते लक्षण जीवनो 'ज्ञायकपणा' नामनो गुण छे. कोइ पण समये ज्ञायकरहितपणे आ 'जीव पदार्थ' कोइ पण अनुभवी शके नहीं, अने ते 'जीव' नामना पदार्थ शिवाय बीजा कोइ पण पदार्थने विषे ज्ञायकपणुं संभवी शके नहीं; एवुं जे अत्यंत अनुभवनुं कारण 'ज्ञायकता,' – ते लक्षण जेमां छे, ते पदार्थने तीर्थंकरे 'जीव' कह्यो छे.

शब्दादि पांच विषयसंबंधी अथवा समाधि आदि जोगसंबंधी जे स्थितिमां सुख संभवे छे, ते भिन्न भिन्न करी जोतां मात्र छेवटे ते सर्वने विषे सुखनुं कारण, एक ज एवो ए 'जीव' पदार्थ संभवे छे, ते सुखाभास नामनुं लक्षण, माटे, तीर्थंकरे 'जीव' नुं कह्युं छे, अने व्यवहारदृष्टांते निद्राथी ते प्रकट जणाय छे. जे निद्राने विषे बीजा सर्व पदार्थथी रहितपणुं छे, त्यां पण, हु सुखी छुं, एवुं जे ज्ञान छे ते, बाकी बच्यो एवो जे 'जीव पदार्थ' तेनुं छे, बीजुं कोइ त्यां विद्यमान नथी, अने सुखनुं भासवापणुं तो अत्यंत स्पष्ट छे, ते जेनाथी भासे छे ते,–ते लक्षण–'जीव' नामना पदार्थ शिवाय बीजे क्यांय जोयुं नथी.

आ मोळुं छे, आ मीठुं छे, आ खाटुं छे, आ खारुं छे, हुं आ स्थितिमां छु, टाढे ठरूं छुं, ताप पडे छे, दु:खी छु, दु:ख अनुभवुं छुं. एवुं जे स्पष्ट ज्ञान–वेदनज्ञान–अनुभवज्ञान–अनुभवपणु–ते जो कोइमां पण होय, तो ते आ ...

आ मोळुं छे, आ मीठुं छे, आ खाटु छे, आ खारूं छे, हुं आ स्थितिमां छुं, टाढे ठरूं छुं, ताप पडे छे, दुःखी छु, दु.ख अनभवुं छु एवुं जे स्पष्ट ज्ञान–वेदनज्ञान–अनुभवज्ञान–अनुभवपणुं–ते जो कोइमां पण होय, तो ते आ 'जीवपद' ने विषे छे, अथवा ते जेनुं लक्षण होय छे, ते पदार्थ 'जीव' होय छे,–ए ज तीर्थंकरादिनो अनुभव छे.

'स्पष्ट प्रकाशपणुं,'– अनंत अनंत कोटी तेजस्वी दीपक, मणि, चद्र, सूर्यादिनी कांति जेना प्रकाशविना प्रगटवा समर्थ नथी, अर्थात् ते सर्व पोतपोताने जणावा अथवा जाणवा योग्य नथी, जे पदार्थना प्रकाशने विषे चैतन्यपणाथी ते पदार्थो जाण्या जाय छे, ते पदार्थो प्रकाश पामे छे, स्पष्ट भासे छे, ते पदार्थ जे कोइ छे ते जीव छे, अर्थात् ते लक्षण–स्पष्ट प्रकाशमान अचळ एवुं निराबाध प्रकाशमान चैतन्य–ते 'जीव'नुं ते, 'जीव' प्रत्ये उपयोग वाळतां प्रगटपणे–देखाय छे.

ए जे लक्षणो कह्यां ते, फरी फरी विचारी 'जीव' निराबाधपणे जाण्यो जाय छे. जे जाणवाथी 'जीव' जाण्यो छे ते लक्षणो, ए प्रकारे तीर्थंकरादिए कह्यां छे.

आत्मानी शंका करे, आत्मा पोते आप;
शंकानो करनार ते, अचरज एह अमाप; ॥ ५८ ॥

अर्थः–आत्मानी शंका आत्मा आप पोते ज करे छे; जे शंकानो करनार छे, ते ज आत्मा छे; ते जणातो नथी, ए माप न थई शके एवुं आश्चर्य छे. ॥ ५८ ॥

॥ शंका—शिष्य उवाच. ॥

आत्मा नित्य नथी, एम शिष्य कहे छेः—

आत्माना अस्तित्वना, आपे कह्या प्रकार;
संभव तेनो थाय छे, अंतर् कर्ये विचार. ॥ ५९ ॥

अर्थः—आत्माना होवापणाविषे आपे जे जे प्रकार कह्या, तेनो अंतर्मां विचार करवाथी संभव थाय छे. ॥ ५९ ॥

बीजी शंका थाय त्यां, आत्मा नहीं अविनाश;
देहयोगथी उपजे, देहवियोगे नाश. ॥ ६० ॥

अर्थः—पण बीजी एम शंका थाय छे के आत्मा छे, तोपण ते अविनाश एटले नित्य नथी; त्रणे काळ होय एवो पदार्थ नथी, मात्र देहना संयोगथी उत्पन्न थाय, अने देहना वियोगे नाश पामे. ॥ ६० ॥

अथवा वस्तु क्षणिक छे, क्षणे क्षणे पलटाय;
ए अनुभवथी पण नहीं, आत्मा नित्य जणाय. ॥ ६१ ॥

अर्थः—अथवा वस्तु क्षणे क्षणे बदलाती जोवामां आवे छे, तेथी सर्व वस्तु क्षणिक छे, अने ए अनुभवथी जोतां पण आत्मा नित्य जणातो नथी. ॥ ६१ ॥

अर्थः—अथवा वस्तु क्षणे क्षणे बदलाती जोवामां आवे छे, तेथी सर्व वस्तु क्षणिक छे, अने ए अनुभवथी जोतां पण आत्मा नित्य जणातो नथी. ॥ ६१ ॥

॥ समाधान—सद्गुरु उवाच. ॥

'आत्मा नित्य छे,' एम समाधान करे छेः—

देह मात्र संयोग छे, वळी जड, रूपी, दृश्य;
चेतननां उत्पत्ति, लय कोना अनुभव वश्य?॥ ६२ ॥

अर्थः—देह मात्र परमाणुनो संयोग छे, अथवा संयोगे करी आत्माना संबंधमां छे; वळी ते देह जड छे, रूपी छे, अने दृश्य एटले बीजा कोइ द्रष्टानो ते जाणवानो विषय छे एटले ते पोते पोताने जाणतो नथी, तो चेतननां उत्पत्ति अने नाश ते क्यांथी जाणे? ते देहना परमाणुए परमाणुनो विचार करतां पण ते जड ज छे, एम समजाय छे; तेथी तेमांथी चेतनउत्पत्ति थवायोग्य नथी तेथी चेतन तेमां नाश पण पामवायोग्य नथी. वळी ते देह रूपी एटले स्थूळादि परिणामवाळो छे, अने चेतन द्रष्टा छे, त्यारे तेना संयोगथी चेतननी उत्पत्ति शी रीते थाय? अने तेमां लय पण केम थाय? देहमांथी चेतन उत्पन्न थाय छे, अने तेमां ज नाश पामे छे, ए वात कोना अनुभवने वश रही? अर्थात् एम केणे जाण्युं?

केमके जाणनार एवा चेतननी उत्पत्ति देहथी प्रथम छे नहीं, अने नाश तो तेथी पहेलां छे, त्यारे ए अनुभव थयो कोने? ॥ ६२ ॥

समर्थनः–जीवनुं स्वरूप अविनाशी एटले नित्य–त्रिकाळ रहेवावाळुं–संभवतुं नथी, देहना योगथी एटले देहना जन्म साथे ते जन्मे छे, अने देहना वियोगे एटले देहना नाशथी ते नाश पामे छे, देह छे ते जीवने मात्र संयोगसंबंधे छे, पण जीवनुं मूळ स्वरूप उत्पन्न थवानुं कंइ ते कारण नथी; अथवा देह छे ते मात्र संयोगथी उत्पन्न थयेलो एवो पदार्थ छे. वळी ते जड एटले कोइने जाणतो नथी, पोताने ते जाणतो नथी, तो बीजांने शुं जाणे? वळी देह रूपी छे, स्थूळादि स्वभाववाळो छे, अने चक्षुनो विषय छे; ए प्रकारे देहनुं स्वरूप छे, तो ते चेतननां उत्पत्ति अने लयने शी रीते जाणे? अर्थात् पोताने ते जाणतो नथी, तो 'माराथी आ चेतन उत्पन्न थयुं छे' एम शी रीते जाणे? अने 'मारा छूटी जवा पछी आ चेतन छूटी जशे' अर्थात् नाश पामशे एम जड एवो देह शी रीते जाणे? केमके जाणनारो पदार्थ तो जाणनारज रहे छे, देह जाणनार थई शकतो नथी, तो पछी चेतननां उत्पत्ति, लयनो अनुभव केने वश्य कहेवो? देहने वश तो कहेवाय एवुं छे ज नहीं, केमके ते प्रत्यक्ष जड छे, अने तेनुं जडपणुं जाणनारो एवो तेथी भिन्न बीजो पदार्थ पण समजाय छे. जो कदी एम कहीए के, चेतनना उत्पत्ति, लय चेतन जाणे छे तो ते वात तो बोलतां ज विघ्न पामे छे, केमके चेतननां उत्पत्ति, लय जाणनार तरीके चेतननो ज अंगीकार करवो पड्यो, एटले ए वचन तो मात्र अपसिद्धांतरूप अने कहेवामात्र थयुं. जेम 'मारा मोढामां जीभ नथी' एवुं वचन कोइ कहे तेम चेतननां उत्पत्ति, लय चेतन जाणे छे, माटे चेतन नित्य नथी एम कहीए ते तेवुं प्रमाण थयुं. ते प्रमाणनु केवुं यथार्थपणुं छे ते तमे ज विचारी जुओ.

जेना अनुभव वश्य ए, उत्पन्न लयनुं ज्ञान;
ते तेथी जुद [illegible]

जेना अनुभव वश्य ए, उत्पन्न लयनुं ज्ञान;
ते तेथी जूदाविना, थाय न केमें भान. ॥ ६३ ॥

अर्थः—जेना अनुभवमां ए उत्पत्ति अने नाशनुं ज्ञान वर्त्ते ते भान तेथी जूदाविना कोइ प्रकारे पण संभवतुं नथी, अर्थात् चेतनना उत्पत्ति, लय थाय छे एवो कोइने पण अनुभव थवायोग्य छे नहीं. ॥ ६३ ॥

समर्थनः—देहनी उत्पत्ति, अने देहना लयनु ज्ञान जेना अनुभवमां वर्ते छे, ते ते देहथी जूदो न होय तो कोइ पण प्रकारे देहनी उत्पत्ति अने लयनु ज्ञान थाय नहीं, अथवा जेनी उत्पत्ति अने लय जे जाणे छे, ते तेथी जूदो ज होय, केमके ते उत्पत्तिलयरूप न ठर्यो, पण तेनो जाणनार ठर्यो, माटे ते बेनी एकता केम थाय?

जे संयोगो देखिये, ते ते अनुभवदृश्य;
उपजे नहीं संयोगथी, आत्मा नित्य प्रत्यक्ष. ॥ ६४ ॥

अर्थः—जे जे संयोगो देखीए छीए ते ते अनुभवस्वरूप एवा आत्माना दृश्य एटले तेने आत्मा जाणे छे, अने ते संयोगनुं स्वरूप विचारतां एवो कोइ पण संयोग समजातो नथी, के जेथी आत्मा उत्पन्न थाय छे; माटे आत्मा संयोगथी नहीं उत्पन्न थयेलो एवो छे; अर्थात् असंयोगी छे, स्वाभाविक पदार्थ छे, माटे ते प्रत्यक्ष 'नित्य' समजाय छे. ॥ ६४ ॥

जडथी चेतन उपजे, चेतनथी जड थाय,
एवो अनुभव कोइने, क्यारे कदी न थाय. ॥ ६५ ॥

अर्थः–जडथी चेतन उपजे, अने चेतनथी जड उत्पन्न थाय एवो कोइने क्यारे-कदी-पण अनुभव थाय नहीं. ॥ ६५ ॥

समर्थनः–जे जे देहादि संयोगो देखाय छे, ते ते अनुभवस्वरूप एवा आत्मानां दृश्य छे, अर्थात् आत्मा तेने जूए छे, अने जाणे छे. एवा पदार्थ छे ते वधा संयोगोनो विचार करी जुओ, तो कोइ पण संयोगोथी अनुभवस्वरूप एवो आत्मा उत्पन्न थइ शकवा योग्य तमने जणाशे नहीं कोइ पण संयोगो तमने जाणता नथी, अने तमे ते सर्व सयोगोने जाणो छो एज तमारू तेथी जूदापणुं अने असंयोगीपणुं एटले ते संयोगोथी उत्पन्न नहीं थवापणु सहजे सिद्ध थाय छे, अने अनुभवमां आवे छे, तेथी एटले कोइ पण संयोगोथी जेनी उत्पत्ति थइ शकती नथी, कोइ पण सयोगो जेनी उत्पत्ति माटे अनुभवमां आवी शकता नथी; जे जे संयोगो कल्पीए तेथी ते अनुभव न्यारोने न्यारोज मात्र तेने जाणनाररूपे ज रहे छे; ते अनुभवस्वरूप आत्माने तमे नित्य अने अस्पर्श्य एटले ते संयोगीना भावरूप स्पर्शने पाम्यो नथी, एम जाणो. कोइ पण संयोगोथी जे उत्पन्न न थयुं होय, अर्थात् पोताना स्वभावथी करीने जे पदार्थ सिद्ध होय, तेनो लय वीजा कोइ पण पदार्थमां थाय नहीं, अने जो वीजा पदार्थमां तेनो लय थतो होय, तो तेमांथी तेनी प्रथम उत्पत्ति थवी जोइती हती, नहींतो तेमां तेनी लयरूप ऐक्यता थाय नही, माटे आत्मा अनुत्पन्न अने अविनाश जाणीने नित्य छे एवी प्रतीति करवी योग्य लागशे.

कोइ संयोगोथी नहीं, जेनी उत्पत्ति थाय;

कोइ संयोगोथी नहीं, जेनी उत्पत्ति थाय;
नाश न तेनो कोइमां, तेथी 'नित्य' सदाय. ॥ ६६ ॥

अर्थः—जेनी उत्पत्ति कोइ पण संयोगोथी थाय नहीं, तेनो नाश पण कोइने विषे थाय नहीं, माटे आत्मा त्रिकाळ 'नित्य' छे. ॥ ६६ ॥

क्रोधादि तरतम्यता, सर्पादिकनी मांय,
पूर्वजन्मसंस्कार ते, जीवनित्यता त्यांय ॥ ६७ ॥

अर्थः—क्रोधादि प्रकृतिओनुं विशेषपणुं सर्प वगेरे प्राणीमां जन्मथीज जोवामां आवे छे; वर्त्तमानदेहे तो ते अभ्यास कर्यो नथी; जन्मनी साथेज ते छे; एटले ए पूर्वजन्मनोज संस्कार छे; जे पूर्वजन्म जीवनी नित्यता सिद्ध करे छे. ॥ ६७ ॥

समर्थनः—सर्पमां जन्मथी क्रोधनुं विशेषपणुं जोवामां आवे छे, पारेवाने विषे जन्मथीज निर्हिंसकपणुं जोवामां आवे छे, मांकड आदि जतुओने पकडतां, तेने पकडावाथी दुःख थाय छे एवी भयसंज्ञा प्रथमथी तेना अनुभवमां रही छे तेथी, नाशी जवानुं प्रयत्न करे छे, कैक प्राणीमां जन्मथी प्रीतिनु, कैकमां समतानुं, कैकमां विशेष निर्भयतानु, कैकमां गभीरतानु, कैकमां विशेष भयसंज्ञानु, कैकमां कामादि प्रत्ये असंगतानुं अने कैकने आहारादि विषे अधिक अधिक लुब्धपणानुं विशेषपणुं जोवामां आवे छे ए आदि भेद एटले क्रोधादि

संज्ञाना न्यूनाधिकपणा आदिथी, तेम ज ते ते प्रकृतिओ जन्मथी सहचारीपणे रही जोवामां आवे छे तेथी तेनुं कारण पूर्वना संस्कारो ज संभवे छे. कदापि एम कहीए के, गर्भमां वीर्य रेतना गुणना योगथी ते ते प्रकारना गुणो उत्पन्न थाय छे, पण तेमां पूर्वजन्म कंइ कारणभूत नथी. ए कहेवुं पण यथार्थ नथी. जे मावापो कामने विषे विशेष प्रीतिवाळां जोवामां आवे छे, तेना पुत्रो परम वीतराग जेवा बाळपणाथी ज जोवामां आवे छे; वळी जे मावापोमां क्रोधनु विशेषपणुं जोवामां आवे छे, तेनी संततिमां समतानुं विशेषपणुं दृष्टिगोचर थाय छे; ते शी रीते थाय ? वळी ते वीर्य रेतना तेवा गुणो संभवता नथी, केमके ते वीर्य रेत पोते चेतन नथी. तेमां चेतन संचरे छे, एटले देह धारण करे छे, एथी करीने वीर्य रेतने आश्रये क्रोधादि भाव गणी शकाय नहीं. चेतनविना कोइ पण स्थळे तेवा भावो अनुभवमां आवता नथी; मात्र ते चेतनाश्रित छे, एटले वीर्य रेतना गुणो नथी, जेथी तेनां न्यूनाधिके करी क्रोधादिनुं न्यूनाधिकपणुं मुख्यपणे थई शकवायोग्य नथी. चेतनना ओछा अधिका प्रयोगथी क्रोधादिनुं न्यूनाधिकपणुं थाय छे, जेथी गर्भना वीर्य रेतनो गुण नहीं, पण चेतननो ते गुणने आश्रय छे, अने ते न्यूनाधिकपणुं ते चेतनना पूर्वना अभ्यासथी ज संभवे छे, केमके कारणविना कार्यनी उत्पत्ति न थाय. चेतननो पूर्वप्रयोग तथाप्रकारे होय तो ते ते संस्कार वर्त्ते, जेथी आ देहादि प्रथमना संस्कारोनो अनुभव थाय छे, अने ते संस्कारो पूर्वजन्म सिद्ध करे छे, अने पूर्वजन्मनी सिद्धिथी आत्मानी नित्यता सहजे सिद्ध थाय छे.

आत्मा द्रव्ये नित्य छे, पर्याये पलटाय,
बाळादि वय त्रण्यनुं, ज्ञान एकने थाय. ॥ ६८ ॥

अर्थः—आत्मा वस्तुपणे नित्य छे. समये समये ज्ञानादि परिणामना पलटवाथी तेना पर्यायनुं पलटवापणुं छे. (कंइ समुद्र पलटातो नथी, मात्र मोजां पलटाय छे, तेनी पेठे) जेम बाळ

अर्थः—आत्मा वस्तुपणे नित्य छे. समये समये ज्ञानादि परिणामना पलटवाथी तेना पर्यायनुं पलटवापणुं छे. (कंइ समुद्र पलटातो नथी, मात्र मोजां पलटाय छे, तेनी पेठे) जेम वाळ, युवान अने वृद्ध ए त्रण अवस्था छे, ते आत्माने विभावथी पर्याय छे, अने वाळ-अवस्था वर्त्ततां आत्मा वाळक जणातो, ते बाळ-अवस्था छोडी ज्यारे युवावस्था ग्रहण करी त्यारे युवान जणायो, अने युवावस्था तजी वृद्धावस्था ग्रहण करी त्यारे वृद्ध जणायो; ए त्रणे अवस्थानो भेद थयो ते पर्यायभेद छे, पण ते त्रणे अवस्थामां आत्मद्रव्यनो भेद थयो नहीं, अर्थात् अवस्थाओ वदलाइ पण आत्मा बदलायो नहीं; आत्मा ए त्रणे अवस्थाने जाणे छे, अने ते त्रणे अवस्थानी तेने ज स्मृति छे. त्रणे अवस्थामां आत्मा एक होय तो एम वने, पण जो आत्मा क्षणे क्षणे वदलाता होय तो तेवो अनुभव बने ज नहीं. ॥ ६८ ॥

अथवा ज्ञान क्षणिकनुं, जे जाणी वदनार;
वदनारो ते क्षणिक नहीं, कर अनुभव निर्धार. ॥ ६९ ॥

अर्थः—अमुक पदार्थ क्षणिक छे, एम जाणे छे, अने क्षणिकपणुं कहे छे, ते कहेनार अर्थात् जाणनार क्षणिक होय नहीं, केमके प्रथम क्षणे अनुभव थयो तेने वीजे क्षणे ते अनुभव कही शकाय; ते वीजे क्षणे पोते न होय तो क्यांथी रहे? माटे ए अनुभवथी पण आत्माना अक्षणिकपणानो निश्चय कर. ॥ ६९ ॥

क्यारे कोइ वस्तुनो, केवळ होय न नाश,
चेतन पामे नाश तो, केमां भळे तपास. ॥ ७० ॥

अर्थः—कोइ पण वस्तुनो कोइ पण काळे केवळ तो नाश थाय ज नहीं; मात्र अवस्थांतर थाय, माटे चेतननो पण केवळ नाश थाय नहीं, अने अवस्थांतररूप नाश थतो होय तो ते केमां भळे, अथवा केवा प्रकारनुं अवस्थांतर पामे ते तपास; अर्थात् घटादि पदार्थ फुटी जाय छे, एटले लोको एम कहेछे के, घडो नाश पाम्यो; पण वास्तविकरीते मात्र घटपर्याय नाश पाम्यो छे, कंइ माटीपणुं नाश पाम्युं नथी, ते छिन्नभिन्न थइ जइ सूक्ष्ममां सूक्ष्म भूको थाय; तोपण परमाणुसमूहरूपे रहे, केवळ नाश न थाय; अने तेमांनुं एक परमाणु पण घटे नहीं, केमके अनुभवथी जोतां अवस्थांतर थइ शके, पण पदार्थनो समूळगो नाश थाय एम भासी ज शकवायोग्य नथी, एटले जो तुं चेतननो नाश कहे, तो केवळ नाश तो कही ज शकाय नहीं, अवस्थांतररूप नाश कहेवाय. जेम घट फुटी जइ क्रमे करी परमाणुसमूहरूपे स्थितिमां रहे, तेम चेतननो अवस्थांतररूप नाश तारे कहेवो होय तो ते शी स्थितिमां रहे, अथवा घटना परमाणुओ जेम परमाणुसमूहमां मळ्या तेम चेतन कई वस्तुमां भळवायोग्य छे ते तपास; अर्थात् ए प्रकारे तुं अनुभव करी जोइश तो कोइमां नहीं भळी शकवायोग्य

अथवा परस्वरूपे अवस्थांतर नहीं पामवायोग्य एवुं चेतन एटले आत्मा तने भास्य-मान थशे. ॥ ७० ॥

अथवा परस्वरूपे अवस्थांतर नहीं पामवायोग्य एवुं चेतन एटले आत्मा तने भास्यमान थशे. ॥ ७० ॥

॥ शंका.—शिष्य उवाच. ॥

आत्मा कर्मनो कर्त्ता नथी, एम शिष्य कहे छेः—

कर्त्ता जीव न कर्मनो, कर्म ज कर्त्ता कर्म;
अथवा सहज स्वभाव कां, कर्म जीवनो धर्म. ॥ ७१ ॥

अर्थः—जीव कर्मनो कर्त्ता नथी, कर्मना कर्त्ता कर्म छे, अथवा अनायासे ते थया करे छे; एम नहीं, ने जीव ज तेनो कर्त्ता छे एम कहो तो पछी ते जीवनो धर्म ज छे, अर्थात् धर्म होवाथी क्यारे निवृत्त न थाय. ॥ ७१ ॥

आत्मा सदा असंग ने, करे प्रकृति बंध;
अथवा ईश्वर प्रेरणा, तेथी जीव अबंध. ॥ ७२ ॥

अर्थः—अथवा एम नहीं तो आत्मा सदा असंग छे, अने सत्वादि गुणवाळी प्रकृति

कर्मनो बंध करे छे; तेम नहीं, तो जीवने कर्म करवानी प्रेरणा ईश्वर करे छे, तेथी ईश्वरेच्छारूप होवाथी जीव ते कर्मथी 'अबंध' छे. ॥ ७२ ॥

माटे मोक्ष-उपायनो, कोइ न हेतु जणाय;
कर्मतणुं कर्त्तापणुं, कां नहीं, कां नहीं जाय? ॥ ७३ ॥

अर्थः—माटे जीव कोइ रीते कर्मनो कर्त्ता थई शकतो नथी, अने मोक्षनो उपाय करवानो कोइ हेतु जणातो नथी; कां जीवने कर्मनुं कर्त्तापणुं नथी, अने जो कर्त्तापणुं होय तो कोइ रीते ते तेनो स्वभाव मटयायोग्य नथी. ॥ ७३ ॥

॥ समाधान.—सद्गुरु उवाच. ॥

कर्मनुं कर्त्तापणुं आत्माने जे प्रकारे छे, ते प्रकारे
समाधान सद्गुरु करे छेः—

होय न चेनतप्रेरणा, कोण ग्रहे तो कर्म?
जडस्वभाव नहीं प्रेरणा, जुओ विचारी धर्म. ॥ ७४ ॥

अर्थः—चेतन एटले आत्मानी प्रेरणारूप प्रवृत्ति न होय, तो कर्मने कोण ग्रहण करे? जडनो स्वभाव प्रेरणा नथी; जड अने चेतन बेयना धर्म विचारी जुओ. ॥ ७४ ॥

अर्थः—चेतन एटले आत्मानी प्रेरणारूप प्रवृत्ति न होय, तो कर्मने कोण ग्रहण करे ? जडनो स्वभाव प्रेरणा नथी; जड अने चेतन बेयना धर्म विचारी जुओ. ॥ ७४ ॥

समर्थनः—जो चेतननी प्रेरणा न होय, तो कर्म कोण ग्रहण करे ? प्रेरणापणे ग्रहण करावारूप स्वभाव जडनो छे ज नहीं, अने एम होय तो घट, पटादि पण क्रोधादि भावमां परिणमवा जोइए, अने कर्मना ग्रहणकर्त्ता होवा जोइए, पण तेवो अनुभव तो कोइने क्यारे पण थतो नथी, जेथी चेतन जीव कर्म ग्रहण करे छे, एम सिद्ध थाय छे, अने ते माटे कर्मनो कर्त्ता कहीए छीए. अर्थात् एम जीव कर्मनो कर्त्ता छे. तमे एम पूछयु के " कर्मना कर्त्ता कर्म कहेवाय के केम ? " तेनुं पण समाधान आथी तमने थशे के, जड कर्ममां प्रेरणारूप धर्म नहीं होवाथी ते ते रीते ग्रहण करवाने असमर्थ छे, अने कर्मनुं करवापणुं जीवने छे, केमके तेने विषे प्रेरणाशक्ति छे.

जो चेतन करतुं नथी, थतां नथी तो कर्म;
तेथी सहज स्वभाव नहीं, तेम ज नहीं जीवधर्म. ॥ ७५ ॥

अर्थः—आत्मा जो कर्म करतो नथी, तो थतां नथी; तेथी सहज स्वभावे एटले अनायासे थाय छे एम कहेवुं घटतुं नथी; तेम ज ते जीवनो धर्म पण नहीं, केमके स्वभावनो नाश थाय नहीं, अने आत्मा न करे तो कर्म थाय नहीं, एटले ए भाव टळी शके छे, माटे ते आत्मानो स्वाभाविक धर्म नहीं. ॥ ७५ ॥

कर्मनो बंध करे छे; तेम नहीं, तो जीवने कर्म करवानी प्रेरणा ईश्वर करे छे, तेथी ईश्वरेच्छारूप होवाथी जीव ते कर्मथी 'अबंध' छे. ॥ ७२ ॥

माटे मोक्ष-उपायनो, कोइ न हेतु जणाय;
कर्मतणुं कर्त्तापणुं, कां नहीं, कां नहीं जाय? ॥ ७३ ॥

अर्थः—माटे जीव कोइ रीते कर्मनो कर्त्ता थई शकतो नथी, अने मोक्षनो उपाय करवानो कोइ हेतु जणातो नथी; कां जीवने कर्मनुं कर्त्तापणुं नथी, अने जो कर्त्तापणुं होय तो कोइ रीते ते तेनो स्वभाव मटयायोग्य नथी. ॥ ७३ ॥

॥ समाधान.—सद्गुरु उवाच. ॥

कर्मनुं कर्त्तापणुं आत्माने जे प्रकारे छे, ते प्रकारे
समाधान सद्गुरु करे छेः—

होय न चेनतप्रेरणा, कोण ग्रहे तो कर्म?
जडस्वभाव नहीं प्रेरणा, जुओ विचारी धर्म. ॥ ७४ ॥

अर्थः—चेतन एटले आत्मानी प्रेरणारूप प्रवृत्ति न होय, तो कर्मने कोण ग्रहण करे? जडनो स्वभाव प्रेरणा नथी; जड अने चेतन

अर्थः—चेतन एटले आत्मानी प्रेरणारूप प्रवृत्ति न होय, तो कर्मने कोण ग्रहण करे ? जडनो स्वभाव प्रेरणा नथी; जड अने चेतन बेयना धर्म विचारी जुओ. ॥ ७४ ॥

समर्थनः—जो चेतननी प्रेरणा न होय, तो कर्म कोण ग्रहण करे ? प्रेरणापणे ग्रहण करावारूप स्वभाव जडनो छे ज नहीं, अने एम होय तो घट, पटादि पण क्रोधादि भावमां परिणमवा जोइए, अने कर्मना ग्रहणकर्त्ता होवा जोइए, पण तेवो अनुभव तो कोइने क्यारे पण थतो नथी, जेथी चेतन जीव कर्म ग्रहण करे छे, एम सिद्ध थाय छे, अने ते माटे कर्मनो कर्त्ता कहीए छीए. अर्थात् एम जीव कर्मनो कर्त्ता छे. तमे एम पूछयुं के " कर्मना कर्त्ता कर्म कहेवाय के केम ? " तेनुं पण समाधान आथी तमने थशे के, जड कर्ममां प्रेरणारूप धर्म नहीं होवाथी ते ते रीते ग्रहण करवाने असमर्थ छे, अने कर्मनुं करवापणुं जीवने छे, केमके तेने विषे प्रेरणाशक्ति छे.

जो चेतन करतुं नथी, थतां नथी तो कर्म;
तेथी सहज स्वभाव नहीं, तेम ज नहीं जीवधर्म. ॥ ७५ ॥

अर्थः—आत्मा जो कर्म करतो नथी, तो थतां नथी; तेथी सहज स्वभावे एटले अनायासे थाय छे एम कहेवुं घटतुं नथी; तेम ज ते जीवनो धर्म पण नहीं, केमके स्वभावनो नाश थाय नहीं, अने आत्मा न करे तो कर्म थाय नहीं, एटले ए भाव टळी शके छे, माटे ते आत्मानो स्वाभाविक धर्म नहीं. ॥ ७५ ॥

समर्थनः—हवे तमे अनायासथी ते कर्मो थतां होय, एम कह्युं ते विचारीए. अनायास एटले शुं ? आत्माए नहीं चिंतवेलुं ? अथवा आत्मानुं कंइ पण कर्त्तृत्व छतां प्रवर्त्तेलुं नहीं ? अथवा ईश्वरादि कोइ कर्म वळगाडी दे तेथी थयेलु ? अथवा प्रकृति पराणे वळगे तेथी थयेलुं ? एवा मुख्य चार विकल्पथी अनायासकर्त्तापणुं विचारवायोग्य छे. प्रथम विकल्प आत्माए नहीं चितवेलो एवो छे. जो तेम थतुं होय तो तो कर्मनुं ग्रहवापणुं रहेतुं ज नथी, अने ज्यां ग्रहवापणुं रहे नहीं त्यां, कर्मनुं होवापणु संभवतुं नथी, अने जीव तो प्रत्यक्ष चितवन करे छे, अने ग्रहणाग्रहण करे छे, एम अनुभव थाय छे. जेमां ते कोइ पण रीते प्रवर्त्ततो ज नथी, तेवा क्रोधादि भाव तेने संप्राप्त थता ज नथी, तेथी एम जणाय छे के, नहीं चितवेलां अथवा आत्माथी नही प्रवर्त्तेलां एवां कर्मोनुं ग्रहण तेने थवायोग्य नथी, एटले ए बन्ने प्रकारे अनायास कर्मनु ग्रहण सिद्ध थतुं नथी.

केवळ होत असंग जो, भासत तने न केम ?
असंग छे परमार्थथी, पण निजभाने तेम. ॥ ७६ ॥

अर्थः—केवळ जो असंग होत, अर्थात् क्यारे पण तेने कर्मनुं करवापणुं न होत, तो तने पोताने ते आत्मा प्रथमथी केम न भासत ? परमार्थथी ते आत्मा असंग छे, पण ते तो ज्यारे स्वरूपनुं भान थाय त्यारे थाय. ॥ ७६ ॥

कर्ता ईश्वर को नहीं, ईश्वर शुद्ध स्वभाव;

कर्ता ईश्वर को नहीं, ईश्वर शुद्ध स्वभाव;
अथवा प्रेरक ते गण्ये, ईश्वर दोषप्रभाव. ॥ ७७ ॥

अर्थः—जगत्नो, अथवा जीवोना कर्मनो ईश्वर कर्त्ता कोई छे नहीं, शुद्ध आत्मस्वभाव जेनो थयो छे ते ईश्वर छे, अने तेने जो प्रेरक एटले कर्मकर्त्ता गणीये तो तेने दोषनो प्रभाव थयो गणावो जोइए; माटे ईश्वरनी प्रेरणा जीवनां कर्म करवामां पण कहेवाय नहीं.॥७७॥

समर्थनः—त्रीजो प्रकार ईश्वरादि कोइ कर्म वळगाडी दे तेथी अनायास कर्मनुं ग्रहण थाय छे एम कहीए, तो ते घटतु नथी. प्रथम तो ईश्वरनुं स्वरूप निर्धारवुं घटे छे, अने ए प्रसंग पण विशेष समजवा-योग्य छे, तथापि अत्रे ईश्वर, के विष्णुआदि कर्त्तानो कोइ रीते स्वीकार करी लइए छीए, अने ते पर विचार करीए छीए, जो ईश्वरादि कर्मना वळगाडनार होय तो तो जीव नामनो वच्चे कोइ पण पदार्थ रह्यो नहीं, केमके प्रेरणादि धर्मे करीने तेवुं अस्तित्व समजातुं हतुं, ते प्रेरणादि तो ईश्वकृत ठर्या, अथवा ईश्वरना गुण ठर्या, तो पछी बाकी जीवनुं स्वरूप शुं रह्यु के तेने जीव एटले आत्मा कहीये, एटले कर्म ईश्वर प्रेरित नहीं पण आत्मानां पोतानां ज करेलां होवायोग्य छे तेम चोथो विकल्प प्रकृत्यादि पराणे वळगवाथी कर्म थतां होय ? ते विकल्प पण यथार्थ नथी, केमके प्रकृत्यादि जड छे, तेने आत्मा ग्रहण न करे तो ते शी रीते वळगवा योग्य थाय ? अथवा द्रव्यकर्मनु बीजुं नाम प्रकृति छे, एटले कर्मनुं कर्त्तापणुं कर्मने ज कहेवा बराबर थयुं. ते तो पूर्वे निषेधी देखाडयुं छे. प्रकृति नहीं, तो अत'करणादि कर्म ग्रहण करे तेथी आत्मामां कर्त्तापणु वळगे छे, एम कहीए तो ते पण एकांते सिद्ध नथी. अंत.करणादि पण चेतननी प्रेरणाविना

अंतःकरणादिरूपे प्रथम ठरे ज क्यांथी ? चेतन जे कर्मवळगणानुं मनन करवा अवलंबन ले छे, ते अंतःकरण छे, जो चेतन मनन करे नहीं, तो कंइ ते वळगणामां मनन करवानो धर्म नथी; ते तो मात्र जड छे चेतननी प्रेरणाथी चेतन तेने अवलंबीने कंइ ग्रहण करे छे; तेथी तेना विषे कर्त्तापणुं आरोपाय छे, पण मुख्यपणे ते चेतन कर्मनो कर्त्ता छे. आ स्थळे तमे वेदांतादि दृष्टिये विचारशो तो अमारां आ वाक्यो तमने भ्रांतिगत पुरुषनां कहेलां लागशे. पण हवे जे प्रकार कह्यो छे, ते समजवाथी तमने ते वाक्यनी यथातथ्यता लागशे, अने भ्रांतिगतपणुं भास्यमान नहीं थाय. जो कोई पण प्रकारे आत्मानुं कर्मनुं कर्त्तृत्वपणुं न होय, तो कोइ पण प्रकारे तेनुं भोक्तृत्त्वपणुं पण न ठरे, अने ज्यारे एम ज होय तो पछी तेना कोइ पण प्रकारनां दुःखोनो संभव पण न थाय. ज्यारे कोइ पण प्रकारनां दुःखोनो संभव आत्माने न ज थतो होय, तो पछी वेदांतादि शास्त्रो सर्व दुःखथी क्षय थवानो जे मार्ग उपदेशे छे ते शा माटे उपदेशे छे ? ' ज्यांसुधी आत्मज्ञान थाय नहीं त्यांसुधी दुःखनी आत्यंतिक निवृत्ति थाय नही, ' एम वेदांतादि कहे छे ते जो दुःख न ज होय, तो तेनी निवृत्तिनो उपाय शा माटे कहेवो जोइए ? अने कर्त्तृत्त्वपणुं न होय, तो दुःखनुं भोक्तृत्त्वपणुं क्यांथी होय ? एम विचार करवाथी कर्मनुं कर्त्तृत्व ठरे छे. हवे अत्रे एक प्रश्न थवायोग्य छे, अने तमे पण ते प्रश्न कर्युं छे के " जो कर्मनुं कर्त्तापणुं आत्माने मानीए, तो तो आत्मानो ते धर्म ठरे, अने जे जेनो धर्म होय ते क्यारे पण उच्छेद थवायोग्य नथी, अर्थात् तेनाथी केवळ भिन्न पडी शकवायोग्य नथी. जेम अग्निनी उष्णता अथवा प्रकाश तेम. " एम ज जो कर्मनुं कर्त्तापणुं आत्मानो धर्म ठरे, तो ते नाश पामे नहीं. जेथी सर्व प्रमाणांशना स्वीकार्याविना एम ठरे, पण विचारवान होय ते कोइ एक प्रमाणांश स्वीकारीने बीजा प्रमाणांशनो नाश न करे. 'ते जीवने कर्मनुं कर्त्तापणुं न होय ?' अथवा 'होय तो ते प्रतीत थवा योग्य नथी, ' ए आदि प्रश्न कर्याना उत्तरमां जीवनुं कर्मनुं कर्त्तृत्त्व जणाव्युं छे. कर्मनुं कर्त्तृत्त्व

होय तो ते टळे ज नहीं, एम कांइ सिद्धांत समजवो योग्य नथी, केमके जे जे कोइ पण वस्तु ग्रहण करी होय ते छोडी शकाय एटले त्यागी शकाय, केमके ग्रहण करेली वस्तुथी ग्रहण करनारी वस्तुनुं केवळ एकत्व केम थाय ? तेथी

होय तो ते टळे ज नहीं, एम कांइ सिद्धांत समजवो योग्य नथी, केमके जे जे कोइ पण वस्तु ग्रहण करी होय ते छोडी शकाय एटले त्यागी शकाय, केमके ग्रहण करेली वस्तुथी ग्रहण करनारी वस्तुनुं केवळ एकत्व केम थाय ? तेथी जीवे ग्रहण करेलां एवां जे द्रव्यकर्म तेनो जीव त्याग करे, तो थइ शकवा योग्य छे, केमके ते तेने सहकारी स्वभावे छे, सहज स्वभावे नथी, अने ते कर्मने में तमने अनादि भ्रम कह्यो छे, अर्थात् ते कर्मनुं कर्त्तापणुं अज्ञानथी प्रतिपादन कर्युं छे. तेथी पण ते निवृत्त थवायोग्य छे, एम साथे समजवुं घटे छे. जे जे भ्रम होय छे, ते ते वस्तुनी उलटी स्थितिनी मान्यतारूप होय छे, अने तेथी ते ते टळवायोग्य छे. जेम मृगजळमांथी जलबुद्धि कहेवानो हेतु ए छे के, अज्ञाने करीने पण जो आत्माने कर्त्तापणुं न होय, तो तो कशुं–उपदेशादि श्रवण, विचार, ज्ञान आदि–समजवानो हेतु रहेतो नथी. हवे अहीं आगळ जीवनुं परमार्थे जे कर्त्तापणु छे ते कहीए छीए:

चेतन जो निजभानमां, कर्त्ता आपस्वभाव;
वर्ते नहीं निजभानमां, कर्त्ता कर्मप्रभाव. ॥ ७८ ॥

अर्थः–आत्मा जो पोताना शुद्ध चैतन्यादि स्वभावमां वर्त्ते तो ते पोताना ते ज स्वभावनो कर्त्ता छे, अर्थात् ते ज स्वरूपमां परिणमित छे, अने ते शुद्ध चैतन्यादि स्वभावना भानमां वर्त्ततो न होय त्यारे कर्मभावनो कर्त्ता छे. ॥ ७८ ॥

समर्थनः–पोताना स्वरूपना भानमां आत्मा पोताना स्वभावनो एटले चैतन्यादि स्वभावनो ज कर्त्ता छे. अन्य कोइ पण कर्मादिनो कर्त्ता नथी, अने आत्मा ज्यारे पोताना स्वरूपना भानमां वर्त्ते नहीं त्यारे

कर्मना प्रभावनो कर्त्ता कह्यो छे. परमार्थे तो जीव अक्रिय छे. एम वेदांतादिनुं निरूपण छे, अने जिनप्रवचनमां पण सिद्ध एटले शुद्धात्मानुं अक्रियपणु छे एम निरूपण कर्युं छे, छतां अमे आत्माने शुद्धावस्थामां कर्त्ता होवाथी सक्रिय कह्यो एवो संदेह अत्रे थवायोग्य छे, ते संदेह आ प्रकारे शमाववा योग्य छे. शुद्धात्मा, परयोगनो परभावनो, अनेक विभावनो त्यां कर्त्ता नथी, माटे अक्रिय कहेवायोग्य छे. पण चैतन्यादि स्वभावनो, पण आत्मा कर्त्ता नथी, एम जो कहीए तो तो पछी तेनुं कंइ पण स्वरूप न रहे. शुद्धात्माने योगक्रिया नहीं होवाथी ते अक्रिय छे, पण स्वाभाविक चैतन्यादि स्वभावरूप क्रिया होवाथी ते सक्रिय छे चैतन्यात्मपणुं आत्माने स्वाभाविक होवाथी तेमां आत्मानुं परिणमवुं ते एकात्मपणे ज छे, अने तेथी परमार्थनयथी सक्रिय एवुं विशेषण त्यां पण आत्माने आपी शकाय नहीं. निजस्वभावमां परिणमवारूप सक्रियताथी निजस्वभावनुं कर्त्तापणुं शुद्धात्माने छे, केवळ शुद्ध स्वधर्म होवाथी एकात्मपणे परिणमे छे, तेथी अक्रिय कहेतां पण दोष नथी. जे विचारे सक्रियता अक्रियता निरूपण करी छे, ते विचारना परमार्थने ग्रहीने सक्रियता, अक्रियता कहेतां कशो दोष नथी.

॥ शंका.—शिष्य उवाच. ॥

ते कर्मनुं भोक्तापणुं जीवने नहीं होय, एम शिष्य कहे छे.

जीव कर्मकर्त्ता कहो, पण भोक्ता नहीं सोय;
शुं समजे जड कर्म के, फळपरिणामी होय ? ॥ ७९ ॥

अर्थः—जीवने कर्मनो कर्त्ता कहीए तोपण ते कर्मनो भोक्ता जीव नहीं ठरे, केमके जड एवां कर्म शुं समजे के ते फळ देवामां परिणामी थाय ? अर्थात् फळदाता थाय ? ॥ ७९ ॥

अर्थः—जीवने कर्मनो कर्त्ता कहीए तोपण ते कर्मनो भोक्ता जीव नहीं ठरे, केमके जड एवां कर्म शुं समजे के ते फळ देवामां परिणामी थाय? अर्थात् फळदाता थाय? ॥ ७९ ॥

फळदाता ईश्वर गण्ये, भोक्तापणुं सधाय;
एम कहे ईश्वरतणुं, इश्वरपणुं ज जाय. ॥ ८० ॥

अर्थः—फळदाता ईश्वर गणीये तो भोक्तापणुं साधी शकीये, अर्थात् जीवने ईश्वर कर्म भोगवावे तेथी जीव कर्मनो भोक्ता सिद्ध थाय, पण परने फळदेवा आदि प्रवृत्तिवाळो ईश्वर गणीए, तो तेनुं ईश्वरपणुं ज रहेतुं नथी, एम पण पाछो विरोध आवे छे. ॥ ८० ॥

ईश्वर सिद्ध थयाविना, जगत्नियम नहीं होय;
पछी शुभाशुभ कर्मनां, भोग्यस्थान नहीं कोय. ॥ ८१ ॥

अर्थः—तेवो फळदाता ईश्वर सिद्ध थतो नथी, एटले जगत्नो नियम पण कोइ रहे नहीं, अने शुभाशुभ कर्म भोगववानां कोइ स्थानक पण ठरे नहीं, एटले जीवने कर्मनुं भोक्तृत्व क्यां रह्युं? ॥ ८१ ॥

॥ समाधान.—सद्गुरु उवाच. ॥

जीवने पोतानां करेलां कर्मनुं भोक्तापणुं छे, एम सद्गुरु समाधान करे छेः—

भावकर्म निजकल्पना, माटे चेतनरूप;
जीववीर्यनी स्फुरणा, ग्रहण करे जडधूप. ॥ ८२ ॥

अर्थः—भावकर्म जीवने पोतानी भ्रांति छे माटे ते चेतनरूप छे, अने ते भ्रांतिने अनुयायी थई जीववीर्य स्फुरायमान थाय छे, तेथी जड एवां द्रव्यकर्मनी वर्गणा ते ग्रहण करे छे. ॥ ८२ ॥

समर्थनः—जीव पोताना स्वरूपना अज्ञानथी कर्मनो कर्त्ता छे. ते अज्ञान ते चेतनरूप छे. अर्थात् जीवनी पोतानी कल्पना छे, अने ते कल्पनाने अनुसरीने तेना वीर्यस्वभावनी स्फूर्ति थाय छे, अथवा तेनुं सामर्थ्य तदनुयायीपणे परिणमे छे, अने तेथी जडनी धूप एटले द्रव्यकर्मरूप पुद्गलनी वर्गणाने ते ग्रहण करे छे.

झेर, सुधा समजे नहीं, जीव खाय फळ थाय;
एम भा

झेर, सुधा समजे नहीं, जीव खाय फळ थाय;
एम शुभाशुभ कर्मनुं, भोक्तापणुं जणाय. ॥ ८३ ॥

अर्थः—झेर अने अमृत पोते जाणतां नथी के अमारे आ जीवने आ फळ आपवुं छे, तोपण जे (देहधारी) जीव खाय छे, तेने ते फळ थाय छे; एम शुभाशुभ कर्म आ जीवने आ फळ आपवुं छे एम जाणतां नथी, तोपण ग्रहण करनार जीव झेर, अमृतना परिणामनी रीते फळ पामे छे. ॥ ८३ ॥

समर्थनः—झेर अने अमृत पोते एम समजतां नथी के, अमने खानारने मृत्यु, दीर्घायुषता थाय छे, पण स्वभावे तेने ग्रहण करनारप्रत्ये जेम तेनुं परिणमवुं थाय छे, तेम जीवमां शुभाशुभ कर्म पण परिणमे छे, अने फळसन्मुख थाय छे, एम जीवने कर्मनुं भोक्तापणुं समजाय छे.

एक रांक ने एक नृप, ए आदि जे भेद;
कारणविना न कार्य ते, ए ज शुभाशुभ वेद्य. ॥ ८४ ॥

अर्थः—एक रांक छे, अने एक राजा छे, ए आदि शब्दथी नीचपणुं, ऊंचपणुं, कुरूपपणुं, सुरूपपणुं एम घणुं विचित्रपणुं छे; अने एवो जे भेद रहे छे—ते सर्वने समानता नथी—ते ज शुभाशुभ कर्मनुं भोक्तापणुं छे एम सिद्ध करे छे, केमके कारणविना कार्यनी उत्पत्ति थती नथी. ८४॥

समर्थनः—ते शुभाशुभ कर्मनुं फळ न थतुं होय, तो एक रांक अने एक राजा ए आदि जे भेद छे, ते न थवा जोइए, केमके जीवपणुं समान छे, तथा मनुष्यपणुं समान छे, तो सर्वने सुख अथवा दुःख पण समान जोइए, जेने बदले आवुं विचित्रपणुं जणाय छे, ते ज शुभाशुभ कर्मथी उत्पन्न थयेलो भेद छे, केमके कारणविना कार्यनी उत्पत्ति थती नथी. एम शुभ अने अशुभ कर्म भोगवाय छे.

समर्थनः—झेर झेरपणे परिणमे छे, अने अमृत अमृतपणे परिणमे छे, तेम अशुभ कर्म अशुभपणे अने शुभ कर्म शुभपणे परिणमे छे, माटे जीव जेवा जेवा अध्यवसायथी कर्मने ग्रहण करे छे, तेवा तेवा विपाकरूपे कर्म परिणमे छे, अने जेम झेर अने अमृत परिणमी रह्ये निःसत्व थाय छे, तेम भोगथी ते कर्म दूर थाय छे.

फळदाता ईश्वरतणी, एमां नथी जरूर;
कर्म स्वभावे परिणमे, थाय भोगथी दूर. ॥ ८५ ॥

अर्थः—फळदाता ईश्वरनी एमां कंइ जरूर नथी. झेर अने अमृतनी रीते शुभाशुभ कर्म स्वभावे परिणमे छे; अने निःसत्व थयेथी झेर अने अमृत फळ देतां जेम निवृत्त थाय छे, तेम शुभाशुश कर्मने भोगववाथी ते निःसत्व थये निवृत्त थाय छे. ॥ ८५ ॥

समर्थनः—जो कर्मनां फळने ईश्वर आपे छे एम गणीए, तो त्यां ईश्वरनुं ईश्वरपणुं ज रहेतुं नथी, केमके परने फळ देवा आदि प्रपंचमां प्रवर्त्ततां ईश्वरने देहादि अनेक प्रकारनो संग थवो संभवे छे, अने तेथी यथार्थ शुद्धतानो भंग थाय छे. मुक्त जीव जेम निष्क्रिय एटले परभावादिनो कर्त्ता नथी, जो परभावादिनो कर्त्ता थाय तो तो संसारनी प्राप्ति थाय छे, तेम ज ईश्वर पण परने फळदेवाआदिरूप क्रियामां प्रवर्त्ते तो

तेने पण परभावादिना कर्त्तापणानो प्रसंग आवे छे, अने मुक्त जीव करतां तेनुं न्यूनत्व ठरे छे, तेथी तो तेनुं ईश्वरपणुं ज उच्छेदवा जेवी स्थिति थाय छे. वळी जीव अने ईश्वरनो स्वभाव भेद मानतां पण अनेक दोष संभवे छे. वमेने जो [illegible]

तेने पण परभावादिना कर्त्तापणानो प्रसंग आवे छे, अने मुक्त जीव करतां तेनुं न्यूनत्व ठरे छे, तेथी तो तेनु ईश्वरपणु ज उच्छेदवा जेवी स्थिति थाय छे. वळी जीव अने ईश्वरनो स्वभाव भेद मानतां पण अनेक दोष संभवे छे. बन्नेने जो चैतन्यस्वभाव मानीए, तो बन्ने समान धर्मना कर्त्ता थया; तेमां ईश्वर जगतादि रचे, अथवा कर्मनु फळ आपवारूप कार्य करे, अने मुक्त गणाय, अने जीव एक मात्र देहादि सृष्टि रचे, अने पोतानां कर्मोनुं फळ पामवा माटे ईश्वराश्रय ग्रहण करे, तेम ज बंधमां गणाय, ए यथार्थ वात देखाती नथी. एवी विषमता केम संभवित थाय ? वळी जीव करता ईश्वरनुं सामर्थ्य विशेष मानीए तोपण विरोध आवे छे. ईश्वर शुद्ध चैतन्यस्वरूप गणीए तो शुद्ध चैतन्य एवा मुक्त जीवमां, अने तेमां, भेद न पडवो जोइए, अने ईश्वरथी कर्मनां फळ आपवादि कार्य न थवां जोइए, अथवा मुक्त जीवथी पण ते कार्य थवु जोइए, अने ईश्वरने जो अशुद्ध चैतन्यस्वरूप गणीए ते तो संसारी जीवो जेवी तेनी स्थिति ठरे, त्यां पछी सर्वज्ञादि गुणनो संभव कयाथी थाय ? अथवा देहधारी–सर्वज्ञनी पेठे तेने ' देहधारी सर्वज्ञ ईश्वर ' मानीए तोपण सर्व कर्मफळदातृत्त्वरूप ' विशेष स्वभाव ' ईश्वरमां कया गुणने लीधे मानवायोग्य थाय ? अने देह तो नाश पामवायोग्य छे तेथी ईश्वरनो पण देह नाश पामे, अने ते मुक्त थये कर्मफळदातृत्त्व न रहे, ए आदि अनेक प्रकारथी ईश्वरने कर्मफळदातृत्त्व कहेतां दोष आवे छे, अने ईश्वरने तेवे स्वरूपे मानतां तेनुं ईश्वरपणुं उत्थापवासमान थाय छे.

ते ते भोग्य विशेषनां, स्थानक द्रव्य स्वभाव;
गहन वात छे शिष्य आ, कही संक्षेपे साव. ॥ ८६ ॥

अर्थः—उत्कृष्ट शुभ अध्यवसाय ते उत्कृष्ट शुभ गति छे, अने उत्कृष्ट अशुभ अध्यवसाय ते उत्कृष्ट अशुभ गति छे, शुभाशुभ अध्यवसाय मिश्र गति छे, अने ते जीवपरिणाम ते ज मुख्यपणे तो गति छे; तथापि उत्कृष्ट शुभ द्रव्यनुं ऊर्ध्वगमन, उत्कृष्ट अशुभ द्रव्यनुं अधोगमन, शुभाशुभनी मध्यस्थिति; एम द्रव्यनो विशेष स्वभाव छे; अने ते आदि हेतुथी ते ते भोग्यस्थानक होवायोग्य छे. हे शिष्य! जड चेतनना स्वभाव संयोगादि सूक्ष्म स्वरूपनो अत्रे घणो विचार समाय छे, माटे आ वात गहन छे, तोपण तेने साव संक्षेपमां कही छे. ॥८६॥

समर्थनः—तेम ज, " ईश्वर जो कर्मफळदाता न होय, अथवा जगत्कर्त्ता न गणीए, तो कर्म भोगववानां विशेष स्थानको एटले नरकादि गति आदि स्थान क्यांथी होय, केमके तेमां तो ईश्वरनां कर्तृत्त्वनी जरुर छे ? एवी आशंका पण करवायोग्य नथी, केमके मुख्यपणे तो उत्कृष्ट शुभ अध्यवसाय ते उत्कृष्ट देवलोक छे, अने उत्कृष्ट अशुभ अध्यवसाय ते उत्कृष्ट नरक छे, शुभाशुभ अध्यवसाय ते मनुष्य तिर्यंचादि छे, अने स्थानविशेष एटले ऊर्ध्वलोके देवगति ए आदि भेद छे. जीवसमूहनां—कर्मद्रव्यनां पण—ते परिणामविशेष छे, एटले ते ते गतिओ जीवना कर्मविशेष परिणामादि संभवे छे.

आ वात घणी गहन छे, केमके अचिंत्य एवुं जीववीर्य, अचिंत्य एवुं पुद्गलसामर्थ्य एना संयोगविशेषथी लोक परिणमे छे, तेनो विचार करवा माटे घणो विस्तार कहेवो जोइए, पण अत्र तो मुख्य करीने आत्मा कर्मनो भोक्ता छे एटलो लक्ष करावववानो होवाथी साव संक्षेपे आ प्रसंग कह्यो छे.

॥ शंका.—शिष्य उवाच. ॥

॥ शंका.—शिष्य उवाच. ॥

जीवनो ते कर्मथी मोक्ष नथी, एम शिष्य कहेछेः—

कर्त्ता, भोक्ता जीव हो, पण तेनो नहीं मोक्ष;
वीत्यो काळ अनंत पण, वर्त्तमान छे दोष. ॥ ८७ ॥

अर्थः—कर्त्ता, भोक्ता जीव हो पण तेथी तेनो मोक्ष थवायोग्य नथी, केमके अनंतकाळ थयो तोपण कर्म करवारूपी दोष हजु तेने विषे वर्त्तमानज छे. ॥ ८७ ॥

शुभ करे फळ भोगवे, देवादि गतिमांय;
अशुभ करे नरकादि फळ, कर्मरहित न क्यांय. ॥ ८८ ॥

अर्थः—शुभ कर्म करे तो तेथी देवादि गतिमां तेनुं शुभ फल भोगवे, अने अशुभ कर्म करे तो नरकादि गतिने विषे तेनुं अशुभ फळ भोगवे; पण जीव कर्मरहित कोइ स्थळे होय नहीं. ॥ ८८ ॥

॥ समाधान.–सद्गुरु उवाच. ॥

ते कर्मथी जीवनो मोक्ष थई शके छे, एम समाधान करे छे.

जेम शुभाशुभ कर्मपद, जाण्यां सफळ प्रमाण;
तेम निवृत्तिसफळता, माटे मोक्ष सुजाण. ॥ ८९ ॥

अर्थः–जेम शुभाशुभ कर्मपद ते जीवना करवाथी तें थतां जाण्यां, अने तेथी तेनुं भोक्तापणुं जाण्युं, तेम नहीं करवाथी अथवा ते कर्मनिवृत्ति करवाथी ते निवृत्ति पण थवायोग्य छे; माटे ते निवृत्तिनुं पण सफळपणुं छे; अर्थात् जेम ते शुभाशुभ कर्म अफळ जतां नथी, तेम तेनी निवृत्ति पण अफळ जवायोग्य नथी; माटे ते निवृत्तिरूप मोक्ष छे एम हे विचक्षण ! तुं विचार. ॥ ८९ ॥

वित्यो काळ अनंत ते, कर्म शुभाशुभ भाव;
तेह शुभाशुभ छेदतां, उपजे मोक्षस्वभाव. ॥ ९० ॥

अर्थः–कर्मसहित अनंतकाळ वीत्यो ते ते शुभाशुभ कर्मप्रत्येनी जीवनी आसक्तिने लीधे वीत्यो, पण तेना पर उदासीन थवाथी ते कर्मफळ छेदाय, अने तेथी मोक्षस्वभाव प्रगट थाय. ॥ ९० ॥

देहादि संयोगनो, आत्यंतिक वियोग;

देहादि संयोगनो, आत्यंतिक वियोग;
सिद्ध मोक्ष शाश्वतपदे, निज अनंत सुखभोग. ॥ ९१ ॥

अर्थः—देहादि संयोगनो अनुक्रमे वियोग तो थया करे छे, पण ते पाछो ग्रहण न थाय ते रीते वियोग करवामां आवे, तो सिद्धस्वरूप मोक्षस्वभाव प्रगटे, अने शाश्वतपदे अनंत आत्मानंद भोगवाय. ॥ ९१ ॥

॥ शंका.—शिष्य उवाच. ॥

मोक्षनो उपाय नथी, एम शिष्य कहे छेः—

होय कदापि मोक्षपद, नहीं अविरोध उपाय;
कर्मो काळ अनंतनां, शाथी छेद्यां जाय ? ॥ ९२ ॥

अर्थः—मोक्षपद कदापि होय तोपण ते प्राप्त थवानो कोई अविरोध एटले यथातथ्य प्रतीत थाय एवो उपाय जणातो नथी, केमके अनंतकाळनां कर्मो छे, ते आवा अल्पायुष्वाळा मनुष्यदेहथी केम छेद्यां जाय ? ॥ ९२ ॥

॥ समाधान.—सद्गुरु उवाच. ॥

ते कर्मथी जीवनो मोक्ष थई शके छे, एम समाधान करे छे.

जेम शुभाशुभ कर्मपद, जाण्यां सफळ प्रमाण;
तेम निवृत्तिसफळता, माटे मोक्ष सुजाण. ॥ ८९ ॥

अर्थः—जेम शुभाशुभ कर्मपद ते जीवना करवाथी तें थतां जाण्यां, अने तेथी तेनुं भोक्तापणुं जाण्युं, तेम नहीं करवाथी अथवा ते कर्मनिवृत्ति करवाथी ते निवृत्ति पण थवायोग्य छे; माटे ते निवृत्तिनुं पण सफळपणुं छे; अर्थात् जेम ते शुभाशुभ कर्म अफळ जतां नथी, तेम तेनी निवृत्ति पण अफळ जवायोग्य नथी; माटे ते निवृत्तिरूप मोक्ष छे एम हे विचक्षण ! तुं विचार. ॥ ८९ ॥

वित्यो काळ अनंत ते, कर्म शुभाशुभ भाव;
तेह शुभाशुभ छेदतां, उपजे मोक्षस्वभाव. ॥ ९० ॥

अर्थः—कर्मसहित अनंतकाळ वीत्यो ते ते शुभाशुभ कर्मप्रत्येनी जीवनी आसक्तिने लीधे वीत्यो, पण तेना पर उदासीन थवाथी ते कर्मफळ छेदाय, अने तेथी मोक्षस्वभाव प्रगट थाय. ॥ ९० ॥

देहादि संयोगनो, आत्यंतिक वियोग;
सि ... ते ...

देहादि संयोगनो, आत्यंतिक वियोग;
सिद्ध मोक्ष शाश्वतपदे, निज अनंत सुखभोग. ॥ ९१ ॥

अर्थः—देहादि संयोगनो अनुक्रमे वियोग तो थया करे छे, पण ते पाछो ग्रहण न थाय ते रीते वियोग करवामां आवे, तो सिद्धस्वरूप मोक्षस्वभाव प्रगटे, अने शाश्वतपदे अनंत आत्मानंद भोगवाय. ॥ ९१ ॥

॥ शंका.—शिष्य उवाच. ॥

मोक्षनो उपाय नथी, एम शिष्य कहे छेः—

होय कदापि मोक्षपद, नहीं अविरोध उपाय;
कर्मो काळ अनंतनां, शाथी छेद्यां जाय ? ॥ ९२ ॥

अर्थः—मोक्षपद कदापि होय तोपण ते प्राप्त थवानो कोई अविरोध एटले यथातथ्य प्रतीत थाय एवो उपाय जणातो नथी, केमके अनंतकाळनां कर्मो छे, ते आवा अल्पायुष्वाळा मनुष्यदेहथी केम छेद्यां जाय ? ॥ ९२ ॥

अथवा मत दर्शन घणां, कहे उपाय अनेक;
तेमां मत साचो कयो ? बने न एह विवेक. ॥ ९३ ॥

अर्थः—अथवा कदापि मनुष्यदेहना अल्पायुष् वगेरेनी शंका छोडी दइए, तोपण मत अने दर्शन घणां छे, अने ते मोक्षना अनेक उपायो कहे छे, अर्थात् कोइ कंइ कहे छे, अने कोइ कंइ कहे छे तेमां कयो मत साचो ए विवेक बनी शके एवो नथी. ॥ ९३ ॥

कइ जातिमां मोक्ष छे, कया वेषमा मोक्ष;
एनो निश्चय ना बने, घणां भेद ए दोष. ॥ ९४ ॥

अर्थः—ब्राह्मणादि कई जातिमा मोक्ष छे, अथवा कया वेषमां मोक्ष छे, एनो निश्चय पण न बनी शके एवो छे, केमके तेवा घणा भेदो छे, अने ए दोषे पण मोक्षनो उपाय प्राप्त थवायोग्य देखातो नथी. ॥ ९४ ॥

तेथी एम जणाय छे, मळे न मोक्ष-उपाय;
जीवादि जाण्या तणो, शो उपकारज थाय ? ॥ ९५ ॥

अर्थः—तेथी एम जणाय छे के मोक्षनो उपाय प्राप्त थई शके एवुं नथी, माटे जीवादिनुं स्वरूप जाणवाथी पण शुं उपकार थाय ? अर्थात् जे पदने अर्थे जाणवा जोइए ते पदनो उपाय प्राप्त थवो अशक्य देखाय छे. ॥ ९५ ॥

स्वरूप जाणवाथी पण शुं उपकार थाय ? अर्थात् जे पदने अर्थे जाणवा जोइए ते पदनो उपाय प्राप्त थवो अशक्य देखाय छे. ॥ ९५ ॥

पांचे उत्तरथी थयुं, समाधान सर्वांग;
समजुं मोक्ष-उपाय तो, उदय उदय सद्भाग्य. ॥ ९६ ॥

अर्थः—आपे पांचे उत्तर कह्या तेथी सर्वांग एटले बधी रीते मारी शंकानुं समाधान थयुं छे; पण जो मोक्षनो उपाय समजुं तो सद्भाग्यनो उदय—उदय—थाय. अत्र ' उदय ' 'उदय' बेवार शब्द छे ते पांच उत्तरना समाधानथी थयेली मोक्षपदनी जिज्ञासानुं तीव्रपणुं दर्शावे छे. ॥ ९६ ॥

॥ समाधान.—सद्गुरु उवाच. ॥

मोक्षनो उपाय छे, एम समाधान करे छेः—

पांचे उत्तरनी थई, आत्मा विषे प्रतीत;
थाशे मोक्षोपायनी, सहज प्रतीत ए रीत. ॥ ९७ ॥

अर्थः—पांचे उत्तरनी तारा आत्माने विषे प्रतीति थई छे, तो मोक्षना उपायनी पण ए ज

रीते तने सहजमां प्रतीति थशे. अत्रे 'थशे' अने 'सहज' ए बे शब्द सद्गुरुए कह्या छे ते जेने पांच पदनी शंका निवृत्त थई छे तेने मोक्षोपाय समजावो कंइ कठण ज नथी एम दर्शाववा, तथा शिष्यनुं विशेष जिज्ञासुपणुं जाणी अवश्य तेने मोक्षोपाय परिणमशे एम भासवाथी (ते वचन) कह्यां छे; एम सद्गुरुना वचननो आशय छे. ॥ ९७ ॥

कर्मभाव अज्ञान छे, मोक्षभाव निजवास;
अंधकार अज्ञान सम, नाशे ज्ञानप्रकाश. ॥ ९८ ॥

अर्थः–कर्मभाव छे ते जीवनुं अज्ञान छे, अने मोक्षभाव छे ते जीवना पोताना स्वरूपने विषे स्थिति थवी ते छे. अज्ञाननो स्वभाव अंधकार जेवो छे तेथी जेम प्रकाश थतां घणा काळनो अंधकार छतां नाश पामे छे, तेम ज्ञानप्रकाश थतां अज्ञान पण नाश पामे छे. ॥९८॥

जे जे कारण बंधनां, तेह बंधनो पंथ;
ते कारण छेदक दशा, मोक्षपंथ भवअंत. ॥ ९९ ॥

अर्थः–जे जे कारणो कर्मबंधनां छे, ते ते कर्मबंधनो मार्ग छे; अने ते ते कारणोने छेदे एवी जे दशा छे ते मोक्षनो मार्ग छे; भवनो अंत छे. ॥ ९९ ॥

राग, द्वेष, अज्ञान ए, मुख्य कर्मनी ग्रंथ;
थाय नित्र [illegible] थी [illegible]

राग, द्वेष, अज्ञान ए, मुख्य कर्मनी ग्रंथ;
थाय निवृत्ति जेहथी, ते ज मोक्षनो पंथ. ॥ १०० ॥

अर्थः–राग, द्वेष अने अज्ञान एनुं एकत्व ए कर्मनी मुख्य गांठ छे; अर्थात् ए विना कर्मनो बंध न थाय; तेनी जेथी निवृत्ति थाय ते ज मोक्षनो मार्ग छे. ॥ १०० ॥

आत्मा सत् चैतन्यमय, सर्वाभासरहीत;
जेथी केवळ पामिये, मोक्षपंथ ते रीत. ॥ १०१ ॥

अर्थः–'सत्' एटले 'अविनाशी' अने 'चैतन्यमय' एटले 'सर्वभावने प्रकाशवारूप स्वभावमय '–'अन्य सर्व विभाव अने देहादि संयोगना आभासथी रहित एवो–' 'केवळ' एटले 'शुद्ध आत्मा' पामिये तेम प्रवर्त्ताय ते मोक्षमार्ग छे. ॥ १०१ ॥

कर्म अनंत प्रकारनां, तेमां मुख्ये आठ,
तेमां मुख्ये मोहिनिय, हणाय ते कहुं पाठ. ॥ १०२ ॥

अर्थः–कर्म अनंत प्रकारनां छे; पण तेना मुख्य ज्ञानावरणीयादि आठ प्रकार थाय छे. तेमां पण मुख्य मोहनीयकर्म छे. ते मोहनीयकर्म हणाय तेनो पाठ कहुं छुं. ॥ १०२ ॥

कर्म मोहिनिय भेद बे, दर्शन, चारित्र नाम;
हणे बोध वीतरागता, अचूक उपाय आम. ॥१०३॥

अर्थः—ते मोहनीय कर्म बे भेदे छेः एक 'दर्शनमोहनीय' एटले परमार्थने विषे अपरमार्थबुद्धि अने अपरमार्थने विषे परमार्थबुद्धिरूप; बीजी 'चारित्रमोहनीय,' तथारूप परमार्थने परमार्थ जाणीने आत्मस्वभावमां स्थिरता, ते स्थिरताने रोधक एवा पूर्व संस्काररूप कषाय अने नोकषाय ते चारित्रमोहनीय. दर्शनमोहनीयने आत्मबोध, अने चारित्रमोहनीयने वीतरागपणुं नाश करे छे. आम तेना अचूक उपाय छे, केमके मिथ्याबोध ते दर्शनमोहनीय छे; तेनो प्रतिपक्ष सत्यात्मबोध छे; अने चारित्रमोहनीय रागादिक परिणामरूप छे, तेनो प्रतिपक्ष वीतरागभाव छे; एटले अंधकार जेम प्रकाश थवाथी नाश पामे छे—ते तेनो अचूक उपाय छे—तेम बोध अने वीतरागता दर्शनमोहनीय अने चारित्रमोहनीयरूप अंधकार टाळवामां प्रकाशस्वरूप छे; माटे ते तेनो अचूक उपाय छे. ॥ १०३ ॥

कर्मबंध क्रोधादिथी, हणे क्षमादिक तेह;
प्रत्यक्ष अनुभव सर्वने, एमां शो संदेह ? ॥१०४॥

अर्थः—क्रोधादिक भावथी कर्मबंध थाय छे, अने क्षमादिक भावथी ते हणाय छे; अर्थात्

क्षमा राखवाथी क्रोध रोकी शकाय छे, सरळताथी माया रोकी शकाय छे, संतोषथी लोभ रोकी शकाय छे; एम रति अरति आदिना प्रतिपक्षथी ते ते दोषो रोकी शकाय छे; ते ज कर्मबंधनो

क्षमा राखवाथी क्रोध रोकी शकाय छे, सरळताथी माया रोकी शकाय छे, संतोषथी लोभ रोकी शकाय छे; एम रति अरति आदिना प्रतिपक्षथी ते ते दोषो रोकी शकाय छे; ते ज कर्मबंधनो निरोध छे; अने ते ज तेनी निवृत्ति छे; वळी सर्वने आ वातनो प्रत्यक्ष अनुभव छे; अथवा सर्वने प्रत्यक्ष अनुभव थइ शके एवुं छे. क्रोधादि रोक्यां रोकाय छे, अने जे कर्मबंधने रोके छे, ते अकर्मदशानो मार्ग छे. ए मार्ग परलोके नहीं पण अत्रे अनुभवमां आवे छे, तो एमां संदेह शो करवो? ॥ १०४ ॥

छोडी मत दर्शन तणो, आग्रह तेम विकल्प;
कह्यो मार्ग आ साधशे, जन्म तेहना अल्प. ॥ १०५ ॥

अर्थः—आ मारो मत छे, माटे मारे वळगी ज रहेवुं, अथवा आ मारूं दर्शन छे, माटे गमे तेम मारे ते सिद्ध करवुं एवो आग्रह अथवा एवा विकल्पने छोडीने आ जे मार्ग कह्यो छे, ते साधशे तेना अल्प जन्म जाणवा. अहीं 'जन्म' शब्द बहुवचनमां वापर्यो छे, ते एटलुं ज दर्शाववाने के क्वचित् ते साधन अधुरां रह्यां तेथी, अथवा जघन्य के मध्यम परिणामनी धाराथी आराधन थयां होय तेथी, सर्व कर्म क्षय थइ न शकवाथी बीजो जन्मं थवानो संभव छे; पण ते बहु नहीं, बहु ज अल्प. "समकित आव्या पछी जो वमे नहीं, तो

घणामां घणा पंदर भव थाय, एम जिने कह्युं छे;" अने "जे उत्कृष्टपणे आराधे तेनो ते भवे पण मोक्ष थाय;" अत्रे ते वातनो विरोध नथी. ॥ १०५ ॥

षट्पदना षट्प्रश्न तें, पूछ्या करी विचार;
ते पदनी सर्वांगता, मोक्षमार्ग निरधार. ॥ १०६ ॥

अर्थः—हे शिष्य ! तें छ पदना छ प्रश्नो विचार करीने पूछ्या छे, अने ते पदनो सर्वांगतामां मोक्षमार्ग छे, एम निश्चय कर. अर्थात् एमानुं कोइ पण एकांते, के अविचारथी उत्थापतां मोक्षमार्ग सिद्ध थतो नथी. ॥ १०६ ॥

जाति वेषनो भेद नहीं, कह्यो मार्ग जो होय;
साधे ते मुक्ति लहे, एमां भेद न कोय. ॥ १०७ ॥

अर्थः—जे मोक्षनो मार्ग कह्यो ते होय तो गमे ते जाति के वेषथी मोक्ष थाय; एमां कंइ भेद नथी. जे साधे ते मुक्तिपद पामे; अने ते मोक्षमां पण बीजा कशा प्रकारनो ऊंच नीचत्वादि भेद नथी; अथवा आ वचन कह्यां तेमां बीजो कंइ भेद एटले फेर नथी. ॥ १०७ ॥

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्षअभिलाष;
भवे खेद उ . . . या, ते क

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्षअभिलाष;
भवे खेद अंतर् दया, ते कहिये जिज्ञास. ॥ १०८ ॥

अर्थः—क्रोधादि कषाय जेना पातळा पड्या छे, मात्र आत्माने विषे मोक्ष थवा शिवाय बीजी कोइ इच्छा नथी, अने संसारना भोगप्रत्ये उदासीनता वर्त्ते छे, तेम ज प्राणीपर अंतर्थी दया वर्त्ते छे, ते जीवने मोक्षमार्गनो जिज्ञासु कहीए, अर्थात् ते मार्ग पामवायोग्य कहीए. ॥ १०८ ॥

ते जिज्ञासु जीवने, थाय सद्गुरुबोध;
तो पामे समकितने, वर्त्ते अंतर्शोध. ॥ १०९ ॥

अर्थः—ते जिज्ञासु जीवने जो सद्गुरुनो उपदेश प्राप्त थाय तो ते समकितने पामे, अने अंतर्नी शोधमां वर्त्ते. ॥ १०९ ॥

मत दर्शन आग्रह तजी, वर्त्ते सद्गुरुलक्ष;
लहे शुद्ध समकित ते, जेमां भेद न पक्ष. ॥ ११० ॥

अर्थः—मत अने दर्शननो आग्रह छोडी दई जे सद्गुरुने लक्षे वर्त्ते ते शुद्ध समकितने पामे, के जेमां भेद तथा पक्ष नथी. ॥ ११० ॥

वर्त्ते निजस्वभावनो, अनुभव लक्ष प्रतीत;
वृत्ति वहे निजभावमां, परमार्थे समकित. ॥ १११ ॥

अर्थः—आत्मस्वभावनो ज्यां अनुभव, लक्ष, अने प्रतीत वर्त्ते छे, तथा वृत्ति आत्माना स्वभावमा वहे छे, त्यां परमार्थे समकित छे. ॥ १११ ॥

वर्धमान समकित थई, टाळे मिथ्याभास;
उदय थाय चारित्रनो, वीतरागपद वास. ॥ ११२ ॥

अर्थः—ते समकित वधती जती धाराथी हास्य शोकादि जे कंइ आत्माने विषे मिथ्याभास भास्या छे तेने टाळे, अने स्वभाव समाधिरूप चारित्रनो उदय थाय, जेथी सर्व रागद्वेषना क्षयरूप वीतरागपदमां स्थिति थाय. ॥ ११२ ॥

केवळ निजस्वभावनुं, अखंड वर्त्ते ज्ञान;
कहिये केवळज्ञान ते, देह छतां निर्वाण. ॥ ११३ ॥

अर्थः—सर्व आभासरहित आत्मस्वभावनुं ज्यां अखंड एटले क्यारे पण खंडित न थाय, मंद न थाय, नाश न पामे एवुं ज्ञान वर्त्ते तेने केवळज्ञान कहीए छीए. जे केवळज्ञान पाम्याथी उत्कृष्ट जीवन्मुक्तदशारूप निर्वाण, [illegible]

अर्थः—सर्व आभासरहित आत्मस्वभावनुं ज्यां अखंड एटले क्यारे पण खंडित न थाय, मंद न थाय, नाश न पामे एवुं ज्ञान वर्त्ते तेने केवळज्ञान कहीए छीए. जे केवळज्ञान पाम्याथी उत्कृष्ट जीवन्मुक्तदशारूप निर्वाण, देह छतां ज अत्रे अनुभवाय छे. ॥ ११३ ॥

कोटि वर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत तथां समाय;
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दूर थाय. ॥ ११४ ॥

अर्थः—करोडो वर्षनुं स्वप्न होय तोपण जाग्रत थतां तरत ते समाय छे. तेम अनादिनो विभाव छे ते आत्मज्ञान थतां दूर थाय छे. ॥ ११४ ॥

छूटे देहाध्यास तो, नहीं कर्त्ता तुं कर्म;
नहीं भोक्ता तुं तेहनो, ए ज धर्मनो मर्म. ॥ ११५ ॥

अर्थः—हे शिष्य ! देहमां जे आत्मता मनाई छे, अने तेने लीधे स्त्री पुत्रादि सर्वमां अहं-ममत्वपणुं वर्त्ते छे, ते आत्मता जो आत्मामां ज मनाय, अने ते देहाध्यास एटले देहमां आत्मबुद्धि तथा आत्मामां देहबुद्धि छे ते छूटे, तो तुं कर्मनो कर्त्ता पण नथी, अने भोक्ता पण नथी; ए ज धर्मनो मर्म छे. ॥ ११५ ॥

एज धर्मथी मोक्ष छे, तुं छो मोक्षस्वरूप;
अनंत दर्शन ज्ञान तुं, अव्याबाध स्वरूप. ॥ ११६ ॥

अर्थः—एज धर्मथी मोक्ष छे, अने तुंज मोक्षस्वरूप छो, अर्थात् शुद्ध आत्मपद एज मोक्ष छे. तुं अनंत ज्ञान दर्शन तथा सुखस्वरूप छो. ॥ ११६ ॥

शुद्ध, बुद्ध, चैतन्यघन, स्वयंज्योति सुखधाम;
बीजुं कहिये केटलुं ? कर विचार तो पाम. ॥ ११७ ॥

अर्थः—तुं देहादिक सर्व पदार्थथी जूदो छे, कोइमां आत्मद्रव्य भळतुं नथी, कोइ तेमा भळतुं नथी, द्रव्ये द्रव्य परमार्थथी सदाय भिन्न छे; माटे तुं शुद्ध छो, बोधस्वरूप छो, चैतन्यप्रदेशात्मक छो, स्वयंज्योति एटले कोइ पण तने प्रकाशतुं नथी, स्वभावे ज तुं प्रकाशस्वरूप छो; अने अव्याबाध सुखनुं धाम छो. बीजुं केटलुं कहिये ? अथवा घणुं शुं कहेवुं ? टूंकामां एटलुं ज कहीए छीए, जो विचार कर तो ते पदने पामीश. ॥ ११७ ॥

निश्चय सर्वे ज्ञानीनो, आवी अत्र समाय;
धरी मौनता एम कही, सहज समाधिमांय. ॥ ११८ ॥

अर्थः—सर्वे ज्ञानीओनो निश्चय अत्रे आवीने समाय छे; एम कहीने सद्गुरु मौनता धरीने सहज समाधिमां स्थित थया, अर्थात् वाणीयोगनी अप्रवृत्ति करी. ॥ ११८ ॥

अर्थः—सर्वे ज्ञानीओनो निश्चय अत्रे आवीने समाय छे; एम कहीने सद्गुरु मौनता धरीने सहज समाधिमां स्थित थया, अर्थात् वाणीयोगनी अप्रवृत्ति करी. ॥ ११८ ॥

॥ शिष्यबोधबीजप्राप्तिकथन. ॥

सद्गुरुना उपदेशथी, आव्युं अपूर्व भान;
निजपद निजमांही लह्युं, दूर थयुं अज्ञान. ॥ ११९ ॥

अर्थः—शिष्यने सद्गुरुना उपदेशथी अपूर्व एटले पूर्वे कोइ दिवस नहीं आवेलुं एवुं भान आव्युं, अने तेने पोतानुं स्वरूप पोताने विषे यथातथ्य भास्युं, अने देहात्मबुद्धिरूप अज्ञान दूर थयुं. ॥ ११९ ॥

भास्युं निजस्वरूप ते, शुद्ध चेतनारूप;
अजर, अमर, अविनाशी ने, देहातीत स्वरूप. ॥ १२० ॥

अर्थः—पोतानुं स्वरूप शुद्ध चैतन्यस्वरूप अजर, अमर, अविनाशी अने देहथी स्पष्ट जूदुं भास्युं. ॥ १२० ॥

कर्त्ता, भोक्ता कर्मनो, विभाव वर्त्ते ज्यांय;
वृत्ति वही निजभावमां, थयो अकर्त्ता त्यांय. ॥ १२१ ॥

अर्थः—ज्यां विभाव एटले मिथ्यात्व वर्त्ते छे, त्यां मुख्य नयथी कर्मनुं कर्त्तापणुं अने भोक्तापणुं छे; आत्मस्वभावमां वृत्ति वही तेथी अकर्त्ता थयो. ॥ १२१ ॥

अथवा निजपरिणाम जे, शुद्ध चेतनारूप;
कर्त्ता भोक्ता तेहनो, निर्विकल्पस्वरूप. ॥ १२२ ॥

अर्थः—अथवा आत्मपरिणाम जे शुद्ध चैतन्यस्वरूप छे, तेनो निर्विकल्पस्वरूपे कर्त्ता, भोक्ता थयो. ॥ १२२ ॥

मोक्ष कह्यो निजशुद्धता, ते पामे ते पंथ;
समजाव्यो संक्षेपमां, सकळ मार्ग निर्ग्रंथ. ॥ १२३ ॥

अर्थः—आत्मानुं शुद्धपद छे ते मोक्ष छे, अने जेथी ते पमाय ते .तेनो मार्ग छे; श्री सद्गुरुए कृपा करीने निर्ग्रंथनो सर्व मार्ग समजाव्यो. ॥ १२३ ॥

अहो ! अहो ! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार,
आ पामर पर प्र॰ कर्यो, अहो ! अहो ! उपकार ॥ १ ४ ॥

अहो ! अहो ! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार,
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो ! अहो ! उपकार ॥ १२४ ॥

अर्थः—अहो ! अहो ! करुणाना अपार समुद्रस्वरूप आत्मलक्ष्मीए युक्त सद्गुरु, आप प्रभुए आ पामर जीव पर आश्चर्यकारक एवो उपकार कर्यो. ॥ १२४ ॥

शुं प्रभुचरण कने धरूं ? आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपियो, वर्तुं चरणाधीन ॥ १२५ ॥

अर्थः—हुं प्रभुना चरण आगळ शुं धरूं ? (सद्गुरु तो परम निष्काम छे; एक निष्कामकरुणाथी मात्र उपदेशना दाता छे, पण शिष्यधर्मे शिष्ये आ वचन कह्युं छे.) जे जे जगत्मां पदार्थ छे, ते सौ आत्मानी अपेक्षाए निर्मूल्य जेवा छे, तो ते आत्मा जेणे आप्यो तेना चरणसमीपे हुं बीजुं शुं धरूं ? एक प्रभुना चरणने आधीन वर्तुं, एटलुं मात्र उपचारथी करवाने हुं समर्थ छुं. ॥ १२५ ॥

आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभुआधीन;
दास, दास, हुं दास छुं, तेह प्रभुनो दीन. ॥ १२६ ॥

अर्थः—आ देह आदि, शब्दथी जे कंइ मारूं गणाय छे, ते आजथी करीने सद्गुरु प्रभुने आधीन वर्त्तो, हुं तेह प्रभुनो दास छुं, दास छुं, दीन दास छुं. ॥ १२६ ॥

षड् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यानथकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप. ॥ १२७ ॥

अर्थः—छए स्थानक समजावीने हे सद्गुरु देव ! आपे देहादिथी आत्माने, जेम म्यानथी तरवार जूदी काढीने बतावीए तेम स्पष्ट जूदो बताव्यो. आपे मपाई शके नहीं एवो उपकार कर्यो. ॥ १२७ ॥

॥ उपसंहार. ॥

दर्शन षटे शमाय छे, आ षट् स्थानक मांहि;
विचारतां विस्तारथी, संशय रहे न कांइ. ॥ १२८ ॥

अर्थः—छए दर्शन आ छ स्थानकमां समाय छे. विशेषकरीने विचारवाथी कोइ पण प्रकारनो संशय रहे नहीं. ॥ १२८ ॥

आत्मभ्रांतिसम रोग नहीं, सद्गुरु वैद्य सुजाण;
रु [illegible] थ्य नहीं, औषध विचार ध्यान. ॥ १ [illegible] ९ ॥

आत्मभ्रांतिसम रोग नहीं, सद्गुरु वैद्य सुजाण;
गुरुआज्ञासम पथ्य नहीं, औषध विचार ध्यान. ॥ १२९ ॥

अर्थः—आत्माने पोताना स्वरूपनुं भान नहीं एवो बीजो कोइ रोग नथी, सद्गुरु जेवा तेना कोइ साचा अथवा निपुण वैद्य नथी, सद्गुरुआज्ञाए चालवा समान बीजुं कांइ पथ्य नथी, अने विचार तथा निदिध्यासन जेवुं कोइ तेनुं औषध नथी. ॥ १२९ ॥

जो इच्छो परमार्थ तो, करो सत्य पुरुषार्थ;
भवस्थिति आदि नाम लइ, छेदो नहीं आत्मार्थ. ॥ १३० ॥

अर्थः—जो परमार्थने इच्छता हो, तो साचो पुरुषार्थ करो, अने भवस्थिति आदिनुं नाम लइने आत्मार्थने छेदो नहीं. ॥ १३० ॥

निश्चयवाणी सांभळी, साधन तजवां नोय,
निश्चय राखी लक्षमां, साधन करवां सोय. ॥ १३१ ॥

अर्थः—आत्मा अबंध छे, असंग छे, सिद्ध छे, एवी निश्चय मुख्य वाणी सांभळीने साधन

तजवां योग्य नथी, पण तथारूप निश्चय लक्षमां राखी साधन करीने ते निश्चयस्वरूप प्राप्त करवुं. ॥ १३१ ॥

नय निश्चय एकांतथी, आमां नथी कहेल;
एकांते व्यवहार नहीं, बन्ने साथ रहेल. ॥ १३२ ॥

अर्थः—अत्रे एकांते निश्चयनय कह्यो नथी, अथवा एकांते व्यवहारनय कह्यो नथी; बेय ज्यां ज्यां जेम घटे तेम साथे रह्यां छे. ॥ १३२ ॥

गच्छ मतनी जे कल्पना, ते नहीं सद्व्यवहार;
भान नहीं निजरूपनुं, ते निश्चय नहीं सार. ॥ १३३ ॥

अर्थः—गच्छ, मतनी कल्पना छे ते सद्व्यवहार नथी, पण आत्मार्थीना लक्षणमां कही ते दशा, अने मोक्षोपायमां जिज्ञासुनां लक्षण आदि कह्यां ते सद्व्यवहार छे; जे अत्रे तो संक्षेपमां कहेल छे. पोताना स्वरूपनुं भान नथी, अर्थात् जेम देह अनुभवमां आवे छे, तेवो आत्मानो अनुभव थयो नथी, देहाध्यास वर्त्ते छे, अने जे वैराग्यादि साधन पाम्याविना निश्चय पोकार्या करे छे, ते निश्चय सारभूत नथी. ॥ १३३ ॥

आगळ ज्ञानी थइ गया, वर्त्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मा

आगळ ज्ञानी थइ गया, वर्त्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मार्गभेद नहीं कोय. ॥ १३४ ॥

अर्थः–भूतकाळमां जे ज्ञानीपुरुषो थइ गया छे, वर्त्तमानकाळमां जे छे, अने भविष्यकाळमां थशे, तेने कोइने मार्गनो भेद नथी, अर्थात् परमार्थे ते सौनो एक ज मार्ग छे, अने तेने प्राप्त करवायोग्य व्यवहार पण ते ज परमार्थसाधकरूपे देश काळादिने भेदे कह्यो होय छतां एक फळ उत्पन्न करनार होवाथी तेमां पण परमार्थे भेद नथी. ॥ १३४ ॥

सर्व जीव छे सिद्धसम, जे समजे ते थाय;
सद्गुरुआज्ञा जिनदशा, निमित्त कारण मांय. ॥ १३५ ॥

अर्थः–सर्व जीवने विषे सिद्ध समान सत्ता छे, पण ते तो जे समजे तेने प्रगट थाय. ते प्रगट थवामां सद्गुरुनी आज्ञाथी प्रवर्त्तवुं, तथा सद्गुरुए उपदेशेली एवी जिनदशानो विचार करवो, ते बेय निमित्तकारण छे. ॥ १३५ ॥

उपादाननुं नाम लई, ए जे तजे निमित्त;
पामे नहीं सिद्धत्वने, रहे भ्रांतिमां स्थित. ॥ १३६ ॥

अर्थः—सद्गुरुआज्ञा आदि ते आत्मसाधननां निमित्तकारण छे, अने आत्मानां ज्ञान-दर्शनादि उपादानकारण छे; एम शास्त्रमां कह्युं छे, तेथी उपादाननुं नाम लई जे कोइ ते निमित्तने तजशे ते सिद्धपणाने नहीं पामे, अने भ्रांतिमां वर्त्या करशे; केमके साचा निमित्तना निषेधार्थे ते उपादाननी व्याख्या शास्त्रमां कही नथी, पण उपादान अजाग्रत राखवाथी तारूं साचा निमित्त मळ्या छतां काम नहीं थाय, माटे साचां निमित्त मळ्ये ते निमित्तने अवलंबीने उपादान सन्मुख करवुं, अने पुरुषार्थरहित न थवुं; एवो शास्त्रकारे कहेली ते व्याख्यानो परमार्थ छे. ॥ १३६ ॥

मुखथी ज्ञान कथे अने, अंतर् छूट्यो न मोह;
ते पामर प्राणी करे, मात्र ज्ञानीनो द्रोह. ॥ १३७ ॥

अर्थ.—मुखथी निश्चयमुख्य वचनो कहे छे, पण अंतर्थी पोताने ज मोह छूट्यो नथी, एवा पामर प्राणीमात्र ज्ञानी कहेवरावबानी कामनाए साचा ज्ञानी पुरुषनो द्रोह करे छे. ॥ १३७ ॥

दया, शांति, समता, क्षमा; सत्य, त्याग, वैराग्य;
होय मुमुक्षुघटविषे, एह सदाय सुजाग्य. ॥ १३८ ॥

अर्थः—दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, अने वैराग्य ए गुणो मुमुक्षुना घटमां सदाय सुजाग्य एटले जाग्रत होय; अर्थात् ए गुणोविना तो मुमुक्षुपणुं पण न होय. ॥१३८॥

अर्थः—दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, अने वैराग्य ए गुणो मुमुक्षुना घटमां सदाय सुजाग्य एटले जाग्रत होय; अर्थात् ए गुणोविना तो मुमुक्षुपणुं पण न होय. ॥१३८॥

मोहभाव क्षय होय ज्यां, अथवा होय प्रशांत;
ते कहिये ज्ञानीदशा, बाकी कहिये भ्रांत. ॥ १३९ ॥

अर्थः—मोहभावनो ज्यां क्षय थयो होय, अथवा ज्यां मोहदशा बहु क्षीण थइ होय त्यां ज्ञानीनी दशा कहीए, अने बाकी तो जेणे पोतामां ज्ञान मानी लीधुं छे, तेने भ्रांति कहीये. ॥ १३९ ॥

सकळ जगत् ते एठवत्, अथवा स्वप्नसमान;
ते कहिये ज्ञानीदशा, बाकी वाचाज्ञान. ॥ १४० ॥

अर्थः—समस्त जगत् जेणे एठजेवुं जाण्युं छे, अथवा स्वप्नजेवुं जगत् जेने ज्ञानमां वर्त्ते छे, ते ज्ञानीनी दशा छे, बाकी मात्र वाचाज्ञान एटले कहेवामात्र ज्ञान छे. ॥ १४० ॥

स्थानक पांच विचारीने, छठ्ठे वर्त्ते जेह;
पामे स्थानक पांचमुं, एमां नहीं संदेह. ॥ १४१ ॥

अर्थः—पांचे स्थानकने विचारीने जे छठ्ठे स्थानके वर्त्ते, एटले ते मोक्षना जे उपाय कह्या छे तेमां प्रवर्त्ते ते पांचमुं स्थानक एटले मोक्षपद तेने पामे. ॥ १४१ ॥

देह छतां जेनी दशा, वर्त्ते देहातीत;
ते ज्ञानीनां चरणमां, हो वंदन अगणित. ॥ १४२ ॥

अर्थः—पूर्वप्रारब्धयोगथी जेने देह वर्त्ते छे, पण ते देहथी अतीत एटले देहादिनी कल्पनारहित आत्मामय जेनी दशा वर्त्ते छे, ते ज्ञानीपुरुषनां चरणकमळमां अगणितवार वंदन हो ! ॥ १४२ ॥

॥ श्रीसद्गुरुचरणार्पणमस्तु. ॥

सं० १९५२ ना आश्विन वद १, गुरुवारे, नडियाद.

आ ग्रंथ "सनातन जैन" मासिक पत्रना मालेक मनसुखलाल रवजी भाई मेहताए 'निर्णयसागर' मुद्रालयमां छपावी प्रकट कर्यो.

१९६४.

आ पुस्तक मळवानुं ठेकाणुंः—"सनातन जैन" पत्र नी ऑफीस, झवेरी बजार—मुंबई.

॥ इति श्रीआत्मसिद्धिशास्त्रं समाप्तम् ॥